गांधीजीकी अपेक्षा

गांधीजीकी अपेक्षा

[राष्ट्रपिता द्वारा लोक प्रतिनिधियोंसे रखी गई अपेक्षायें]

मो० क० गांधी

संपादक

हरिप्रसाद व्यास



नवजीवन प्रकाशन मंदिर

अहमदाबाद-१४

गांधीजीकी अपेक्षा

[राष्ट्रपिता द्वारा लोक प्रतिनिधियोंसे रखी गई अपेक्षायें]

मो० क० गांधी

संपादक
हरिप्रसाद व्यास



नवजीवन प्रकाशन मंदिर
अहमदाबाद-१४

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाई देसाई
नवजीवन मुद्रणालय अहमदाबाद-१४

पहला संस्करण २०००

रु० ३.०० जनवरी १९६६

प्रकाशकका निवेदन

गांधीजीकी कार्य-पद्धतिका निरीक्षण करने पर उसका एक मुख्य लक्षण सहज ही ध्यानमें आता है। सार्वजनिक हितके प्रश्नोंका विचार करते समय उनके निर्णय किसी विशेष विचारसरणीके आधार पर अथवा किसी निश्चित सिद्धान्तसे फलित नहीं होते थे। उनका ध्यान केवल इसी बात पर केन्द्रित रहता था कि सत्य और अहिंसाके मूलभूत सिद्धान्तोंको देशके शासनसे सम्बन्धित कामकाजमें व्यवहारका रूप कैसे दिया जाय। कांग्रेसको और कांग्रेसके द्वारा भारतीय राष्ट्रको उन्होंने जो मार्गदर्शन किया उसे समझनेके लिए यह बात खास तौर पर ध्यानमें रखने जैसी है।

गांधीजीने स्वराज्यकी स्थापनाके लिए कांग्रेसजनोंको अपनी कार्य-पद्धतिकी तालीम दी थी। इतना ही नहीं, स्वराज्यकी स्थापना होनेके बाद स्वराज्यमें राज्य-प्रबन्ध कैसे किया जाय इस विषयमें कांग्रेसजनोंकी दृष्टि और समझका भी उन्होंने विकास किया था।

१९३७ में भारतकी जनताको प्रान्तीय स्वराज्यके मर्यादित अधिकार प्राप्त हुए उस समयसे आरंभ करके १९४७ में शासनकी संपूर्ण सत्ता और अधिकार भारतके लोगोंको मिले तब तक और उसके बाद भी गांधीजीने अपना यह कार्य जीवनके अंतिम दिन तक चालू रखा था।

स्वतंत्र भारतीय राष्ट्रकी राज्य-व्यवस्थाके बारेमें गांधीजीका मूल आग्रह यह था कि जिन सेवकों पर देशके शासनकी जिम्मेदारी है उन्हें दो बातोंका सदा पूरा ध्यान रखना चाहिये: (१) उन्हें एक गरीब राष्ट्रकी राज्य-व्यवस्था चलानी है, और (२) उसे चलाते हुए उन्हें भारतके पिछड़े हुए और गरीब जन-समुदायके हितका सबसे पहले

ख्याल रखा है। गांधीजी १९१५ में स्थायी रूपसे भारतमें रहनेके लिए दक्षिण अफ्रीकासे लौटे तभीसे उन्होंने यह समझाना शुरू कर दिया था कि यह काम कैसे किया जाय। इसलिए सन् १९३७ में और फिर १९४७ के बाद गांधीजीने भारतका राजकाज चलानेवाले जन सेवकोंको यह बताया था कि उनकी जिम्मेदारी कैसी और कितनी है।

इस पुस्तकमें गांधीजीके इस विषयसे सम्बन्धित भाषणों और लेखोंका संग्रह किया गया है। इन लेखों और भाषणोंमें उन्होंने स्पष्ट रूपसे यह दिखाया है कि कांग्रेसजनोंने भारतका शासन-तंत्र हाथमें लेकर कैसी जिम्मेदारी अपने सिर उठाई है और इस जिम्मेदारीको वे किस प्रकार भलीभांति अदा कर सकते हैं।

गांधीजीकी रीति आदेश देनेकी नहीं थी। और न उन्होंने कभी यह माना कि कांग्रेसजनोंको आदेश देनेकी कोई सत्ता उनके पास है। वे कांग्रेसियोंके भीतरकी सद्भावना और अच्छाईसे अपील करते थे और यह विश्वास रखते थे कि उनकी अपील व्यर्थ नहीं जायगी।

जनसेवकोंको भारतकी शासन-व्यवस्था द्वारा भारतीय जनताकी कितनी और कैसी सेवा करनी है, इस सम्बन्धमें गांधीजीकी आशाओं और अपेक्षाओंका दर्शन हमें इस संग्रहमें होता है। ऐसा लगता है कि आज मूलभूत बातोंको कुछ हद तक भुलाया जा रहा है और राजनीतिज्ञ तथा सार्वजनिक कार्यकर्ता कुछ भिन्न प्रयोजनसे काम करते दिखाई देते हैं। ऐसे समय यह संग्रह हमें जाग्रत करनेमें बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

आशा है भारतकी शासन-व्यवस्थाकी जिम्मेदारी अपने कंधों पर लेनेवाले सेवकोंसे राष्ट्रपिताने जो अपेक्षायें रखी हैं तथा इस गरीब देशकी जनताके प्रति उनका जो कर्तव्य है, उसका स्पष्ट दर्शन उन्हें इस संग्रहमें होगा।

२६-१-’६६

अनुक्रमणिका

विभाग – ६ मतदान, मताधिकार और कानून

विभाग – ७ पद-ग्रहण और मंत्रियोंका कर्तव्य

विभाग – ८ मंत्रियोंके वेतन

विभाग – ११ मन्त्रि-मण्डल और अहिंसा

विभाग – १२ विविध

● धारासभाके सदस्योंको उनका किराया और भत्ता चाहिए, मंत्रियोंको उनके वेतन चाहिए, वकीलोंको उनका मेहनताना और मुकदमेबाजोंको उनकी डिग्रियां चाहिए, मां-बापको अपने लड़केके लिए ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे वे मौजूदा जीवनमें नामी-गिरामी आदमी बन जायें; व्यापारियों और कारखानेदारोंको सब तरहकी सुविधायें चाहिए जिससे वे अपने माल-वगैराका अच्छा-खरचा तक पहुंचा सकें और बाकीके लोगोंको मिलकर शान्ति चाहिए। ये सब बड़े सुन्दर काम उस मध्यवर्ती सम्भारके आसपास घूमते हैं। सब कोई तालमें मस्त हैं। कोई उससे अपनेको मुक्त करनेकी चिन्ता नहीं करता। और इसलिए ज्यों ज्यों उसका वेग बढ़ता जाता है त्यों त्यों वे अधिक हर्षोन्मत्त बनते जाते हैं। परन्तु वे नहीं जानते कि यह कृतान्तका ताण्डव है और उन्हें जो हर्षोन्माद अनुभव होता है वह उस रोगीके हृदयकी तेज धड़कन जैसा है जो अपने जीवनकी अन्तिम सांसें खींच रहा है।

हिन्दी नवजीवन १२-३-२२ पृ० २३७

*

● जब कभी आपके हृदयमें सन्देह उत्पन्न हों या आप अपने बारेमें अत्यधिक विचार करें तब आप अपने सामने यह कसौटी रखें। अपनी आंखोंसे देखे हुए सबसे गरीब और सबसे दुर्बल मनुष्यका चेहरा आप याद करें और अपने मनसे यह प्रश्न पूछें कि जो कदम उठानेका विचार आप कर रहे हैं, वह उस गरीब और दुर्बलके लिए उपयोगी सिद्ध होगा या नहीं? उसे उस कदमसे कोई लाभ होगा? उस कदमसे क्या वह अपने जीवन पर और अपने भविष्य पर फिरसे अधिकार पा सकेगा? दूसरे शब्दोंमें वह तो क्या आपका वह कदम भूखे और आध्यात्मिक दारिद्र्य भोगनेवाले लोगोंको स्वराज्यकी दिशामें ले जायगा? उसके बाद आप देखेंगे कि आपके सन्देह और आपका व्यक्तित्व सर्वथा लुप्त हो गये हैं।

महात्मा गांधी दि लास्ट फेज खण्ड-२ (१९५८) पृ० ६५

गांधीजीकी अपेक्षा

पाठकोंसे

मेरे लेखोंका मेहनतसे अध्ययन करनेवालों और उनमें दिलचस्पी लेनेवालोंसे मैं यह कहना चाहता हूँ कि मुझे हमेशा एक ही रूपमें दिखाई देनेकी कोई परवाह नहीं है। सत्यकी अपनी खोजमें मैंने बहुतसे विचारोंको छोड़ा है और अनेक नई बातें मैं सीखा भी हूँ। उमरमें भले ही मैं बूढ़ा हो गया हूँ, लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगता कि मेरा आन्तरिक विकास होना बन्द हो गया है या देह छूटनेके बाद मेरा विकास बन्द हो जायगा। मुझे एक ही बातकी चिन्ता है और वह है प्रतिक्षण सत्यनारायणकी वाणीका अनुसरण करनेकी मेरी तत्परता। इसलिए जब किसी पाठकको मेरे दो लेखोंमें विरोध जैसा लगे, तब अगर उसे मेरी समझदारीमें विश्वास हो तो वह एक ही विषय पर लिखे हुए दो लेखोंमें से मेरे बादके लेखको प्रमाणभूत माने।

हरिजनबन्धु ३०-४-३३ — गांधीजी

१

अधिकार-पत्र

स्वतंत्र भारतका संविधान

मैं ऐसे संविधानकी रचनाके लिए प्रयत्न करूंगा, जो भारतको हर तरहकी गुलामीसे और किसीका आश्रित होनेकी भावनासे मुक्त कर देगा और यदि जरूरत पड़े तो उसे पाप करनेका भी अधिकार देगा। मैं ऐसे भारतके लिए कार्य करूंगा, जिसमें गरीबसे गरीब आदमियोंको भी ऐसा लगे कि भारत उनका अपना देश है — जिसके निर्माणमें उनका भी महत्त्वपूर्ण हाथ है। मैं ऐसे भारतके लिए कार्य करूंगा जिसमें बसनेवाले लोगोंका ऊंचा वर्ग और नीचा वर्ग नहीं होगा; वह ऐसा भारत होगा जिसमें सारी कौमें पूरी तरह मेलमिलाप और मित्रताके साथ रहेंगी। ऐसे भारतमें अस्पृश्यताके अभिशापके लिए अथवा नशीले पेयों और मादक पदार्थोंके अभिशापके लिए कोई गुंजाइश नहीं होगी। उसमें स्त्रियां पुरुषोंके साथ समान अधिकारोंका उपभोग करेंगी। चूंकि हम बाकीकी दुनियाके साथ शांतिसे रहेंगे और न हम दूसरोंका शोषण करेंगे और न अपना शोषण होने देंगे, इसलिए हमारी ऐसी छोटीसे छोटी सेना होगी जिसकी कि कल्पना की जा सकती है। उस भारतमें ऐसे समस्त देशी या विदेशी हितोंका आदर किया जायगा, जिनका देशके करोड़ों मूक नागरिकोंके हितोंके साथ कोई संघर्ष और विरोध नहीं होगा। मैं व्यक्तिगत रूपमें देशी और विदेशीके भेदसे नफरत करता हूं। यह मेरे सपनोंका भारत है। इससे कम किसी चीजसे मुझे संतोष नहीं होगा। १

स्वराज्य सरकारमें

स्वराज्यकी ऐसी शासन-व्यवस्थामें जुआ, शराबखोरी और दुराचार या वर्ग-विद्वेषके लिए कोई स्थान नहीं होगा। धनी लोग अपने धनका उपयोग बुद्धिपूर्वक उपयोगी कार्योंमें करेंगे, अपनी शान-शौकत बढ़ानेमें या शारीरिक सुखोंकी वृद्धिमें उसका अपव्यय नहीं करेंगे। उसमें ऐसा नहीं हो सकता, नहीं होना चाहिये कि कुछ धनी तो रत्न-जटित महलोंमें रहें और लाखों-करोड़ों ऐसी मनहूस झोपड़ियोंमें रहें जिनमें हवा और प्रकाशका प्रवेश तक न हो। अहिंसक स्वराज्यमें न्यायपूर्ण अधिकारोंका किसीके भी द्वारा कभी अतिक्रमण नहीं हो सकता, और इसी तरह किसीको कोई अन्यायपूर्ण अधिकार भी नहीं हो सकते। सुसंगठित राज्यमें किसीके न्याय्य अधिकारोंका किसी दूसरेके द्वारा अन्यायपूर्वक छीना जाना असंभव होना चाहिये; और कभी ऐसा हो जाय तो अपहर्ताओंको अपदस्थ करनेके लिए हिंसाका आश्रय लेनेकी जरूरत नहीं होनी चाहिये। २

सच्चे लोकतंत्रके विकासके साधन

भारत सच्चे लोकतंत्रके विकासका प्रयत्न कर रहा है, जिसमें हिंसाके लिए कोई स्थान नहीं होगा। इस प्रयत्नमें हमारे शस्त्र वही होंगे, जो सत्याग्रहके हैं — अर्थात् चरखा, ग्रामोद्योग, हाथ-उद्योगों द्वारा दी जानेवाली प्राथमिक शिक्षा, अस्पृश्यता-निवारण, कौमी एकता, शराबबंदी और अहमदाबादकी तरह मजदूरोंका अहिंसक संगठन। इनका अर्थ है सामुदायिक प्रयत्न और सामुदायिक शिक्षण। इन कार्योंके संचालनके लिए हमारे पास बड़ी बड़ी संस्थायें हैं। ये सब शुद्ध ऐच्छिक हैं और इनका एकमात्र संरक्षण है भारतके छोटेसे छोटे आदमियोंकी सेवा। ३

२

संसदीय शासन-व्यवस्था

स्वराज्यसे मेरा अभिप्राय है लोक-सम्मतिके अनुसार होनेवाला भारतवर्षका शासन। लोक-सम्मतिका निश्चय देशके बालिग लोगोंकी बड़ीसे बड़ी संख्याके मतके द्वारा होगा, फिर वे स्त्रियां हों या पुरुष, इसी देशके हों या इस देशमें आकर बस गये हों। वे लोग ऐसे होने चाहिये जिन्होंने अपने शारीरिक श्रमके द्वारा राज्यकी कुछ सेवा की हो और जिन्होंने मतदाताओंकी सूचीमें अपना नाम लिखवा लिया हो। १

फिलहाल मेरे स्वराज्यका अर्थ होगा भारतकी आधुनिक व्याख्या वाली संसदीय शासन-व्यवस्था। २

आजकी मेरी सामूहिक प्रवृत्तिका ध्येय तो हिन्दुस्तानकी प्रजाकी इच्छाके अनुसार चलनेवाली पार्लियामेण्टरी पद्धतिका स्वराज्य पाना है। ३

संसदीय शासन-व्यवस्थाके अभावमें हम कहींके न रहेंगे।

तब हमारी संसद क्या करेगी? जब हमारी संसद हो जायगी तब हमें महान भूलें करने और उन्हें सुधारनेका अधिकार होगा। प्रारंभिक अवस्थाओंमें कई बड़ी भूलें हमसे होंगी ही। ब्रिटेनकी लोकसभाका इतिहास बड़ी बड़ी भूलोंका इतिहास है। एक अरबी कहावत कहती है कि मनुष्य भूलोंका अवतार है। स्वराज्यकी एक परिभाषा है भूलें करनेकी स्वतंत्रता और की हुई भूलोंको सुधारनेका कर्तव्य। और ऐसा स्वराज्य पार्लियामेण्ट — संसद — में ही निहित है। उसी पार्लियामेण्टकी आज हमें जरूरत है। आज हम उसके योग्य हैं। ४

३

विधानसभाओंमें जाना

मैं आपसे कहूं कि धारासभाओं (विधानसभाओं) का बहिष्कार सत्य और अहिंसाकी तरह कोई शाश्वत अथवा सनातन सिद्धान्त नहीं है। उनके प्रति मेरा जो विरोध भाव था वह अब बहुत कम हो गया है। लेकिन इसके ये मानी नहीं हैं कि मैं पहलेकी सहयोगकी स्थितिकी ओर लौट रहा हूं। यह तो शुद्ध युद्धकलाका प्रश्न है अमुक समय पर सबसे जरूरी क्या है केवल इतना ही मैं कह सकता हूं। क्या मैं वही असहयोगी हूं जो कि १९२० में था? हां मैं वही असहयोगी हूं। परन्तु आप लोग यह भूल जाते हैं कि मैं इस अर्थमें सहयोगी भी था कि असहयोग मैंने सहयोगके खातिर किया था और तब भी मैंने कहा था कि यदि मैं देशको सहयोगके जरिये आगे ले जा सकूं तो मुझे सहयोग करना चाहिये। धारासभाओंमें जानेकी मैंने अब जो सलाह दी है वह सहयोग देनेके लिए नहीं बल्कि सहयोग लेनेके लिए दी है।

यदि धारासभाओंके चुनावकी लड़ाईका अर्थ सत्य और अहिंसाकी कुरबानी हो तो प्रजातंत्रको कोई एक क्षणके लिए भी नहीं चाहेगा। जनताकी वाणी परमेश्वरकी वाणी है और यह उन ३० करोड़ मनुष्योंकी वाणी है जिनका कि हमें प्रतिनिधित्व करना है। क्या सत्य और अहिंसाके द्वारा ऐसा करना संभव नहीं? जो लोग जनताके प्रतिनिधि नहीं हैं जो जनताके सेवक नहीं हैं उनकी आवाज जरूर हो सकती है परन्तु उन लोगोंकी नहीं जो ३० करोड़ मनुष्योंके सेवक होनेका दावा करते हैं।

हमारे देशके लोगोंकी बहुत बड़ी संख्याको वोट (मत) देनेका अधिकार प्राप्त हो गया है—उनमें से करीब एक तिहाई लोग वोट दे सकते हैं। इन चुनावोंने हमें उनके पास कांग्रेसका सारा कार्यक्रम ले जानेका मौका दिया है। यदि यह बात थी तो गांधी-सेवा-संघके सदस्य क्या अलग थलग रहते? इसमें शक नहीं कि हम रचनात्मक कार्यक्रमकी प्रतिज्ञासे बंधे हुए हैं। परन्तु क्या यह देखना हमारा कर्तव्य नहीं कि हमारे नाम पर जो लोग धारासभाओंमें जाते हैं वे रचनात्मक कार्यक्रमको वहां पूरा करते हैं या नहीं? याद रखिये कि बगैर रचनात्मक कार्यक्रमके कोई भी राजनीतिक कार्यक्रम टिक नहीं सकता। यह सारा कार्यक्रम सत्य और अहिंसाका प्रतीक है और यह गांधी-सेवा-संघका सबसे पहला काम है कि उस कार्यक्रमको किसी तरहकी क्षति तो नहीं पहुंच रही है।

यह बात ध्यानमें रखिये कि मेरा मतलब यह नहीं है कि आप अपने सदस्योंको धारासभाओंमें एक अपरिहार्य विपत्ति (बुराई) समझ कर भेजें। वह तो आपका एक कर्तव्य होना चाहिये। आज जो धारासभायें हैं वे हमारी हैं, उनमें हमारी जनताके प्रतिनिधि हैं। हमें वहां अपने सत्य और अहिंसाके सिद्धांतोंका पालन करना है। मैं कांग्रेससे जो हट गया हूं उसके पीछे कुछ खास कारण हैं। यह मैंने इसलिए किया है कि कांग्रेसकी मैं और भी अधिक सेवा कर सकूं। जब तक सत्य और अहिंसा पर आधार रखनेवाले १९२० के कार्यक्रमकी प्रतिज्ञा पर कांग्रेस कायम है तब तक मेरा सारा समय और सारी शक्ति उसकी सेवाके लिए अर्पित है।

लेकिन यह प्रश्न पूछा जाता है कि जिन धारासभाओंकी हमने मुखालिफत की उनमें हम कैसे जायें? तबकी धारासभाओंसे आजकी धारासभायें भिन्न हैं। हम उन्हें नष्ट नहीं करना चाहते। नष्ट तो हम उस सिस्टम—पद्धति या प्रणाली—को करना चाहते हैं जिसे चलानेके लिए ये धारासभायें बनाई गई हैं।

हम वहां सत्य और अहिंसाका कुरबान करनेके लिए नहीं बल्कि उन्हें वहां स्थापित करनेके लिए जाते हैं। आज कांग्रेसको चुनावों पर कुछ लाख रुपये खर्च करने पड़ते हैं। लेकिन देशमें अब हम ऐसी ताकत पैदा कर दें जिसका कोई मुकाबला न कर सके तब हमें एक पाई भी खर्च नहीं करनी पड़ेगी। लेकिन सच बात तो यह है कि हम अक्सर रचनात्मक कार्यक्रमकी बातें ही किया करते हैं। अब तक असलमें हमने कितना हासिल किया है? तालीमी संघके आज कितने विद्यार्थी हमारे पास हैं? यदि सम्पूर्ण रचनात्मक कार्यक्रम हमने पूरा कर लिया होता तो आज किसी भी प्रान्तकी धारासभामें सिवा कांग्रेस पार्टीके कोई दूसरी पार्टी न होती।

लेकिन मैंने जो यह सब कहा है उसका यह मतलब नहीं कि आप सबके सब आज धारासभाओंमें जानेकी बात सोचने लगें। सबकी तो बात ही नहीं गांधी-सेवा-संघका एक भी आदमी धारासभामें जानेका प्रयत्न न करे। मेरे कहनेका मतलब तो यह है कि अगर मौका आ जाय तो कोई उससे पहलू न बचाये। धारासभामें जानेके लिए कानूनी बारीकियोंका ज्ञान जरूरी नहीं। साहस और रचनात्मक कार्यक्रममें अचल श्रद्धा बस इतना ही वहां जानेके लिए जरूरी है। आपमें से जो लोग धारासभाओंमें जायं, उनसे मुझे यही उम्मीद रखनी चाहिए कि आप वहां अपनी तकली चलाना जारी रखेंगे और मद्य निषेध तथा रचनात्मक कार्यक्रमके लिए आप वहां काम करेंगे। लेकिन वहां सत्ताके लिए छीना झपटी नहीं होनी चाहिए। उसका मतलब तो हमारी बरबादी होगी। केवल वही लोग धारासभाओंमें जायेंगे जिन्हें कि गांधी-सेवा-संघ जानेके लिए कहेगा। मैं इससे इनकार नहीं करता कि धारासभायें एक भारी प्रलोभन हैं वे करीब करीब शराबकी दुकानें ही हैं। स्वार्थ साधनेवालों और नौकरियोंके पीछे पड़े रहनेवालोंको वे मौका देती हैं। किन्तु कोई कांग्रेसी या कोई गांधी-सेवा-संघका सदस्य इस गंदे उद्देश्यको लेकर धारासभाओंमें नहीं जा सकता। कांग्रेसको नया कांग्रेसी कार्यक्रम पर ध्यान

इनके लिए उन्हें बाध्य करता रहेगा और नाजायज तरीकोंसे उसमें किसीको जरा भी हाथ नहीं डालने देगा। इस तरहकी प्रतिज्ञा लेकर लोग वहां कर्तव्य-बुद्धिसे जायेंगे न कि उसे एक अपरिहार्य विपत्ति समझकर। अगर हमसे हो सका तो ग्यारहों धारासभाओंको हमें ऐसे आदमियोंसे भर देना है जो फौलादके जैसे सच्चे हों, लोकसेवा जिनका व्रत हो और जिनका अपना कोई स्वार्थ न हो। १

४

धारासभाएं और रचनात्मक कार्यक्रम

धा विरोधियोंकी शंका और भय यह है कि धारासभा (विधान सभा) का कार्यक्रम हमारी प्रलोभनोंको उभाड़ता है और मनुष्य इनमें अपनेको भूल जाता है अतः उसका सत्य और अहिंसाको भूल जाना स्वाभाविक है। मैं मानता हूं कि धारासभाका कार्यक्रम मनुष्यकी लालसाओंको उभाड़ सकता है और उसे बड़े बड़े प्रलोभनोंमें डाल सकता है। पर क्या ऐसी वजहसे हमें उससे अपना पहलू बचाना चाहिये? हम उनके प्रलोभनोंका प्रतिरोध क्यों न करें?

हमारा कार्यक्रम केवल एक ही है—और वह है रचनात्मक कार्यक्रम क्योंकि स्वराज्य इसी पर निर्भर करता है। किन्तु धारासभाओंमें जानेमें सत्य और अहिंसाको हम जरा भी कुरबान नहीं करेंगे। वहां जाकर भी हम रचनात्मक कार्यको मदद पहुंचाना चाहते हैं। मैं आपसे कहता हूं कि यदि हम सबने चरखेको बुद्धिपूर्वक चलाया होता तो हमें स्वराज्य हासिल हो गया होता और हमें धारासभाओंमें नहीं जाना पड़ता। अभी तक हम चरखेके साथ यों ही खेलते रहे। हमने उसे बुद्धिपूर्वक चलाया नहीं है। अब अगर हम उसे बुद्धिपूर्वक चलाना चाहते हैं तो हमें तीन करोड़ मतदाताओंके प्रतिनिधियोंके घनिष्ठ संपर्कमें आना ही चाहिये। इसका यह अर्थ नहीं कि अगर यह बात

है तो हम सभाको धारासभाओंमें जाना चाहिये या हममें से जो जाना चाहें उन सबको जानेकी इजाजत मिल जानी चाहिये। हम एक एकके बारेमें अच्छी तरह जाँच करेंगे। इसका यह अर्थ हुआ कि हम सबका दरवाजा धारासभाके सभी सदस्योंके लिए नहीं खोल रहे हैं। हम तो सिर्फ उन्हींके लिए खोल रहे हैं जो रचनात्मक कार्यक्रमको प्रतिज्ञा लिये हुए हैं और जिनके बगैर कांग्रेसको धारासभाका एक जगह खो देनेका अंदेशा हो। हम चाहते हैं कि अगर हो सके तो धारासभाओंमें सब ऐसे ही आदमी भेजे जायँ जो चरखेमें विश्वास रखते हों।

धारासभाके कार्यक्रमको दाखिल करके हम अहिंसाकी दिशामें एक कदम आगे बढ़ रहे हैं। सत्य और अहिंसा मठवासी संन्यासियोंके ही धर्म नहीं हैं धारासभाओं अदालतों और अन्य व्यवहारोंमें भी ये सनातन सिद्धांत लागू हो सकते हैं। आपकी श्रद्धाकी बहुत सख्त परीक्षा होनेवाली है परंतु इस सख्त परीक्षाके डरसे हम आप उससे अपनेको न बचायें।

सारा ही रचनात्मक कार्यक्रम—हाथ-कताई और हाथ-बुनाई हिंदू मुस्लिम एकता अस्पृश्यता निवारण और मद्य निषेध—सत्य और अहिंसाकी शोधके लिए है। धारासभाओंमें जानेका अगर हमारे लिए कोई दिलचस्पी हो सकती है तो वह सिर्फ इसीलिए हो सकती है किसी और कारणसे नहीं। सत्य और अहिंसा साधन भी हैं और साध्य भी हैं और यदि अच्छे और सच्चे आदमी धारासभाओंमें भेजे जायँ तो वे सत्य और अहिंसाकी ठोस शोधका साधन बन सकती हैं। अगर वे ऐसी नहीं हो सकती तो यह उनका नहीं बल्कि हमारा दोष होगा। जनता पर हमारा सच्चा काबू हो तो धारासभाएं सत्य और अहिंसाकी शोधका साधन अवश्य बनेंगी दूसरा कुछ हो ही नहीं सकता। १

५

धारासभाओंका मोह

मैं मानता हूँ कि धारासभाओंमें या अन्य निर्वाचित संस्थाओंमें किसी न किसी कांग्रेसीको तो जाना ही चाहिये। पहले मैं इस मतका नहीं था कि जहाँ चुनाव हो वहाँ कांग्रेसियोंको उम्मीदवारी करना ही चाहिये, लेकिन अब मैं इस मतका हूँ। मेरी यह आशा सफल नहीं हुई कि सब कांग्रेसी धारासभाका बहिष्कार करेंगे। अब जमाना भी बदला है और स्वराज्य नजदीक आया है। यदि ऐसा है तो जहाँ चुनाव होता हो वहाँ कांग्रेसी उम्मीदवार होने ही चाहिये। इसमें सम्मान कभी हेतु हो ही नहीं सकता, सेवा ही हेतु हो सकती है। कांग्रेस जैसी संस्थाकी यह प्रतिष्ठा होनी चाहिये और है कि जिसे वह पसन्द करे वही चुनावके लिए खड़ा हो। जिस आदमीको वह पसन्द न करे उसे दुःख तो होना ही नहीं चाहिये, बल्कि उसे दूसरी सेवाके लिए मुक्ति मिलनेकी खुशी होनी चाहिये। वास्तवमें ऐसी स्थिति नहीं है यह दुःखकी बात है।

दूसरे, चुनाव लड़नेमें कांग्रेसको पैसा खर्च करनेकी जरूरत ही नहीं होनी चाहिये। लोकप्रिय संस्थाके उम्मीदवार तो घर बैठे चुने जाने चाहियें। गरीब मतदाताओंके लिए सवारीका इंतजाम घर बैठे होना चाहिये। उदाहरणके लिए पटना गाँवके मतदाताओंको नडियाद जाना पड़े तो गरीबोंका किराया पेटलादके साहूकार लोग दें। लोकसत्तात्मक अहिंसक संस्थाकी यह एक निशानी है। पैसे पर नजर रखनेवाली संस्था गरीबोंकी सेवा कभी नहीं कर सकती। अगर लोगोंकी सरकार पैसेसे जीती जा सकती हो तो अंग्रेजी सल्तनत जो अपार पैसा खर्च कर सकती है और करती है सबसे प्रिय मानी जायगी। लेकिन हकीकत यह है कि मोटे नौकर भी जो बड़ी बड़ी तनखाहें लेते हैं

इसी तरह विभिन्न सम्प्रदायों या कौमोंके पारस्परिक व्यवहारोंका नियमन कानूनों अथवा सरकारोंसे किये हुए समझौतों या राज्यके जबरन् लादे हुए समझौतों द्वारा करना एक बात है और आम लोग एक-दूसरेके धर्मों और उनके व्यवहारोंके प्रति आदर भाव रखने लगें यह बिलकुल दूसरी बात है। धारासभाओंके सदस्य और कांग्रेसके कार्यकर्ता गांवोंके लोगोंमें पहुंचकर जब तक उन्हें परस्पर सहिष्णुता रखना नहीं सिखायेंगे तब तक यह चीज सम्भव नहीं है।

फिर कानूनके बल पर शराब बन्द कराना — और यह तो करना ही होगा — एक चीज है और मद्यनिषेधका स्वेच्छासे पालन करवा कर उसे टिकाये रखना बिलकुल दूसरी चीज है। निराश और बूढ़े लोग ही यह कहते हैं कि सर्वांगी और भारी जासूसी पद्धतिके बिना मद्यनिषेधका काम चल नहीं सकता। अगर कार्यकर्ता ग्रामजनोंके पास जायें और जहां जहां लोग शराब पीते हैं वहां उसके बुरे परिणाम लोगोंको अच्छी तरह समझायें तथा नाश करनेवाले जितने लोग वहां लेनेके कारण आज निकालें और लोगोंको वहां पान करायें तो मद्यनिषेधका काम बिना किसी खर्चके चल सकता है। इतना ही नहीं उससे मुनाफा भी हो सकता है। यह काम स्त्रियां विशेष रूपसे कर सकती हैं।

यही बात अस्पृश्यताको भी लागू होती है। अस्पृश्यताके दुष्परिणामोंको कानून द्वारा हम भले नष्ट कर दें, और यह करना ही है परन्तु जब तक लोग अपने दिलसे छुआछूतकी भावनाको नहीं निकालेंगे तब तक हमें सच्ची स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती। जब तक आम जनताके हृदयसे अस्पृश्यताकी भावना दूर नहीं होगी तब तक वह एकताकी भावनासे और एक हृदयसे कदापि काम नहीं कर सकता।

इस प्रकार अस्पृश्यता निवारणका कार्य तथा इस रचनात्मक कार्यक्रमके अन्य दोनों अंग लोकशिक्षासे भरे हुए हैं। और अब तो लाखों करोड़ों स्त्री-पुरुषोंके हाथमें — सही या गलत रूपमें — सत्ता सौंप

दी गई है इसलिए यह कार्य तात्कालिक महत्त्वका हो गया है। यह सत्ता चाहे जितनी अल्प या सीमित हो तो भी कांग्रेसवादियों और दूसरोंके हाथमें—जिन्हें इन मतदाताओंसे वोट लेने हों—इन तीन करोड़ मनुष्योंको सही या गलत रास्तेसे शिक्षा देनेकी शक्ति है। जो वस्तुएं उनके जीवनके साथ अत्यंत निकटका सम्बन्ध रखती हैं उनमें उन लोगोंकी बिल्कुल ही उपेक्षा करना गलत मार्ग होगा। १

७

शपथ पत्रका मसविदा

श्री ब्रजलाल नेहरूने 'हरिजन' में छापनेके लिए शपथ-पत्रका जो मसविदा भेजा है, वह नीचे दिया जाता है:

> इस शपथ-पत्र पर हिन्दुस्तानकी मुल्की और जंगी सरकारी नौकरियोंके सारे सदस्योंको, केन्द्रकी, प्रान्तकी या स्थानीय नौकरियोंके सारे उम्मीदवारोंको, इन सरकारोंके मातहत दूसरी बड़ी बड़ी तनखाहोंवाली नौकरियोंके लिए अर्जी करनेवालों को और विधानसभाओंके सदस्योंके साथ संविधान-सभाके सदस्यों को भी हस्ताक्षर करने होंगे।
>
> मैं ईमानदारीके साथ यह शपथ लेता हूँ:
>
> १. मैं भारतीय संघका नागरिक हूँ, जिसके प्रति हर हालतमें वफादार रहनेका मैं वचन देता हूँ।
>
> २. मैं इस सिद्धान्तको नहीं मानता कि हिन्दू और मुसलमान दो अलग राष्ट्र हैं। मेरी यह राय है कि हिन्दुस्तानके सब लोग — फिर वे किसी भी जाति या धर्मके हों — एक ही राष्ट्रके अंग हैं।
>
> ३. मैं अपने सारे कार्यों और भाषणों द्वारा ऐसा प्रयत्न करूँगा, जिससे इस प्राचीन और पवित्र देशके सब लोगोंकी एक राष्ट्रीयताके विचारको शक्ति मिले।
>
> ४. अगर किसी समय मैं इस प्रतिज्ञाको तोड़नेका अपराधी साबित होऊँ, तो मुझे उस समयकी अपनी किसी भी बड़ी तनखाहकी नौकरी या पदसे हटा दिया जाय।

इस शपथ-पत्रके शब्दोंमें सुधारकी गुंजाइश हो सकती है। लेकिन अगर हम राजनीतिक क्षेत्रमें बढ़नेवाले रोगसे मुक्त होना चाहते हैं तो इस मसविदेमें रही भावना सचमुच प्रशंसाके लायक और अपनाने जैसी है। १

८
धारासभाओंके सदस्य

जो कांग्रेसी किसी धारासभाका सदस्य है वह वहां किसी भी पद पर क्यों न आसीन हो कांग्रेसका अनुशासन माननेके लिए वह बंधा हुआ है और कांग्रेसकी जो भी हिदायतें समय समय पर जारी हों उनका पालन उसे करना होगा।

मेरी रायमें तो जो कांग्रेसी धारासभाओंके सदस्य हैं चाहे वे केवल सदस्य हों या मंत्री हों या अध्यक्ष हों उन्हें अपने प्रत्येक कामसें इस बातका ध्यान रखना होगा कि कांग्रेस-विधानके अनुसार उन्हें सत्य और अहिंसा पर कायम रहना है। इस प्रकार जब किसी धारासभामें कोई कांग्रेसी अपने विरोधियोंके साथ पेश आये तो उसका व्यवहार बिलकुल ईमानदारीका और विनम्रतासे युक्त ही होना चाहिये। ईमानदारीसे दूर रहनेवाली गंदी राजनीतिका वह सहारा न लेगा कभी मांचना पर नहीं उतरेगा और अपने विरोधीकी कठिनाइसे लाभ नहीं उठायेगा। धारासभामें जितना ही बड़ा उसका पद होगा उतनी ही अधिक इन विषयोंमें उसकी जिम्मेदारी होगी। धारासभाका सदस्य अपने निर्वाचन-क्षेत्र और अपने दलका प्रतिनिधित्व करता है इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं। लेकिन इसके साथ साथ वह अपने समस्त प्रांतका भी प्रतिनिधित्व करता है। मंत्री अपने दलकी उन्नति तो जरूर करता है परन्तु कुल मिलाकर अपने राष्ट्रको हानि पहुंचाकर नहीं। निश्चय ही वह कांग्रेसकी उसी हद तक उन्नति करता है जिस हद तक वह राष्ट्रको उन्नत करता है क्योंकि वह जानता है कि अगर

किन्ही मामलोंमें वह युद्ध नहीं कर सकता तो अपने राष्ट्रके अन्दर हो अपने विरोधियोंसे भी वह युद्ध नहीं ठानेगा। और चूंकि धारा सभा एक ऐसी जगह है जहां सब जातियां वे पसन्द करें या न करें परस्पर मिलती हैं इसलिए यहां वह अपने विरोधियोंको जीत कर ऐसी शक्ति पैदा करनेकी आशा रख सकता है जिसे अदम्य बनाया जा सके। धारासभाओंको केवल गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्टकी परिभाषामें ही न लिया जाय बल्कि एक ऐसा साधन समझा जाय जिसका उपयोग ऐसे प्रश्न हल करनेमें किया जा सकता है जिन्हें हल करनेकी राष्ट्रके विभिन्न सम्प्रदायोंके प्रतिनिधियोंसे आशा रखी जा सकती है। यदि उन्हें अमर्यादित अधिकार हों तो साम्प्रदायिक एकता सहित हमारे राष्ट्रकी सारी समस्यायें उसमें हल की जा सकती हैं। और यह सच है कि गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट ऐसी अनेक समस्याओंको हल करनेमें धारासभाओंका प्रयोग करनेकी मनाही नहीं करता जो उनके कार्य क्षेत्रसे तो बाहर हैं परन्तु राष्ट्रीय प्रगतिके लिए जरूरी हैं।

इस दृष्टिकोणसे देखें तो धारासभाके अध्यक्षकी स्थिति प्रधानमन्त्रीसे भी बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण है क्योंकि जब वह अध्यक्षके आसन पर आसीन होता है तब उसे न्यायाधीशका कर्तव्य पालना होता है। उसे निष्पक्ष और न्यायपूर्ण निर्णय देने होते हैं। उसे बवन्डरके बीच भी शान्त रहकर सदस्योंके बीच शिष्टता और सौजन्य बनाये रखना पड़ता है। इस प्रकार विरोधियोंको जीतनेकी उसे ऐसी सुविधायें प्राप्त हैं जैसी अन्य किसी सदस्यको शायद ही हों।

ऐसी हालतमें सभा भवनके बाहर यदि कोई अध्यक्ष निष्पक्ष न रहकर दलबन्दीके चक्करमें पड़ जाय तो संभवतः उसका वैसा असर नहीं पड़ सकता जैसा हर जगह उसके निष्पक्ष और शान्त बने रहने पर पड़ सकता है। मैं यह दावा करता हूं कि अगर कोई अध्यक्ष अपने अत्यन्त सीमित क्षेत्रके बाहर भी वैसा ही निष्पक्ष रहनेकी आदत डाले तो वह कांग्रेसकी प्रतिष्ठा ही बढ़ायेगा। इस पदके कारण उसे जो अनोखा

अवसर मिला है उसे यदि वह समझ ले तो वह ऐसा करके हिन्दू मुस्लिम तनातनी तथा दूसरी भी अनेक समस्याओंके हलका रास्ता तैयार कर सकता है। इस प्रकार मेरी रायमें अध्यक्षको जो सभा भवनमें बसा हो यदि स्वयं बाहर भी रहता हो तो उसे प्रथम श्रेणीका कांग्रेसी होना चाहिये। मनुष्यके रूपमें भी उसका चरित्र ऐसा होना चाहिये कि कोई उस पर अंगुली न उठा सके। यह जरूरी है कि वह योग्य निर्भय स्वभावतः न्यायी और इन सबसे अधिक मन-वचन-कर्मसे सच्चा और अहिंसक हो। तब वह जिस प्लेटफार्म पर खड़ा रहना चाहेगा उस पर खड़ा रह सकेगा। १

९
धारासभाकी सावधानी

श्री पालखीवालाकी नजरबन्दीके लिए दरअसल कोई कारण समझमें नहीं आता। बम्बई सरकार लोकमतके प्रति जिम्मेदार है। यह हो नहीं सकता कि उसके बिना जाने ही गवर्नरने हुक्म जारी कर दिया हो। कोई भारतीय कानूनी अमल मनमाने ढंगसे नहीं कर सकता। उसे अपनी इस कार्रवाईको जनताके सामने उचित साबित करना चाहिये। अगर धारासभा अपने अस्तित्वकी योग्यता सिद्ध करना चाहती है तो उसे उत्तरदायी मंत्रिमंडलके कामों और उनके कारणोंसे परिचित रहना चाहिये। १

१०
सविधान-सभा फूलोंकी सेज नहीं

यह समय आराम करनेका या मौज शौकमें दिन बितानेका नहीं है। पं० जवाहरलाल नेहरूने कहा कि वे राष्ट्रके खातिर काटोंका ताज पहनें और उन्होंने मेरी बात स्वीकार की। सविधान बनानेवाली

सभा आप सबके लिए फूलोंकी सेज नहीं, परन्तु निरे कांटोंकी सेज साबित होनेवाली है। लेकिन आप उसकी जिम्मेदारीसे बच नहीं सकते।

परन्तु इसका यह मतलब कभी नहीं कि आपमें से हरएकको वहां जाना ही चाहिये। वहां सिर्फ उन्हीं लोगोंको जाना चाहिये, जो अपनी कानूनी शिक्षाके कारण या दूसरी किसी विशेष योग्यताके कारण वहां जाने और सभाका काम करनेकी क्षमता रखते हैं। अपनी कुरबानियोंके बदलेमें मिलनेवाले इनामके खयालसे किसीको संविधान-सभामें नहीं जाना चाहिये। वहां तो धर्म समझकर इस तैयारीसे जाना चाहिये, मानो फांसी पर लटकना हो या सेवाके यज्ञमें अपना सर्वस्व होम देना हो।

इसके अलावा आप लोगोंके संविधान सभामें जानेका एक और भी कारण है। अगर आप मुझसे पूछें कि संविधान सभामें सम्मिलित होनेके प्रस्तावको आप लोग अस्वीकार कर दें या वह सभा बन ही न पाये, तो क्या उस हालतमें मैं लोगोंको व्यक्तिगत रूपमें अथवा सामूहिक रूपमें सत्याग्रहकी लड़ाई शुरू करनेकी सलाह दूंगा अथवा क्या मैं स्वयं उपवास शुरू करूंगा, तो मेरे पास आपके इस प्रश्नका एक ही उत्तर है: नहीं, मैं ऐसा कुछ नहीं करूंगा। मैं उन लोगोंमें हूं जो अकेले चलनेमें विश्वास रखते हैं। इस संसारमें मैं अकेला आया हूं, दुःखकी छायामें इस संसारमें मैं अकेला चला हूं और समय आने पर मैं अकेला ही यहांसे चल दूंगा। मैं यह भी जानता हूं कि बिलकुल अकेला होने पर भी मैं सत्याग्रहकी लड़ाई शुरू करनेमें पीछे नहीं हटूंगा। पहले मैं ऐसा कर चुका हूं। परन्तु यह समय न तो सत्याग्रहकी लड़ाई छेड़नेका है और न उपवास आरंभ करनेका है। संविधान बनानेवाली सभाके कार्यको मैं सत्याग्रहका स्थान लेने वाला कार्य मानता हूं। वह रचनात्मक सत्याग्रह है। १

भदस्याने सामने यह प्रश्न कई बार आ चुका है। इसमें स थन्ना का एसा लगता है कि या ता भत्ता बढ़ाया जाना चाहिय या इसमें जो गरीब लोग ह उन्ह धनवानाके लिए स्थान छाडकर निकल जाना पडगा। आपको ता यह जानकर दुख हुआ कि धारासभाके कुछ सदस्य भत्ता अपन ही काममें ले रहे हैं। परन्तु मन आपके सामने तसवीरका दूसरा पहलू पश किया जिससे आप हमें रास्ता दिखा सकें। यह भी याद रखनेकी बात है कि काग्रेसकी आज्ञा मानकर हमने जो चुनाव लडे उनमें हममें से बहुताका कज लेना पडा था।

दूसरी जिस बातकी ओर म आपका ध्यान दिलाना चाहता हू वह है काग्रेसमें फली हुई गदगीका सवाल। इसके अनेक कारण तो ह ही साथ ही धारासभाकी सदस्यताका लालच भी काग्रेसके साधारण कायकर्ताआमें बहुत बढा है। इससे लोग वतमान सदस्यका हटा कर उसकी जगह लेने आनेकी कोशिश करते ह और इसके लिए अक्सर बुरे उपाय काममें लाते ह। अगर यह समझ लिया जाय कि जिन सदस्याने अच्छा काम किया है उन्हींको फिरसे खडा किया जायगा तो यह अच्छी बात होगी। एसी नीतिसे धारासभाओंके सदस्य लिए कायकर्ताओंका एक तालीम पाया हुआ समूह जरूर बना रहेगा। सदस्याको यह अनुभव भी अच्छी तरह हो जायगा कि धारा सभाओंके बाहर उन्हें रचनात्मक काय भी करना है।

तीसरी बात जिस पर प्रकाश डालनेकी आपसे नम्र प्राथना है यह है कि बड बड काग्रेसियाका भी पश्चिमी ढगके रहन-सहन विचार और संस्कृतिकी ओर जबरदस्त झुकाव हो रहा है। खद्दर पहनते हुए भी उनमें से बहुतेरे अपनी देशी संस्कृतिसे बिलकुल दूर रहते ह और उन्ह जो भी प्रकाश मिलता है वह पश्चिमसे ही मिलता है।

जहां तक सदस्योंके भत्तेसे सम्बन्ध है उसके पक्षमें दी गई दलीलोंसे मैं कायल नहीं हुआ हूं। अलबत्ता सभी मामलोंमें कुछ लोगोंको तो कष्ट होता ही है। परन्तु ऐसे उदाहरणोंसे नियम बनाना अच्छी बात नहीं है। याद रहे कि धारासभाओं पर कांग्रेसका ठेका नहीं है। वहां कई दलोंके प्रतिनिधि होते हैं। इसलिए सिर्फ कांग्रेस की सुविधाका ही खयाल नहीं रखा जा सकता। पत्रलेखक यह मान बैठे हैं कि प्रत्येक सदस्य धारासभाके कामको विशेष रूपसे ध्यानमें रखकर अपना सारा समय राष्ट्रीय सेवामें लगाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि धारासभाओंके सदस्योंका राजनीति ही एक धंधा हो गया है और धारासभायें खास तौर पर उनके लिए सुरक्षित स्थान बन गई हैं। मेरा बस चले तो मैं ये बातें राजनीतिक दलोंसे ही दूर रखूं। मैं जानता हूं कि इस प्रश्नमें कठिनाइयां भरी पड़ी हैं और इस पर पूरी तरह तथा शान्तिसे चर्चा होनी चाहिये। पर मैंने जो बात उठाई है वह बिलकुल छोटी है। जब धारासभाओंका काम एक तरहसे बन्द हो तब सदस्य लोग कुछ भी भत्ता क्यों लें? जांच की जाय तो पता चलेगा कि बहुतसे सदस्य धारासभामें चुन जानेसे पहले इतना नहीं कमा रहे थे जितना कि वे अब कमा रहे हैं। धारासभाओं को अपनी मामूली आमदनीसे अधिक कमाईका साधन बना लेना खतरनाक बात है। प्रान्तोंके जिम्मेदार लोगोंको मिलकर सोचना चाहिये और कोई ऐसा निर्णय करना चाहिये जिससे कांग्रेसकी भी शोभा बढ़े और जिस कामके लिए वे खप रहे हैं उसकी भी शोभा बढ़े।

पत्रलेखकने वर्तमान सदस्योंको स्थायी उम्मीदवार बना देनेका जो प्रश्न उठाया है वह मेरे हाथकी बात नहीं है। इस मामलेमें मुझे कोई अनुभव नहीं है। इसकी गहराईमें जाना कांग्रेस कार्यसमितिका काम है। रही बात पश्चिमसे प्रकाश लानेकी आदतकी। तो अगर मेरे सारे जीवनमें किसीको कोई रास्ता न मिला हो तो अब और मैं क्या रास्ता बता सकता हूं? प्रकाश तो पूर्वसे निकल कर [illegible]

करता था। अगर पूर्वका भंडार खाली हो गया है तो यह स्वाभाविक है कि पूर्वको पश्चिमसे प्रकाश उधार लेना पड़ेगा। मुझे तो आश्चर्य है कि प्रकाश यदि प्रकाश हो हो और कोई रोग न हो तो क्या वह कभी भी खतम हो सकता है? बचपनमें मैंने पढ़ा था कि प्रकाश अर्थात् ज्ञान खर्च करनेसे बढ़ता है घटता नहीं। कुछ भी हो मैंने तो इसी विश्वास पर अमल किया है और इसलिए बापदादाओंकी पूंजी पर ही अपना व्यापार चलाया है। मैं कभी घाटेमें नहीं रहा। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि मैं कुएका मेंढक बन जाऊं। अगर प्रकाश पश्चिमसे आये तो मुझे उससे लाभ उठानेमें कोई आपत्ति नहीं है। मैं इतना ध्यान जरूर रखूंगा कि पश्चिमकी तड़क भड़कसे मैं अभिभूत न हो जाऊं। मुझे भूलसे इस तड़क भड़कको ही सच्चा प्रकाश नहीं समझ लेना होगा। प्रकाश हमें जीवन प्रदान करता है और तड़क भड़क मौतके मुहमें ले जाती है। १

१२
धारासभाके सदस्योंकी तनखाह

प्रश्न — धारासभाके एक सदस्यकी माहवार तनखाह २०० रुपये है। चूंकि वह कस्बेमें रहता है इसलिए धारासभाकी बैठकके दिनोंमें वह १५ रुपये रोजका भत्ता पानेका अधिकारी है। इसके अलावा जिस दिन वह धारासभाकी बैठकमें हाजिर रहे उस दिनके लिए वह सवारी भत्तेके ढाई रुपये ले सकता है। साथ ही अपने रहनेके स्थानसे शहरमें आने पर उसे प्रथम वर्गके ड्योढ़े किरायेके हिसाबसे सफर खर्चका भत्ता भी मिल सकता है। लेकिन एक ही दिनके लिए वह सफर-खर्चका भत्ता और दैनिक भत्ता दोनों नहीं ले सकता।

१ (अ) क्या गरीबोंके प्रतिनिधि और सेवकके नाते इन आदमियोंको यह तनखाह लेनी चाहिये?

(आ) अगर वह अपनी पूरी तनख्वाह स्थानीय कांग्रेस कमेटीको या जिस संस्थामें वह काम करता हो उस रचनात्मक कार्यके लिए दे दे तो क्या वह इस दोषसे मुक्त हो सकेगा?

(इ) अगर ऐसा हो तो क्या इसका यह मतलब न होगा कि ध्येयके शुद्ध होनेसे उसे प्राप्त करनेका साधन भी शुद्ध बनता है?

२ धारासभाके अधिवेशनके दिनोंमें सदस्यको शहरमें रहना होगा और धारासभाके सदस्यके नाते अपने फर्जों और जिम्मेदारियोंको अदा करनेके लिए उसे कुछ खर्च भी करना पड़ेगा।

(अ) ऐसी हालतमें क्या वह अपने आदर्शके साथ मेल बैठाते हुए इन खर्चोंको पूरा करनेके लिए दैनिक भत्ता ले सकता है?

(आ) अगर ऐसा हो सकता हो और भत्तेका कुछ हिस्सा खर्च न किया जा सकता हो तो क्या उसे पूरा भत्ता लेना चाहिये? और बची हुई रकम अपनी संस्थाको जिसके मातहत वह काम करता हो दे देनी चाहिये?

(इ) अगर ऐसा किया जा सके तो क्या अपने आदर्शके साथ मेल बैठाते हुए वह इस तरह बची हुई रकमसे या उसके कुछ भागसे अपने परिवारके लिए खर्च कर सकता है? क्योंकि ऐसा न करने पर उसे अपने घरका खर्च चलानेके लिए मित्रोंके दानका सहारा लेना पड़ेगा।

३ (अ) क्या ऐसी स्थितिमें भी उसे सवारी भत्ता लेना चाहिये जब कि दैनिक भत्तेकी रकम उसके सवारी वगैराके सब खर्चोंको पूरा करनेके लिए काफीसे ज्यादा हो? (सवारीका भत्ता तो शहरमें रहते हुए उसके धारासभाकी बैठकोंमें शामिल होनेके लिए ही रखा गया है।)

(आ) अगर वह सामान्यतः ट्राममें या मोटर-बसमें सफर करता हो तो क्या धारासभाकी बैठकोंमें शरीक होनेके लिए उस वाहन या सबसे सस्ती सवारीका उपयोग करना चाहिये?

४. अगर कोई सदस्य सिद्धान्तके खातिर तीसरे दर्जेमें सफर करता हो, तो मीलके हिसाबसे सफर भत्ता लेनेके मामलेमें उसे उस स्थितिमें क्या करना चाहिये जब कि उसके लिए पहले दर्जेके ड्योढ़े किरायेके हिसाबसे भत्ता लेना कानूनी तौर पर संभव हो?

उत्तर — मेरी रायमें विभिन्न धारासभाओंके सदस्योंको जो तनखाह और भत्ते दिये जाते हैं, वे उनकी सेवाओंके लिहाजसे हर तरह ज्यादा हैं। तनखाहों या भत्तोंके जो स्तर निश्चित किये गये हैं वे ब्रिटिश नमूनेके हैं। दुनियाके इस गरीबसे गरीब देशकी आयके साथ उनका कोई मेल नहीं बैठता। इसलिए इन प्रश्नोंका मेरा उत्तर यही है कि जब तक मंत्रि-मंडल सारा खर्च कम न करे तब तक या तो दी जानेवाली तनखाह या भत्ता उस पार्टीको दे दिया जाय जिसके अधीन वह सदस्य काम करता है, और वह उतनी ही रकम ले जितनी पार्टीने उसके लिए निश्चित कर दी हो। और अगर यह संभव न हो तो वह उतनी रकम ले जितनी उसे अपने लिए और अपने परिवारके लिए सचमुच जरूरी मालूम हो। और बची हुई रकमको वह रचनात्मक कार्यके किसी अंगमें या इस तरहके अन्य किसी सार्वजनिक कार्यमें लगा दे। तनखाह या भत्तेके रूपमें निश्चित की गई रकम लेना जरूरी है, लेकिन यह किसी सदस्यके लिए अनिवार्य नहीं है कि वह उस रकमको अपने लिए खर्च भी करे। हां, अपनी जरूरतके मुताबिक खर्च किया जा सकता है। ध्येयके शुद्ध होनेसे साधनके शुद्ध होनेका प्रश्न यहां उठता ही नहीं। १

१३

बड़े दुःखकी बात

बहुतसे लोग संविधान-सभामें जानेके लिए इच्छुक हैं और मुझे इस बारेमें पत्र लिख रहे हैं। मुझे डर लगने लगा है कि अगर यह आम लोगोंकी दिमागी हालतकी निशानी हो तो कहना होगा कि उन्हें हिन्दुस्तानकी आजादीके बनिस्बत अपनेको आगे लानेकी ही ज्यादा चिन्ता है। इन चुनावोंके साथ मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। फिर भी जब मेरे पास इतने पत्र आ रहे हैं, तो कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्योंके पास कितने पत्र जाते होंगे? पत्र लिखनेवालोंको समझना चाहिये कि मैं चुनावोंमें कोई दिलचस्पी नहीं लेता। कार्यसमितिकी जिन बैठकोंमें इन अर्जियों पर विचार किया जाता है उनमें मैं उपस्थित नहीं रहता। और अक्सर मुझे अखबारोंसे ही पता चलता है कि कौन कौन चुने गये हैं। शायद ही कभी किसी चुनावके बारेमें मेरी सलाह पूछी जाती है। लेकिन आज तो मैं उस बीमारीकी ओर आम लोगोंका ध्यान खींचनेके लिए लिख रहा हूँ, जिसकी निशानी इतने पत्र या अर्जियाँ हैं। इस लेखनमें मेरा आशय यह बतानेका नहीं है कि मुझसे इस बारेमें मशवरा कोई आशा न रखी जाय। इन चुनावोंके बारेमें साम्प्रदायिक दृष्टिसे सोचना गलत है और साथ ही यह सोचना भी गलत है कि संविधान सभामें हर कोई जा सकता है। और यह खयाल करना तो सरासर गलत है कि ये चुनाव प्रतिष्ठाकी निशानी हैं। जो लोग इस तरहकी सेवाके योग्य हैं उनके लिए यह सेवाका एक साधन है। और आखिरी बातमें यह भी कहूँ कि जिनके दिल तक संविधान-सभा अपना काम

करें। उनमें फिर तब उसकी बैठकमें शामिल होकर थोड़ा रुपया जमा कर उनका खयाल तो व्यर्थ ही बड़ी चीज है।

संविधान-सभामें उन्हीं लोगोंको जाना चाहिए जो दुनियाके सब देशोंके संविधानोंकी जानकारी रखते हों और इससे भी ज्यादा जरूरी यह है कि वे हिन्दुस्तानको जिस तरहके संविधानकी जरूरत है वैसे संविधानके बारेमें कुछ जानने-समझने हों। यह सोचना या समझना कि सच्ची सेवा तो संविधान-सभामें जाकर ही हो सकती है एक नीचे गिरानेवाली बात है। सच्ची सेवा तो संविधान-सभाके बाहर पड़ी है। इसके बाहर सेवाका जो क्षेत्र पड़ा है उसकी तो कोई सीमा ही नहीं है। जिस तरहकी संविधान-सभा आज बन रही है आजादीकी लड़ाईमें उसकी भी अपनी एक जगह है। लेकिन उस जगहकी कीमत बहुत कम है और वह भी तभी कि जब हम बुद्धिमानीसे उसका अच्छी तरह उपयोग करें। संविधान-सभामें बैठक पानेके लिए ही सब भाग-दौड़ करने लगें तो विश्वास रखिये कि ऐसी सभासे कोई सार नहीं निकलेगा। इस भाग-दौड़को देखकर तो डर लगता है कि कहीं वह सभा स्वार्थी लोगोंकी शिकारगाह न बन जाय। यह तो मानना ही होगा कि संसदीय प्रवृत्तिका ही सीधा नतीजा आजकी यह संविधान सभा है। स्व॰ देशबंधु चित्तरंजन दास और स्व॰ पंडित मोतीलाल नेहरूने धारासभामें जाकर जो मेहनत की उसने मेरी आंख खोल दी और मैं यह देख सका कि देशकी आजादीकी लड़ाईमें पार्लियामेन्टरी प्रोग्रामकी भी अपनी जगह है। पहले मैंने इसका कड़ा विरोध किया था क्योंकि शुद्ध असहयोगके साथ इस प्रोग्रामका कोई मेल नहीं बैठता। लेकिन शुद्ध असहयोग कभी चला ही नहीं। जो चला वह भी आगे चल कर धीमा पड़ गया। अगर कांग्रेसवाले शुद्ध अहिंसक असहयोगी बनते तो पार्लियामेन्टरी प्रोग्राम देशके सामने आता ही नहीं। बुराईके साथ अहिंसक असहयोग करनेका मतलब है अच्छाईके साथ — जो भी कुछ अच्छा है उस सबके साथ — सहयोग करना। इसलिए

परदेशी सरकारके साथ अहिंसक असहयोग करनेका एक ही अर्थ हो सकता है और वह यह कि अपनी देशी अहिंसक सरकार बनाई जाय। यदि हम पूरा पूरा असहयोग कर पाते तो आज हिन्दुस्तानमें अहिंसक स्वराज्य आ चुका होता। लेकिन वैसा तो हम कुछ कर नहीं पाये। ऐसी स्थितिमें जिस तरीकेको हम जानते हैं और जिसे हम छोड़ नहीं पाये उसका विरोध करना व्यर्थ होगा। धारासभामें जाना मंजूर करनेके बाद इस नये कदमका बहिष्कार करना अनुचित होगा। परन्तु इसका यह मतलब हरगिज नहीं है और न हो सकता है कि संविधान सभामें घुसनेके लिए उम्मीदवारोंके साथ होड़ की जाय या भागदौड़ मचाई जाय। हरएकको अपनी मर्यादा समझ लेना चाहिए। १

१४
एक एक पाई बचाइये

मैंने देखा है कि धारासभाओंके सदस्य अपने निजी कामोंके लिए भी निहायत कीमती गुलाबी दिये हुए कागजका उपयोग करते हैं। जहां तक मैं जानता हूं दफ्तरोंका लिखनेका सामान (स्टेशनरी) दफ्तरसे बाहर नहीं ले जाया जा सकता। दफ्तरोंमें भी व्यक्तिगत कामोंके लिए — जैसे मित्रों या रिश्तेदारोंको पत्र लिखना या आम सभाओं संस्थाओं सार्वजनिक कार्य करनेवाले किसी व्यक्तिका गैरजनिक सवाल भिन्न किसी दूसरे कामके लिए पत्र लिखना — इसके उपयोगकी इजाजत नहीं है। जहां तक मैं जानता हूं दुनियाके हर भागमें इस बातकी मनाही है।

लेकिन इस गरीब देशके लिए तो मैं और भी आगे जाऊंगा। लिखनेके जिस सामानका मैंने जिक्र किया है वह हमारे देशके लिए बहुत महंगा है। अंग्रेज दुनियाके सबसे खर्चीले देशके लोग हैं। वे यह भी जानते हैं कि हम पर वे अपना जितना बोझ डाल सकें उतना ही उनका लाभ है। इसलिए उन्होंने दफ्तरोंके लिए बहुत कीमती और

वे अपना जान-पहचानका फायदा उठाकर पैसा बना रहे हैं और मजिस्ट्रेटोंकी कचहरियोंमें पहुंचकर न्यायके मार्गमें भी रुकावट डालते हैं। जिला कलक्टर और दूसरे माल-अधिकारी भी आजादीसे अपना फर्ज अदा नहीं कर सकते। कौंसिलके मेम्बर उसमें हस्तक्षेप करते हैं। कोई ईमानदार अधिकारी लम्बे समय तक अपनी जगह पर नहीं रह सकता। उसके खिलाफ मंत्रियोंके पास रिपोर्ट पहुंचाई जाती है और मंत्री किसी सिद्धान्तको न माननेवाले ऐसे स्वार्थी लोगोंकी बातें सुनते हैं। स्वराज्यकी लगन एक ऐसी चीज थी जिसके कारण सभी स्त्री पुरुष आपके नेतृत्वको मानने लगे थे। परन्तु ध्येय पूरा हो जाने पर अधिकतर कांग्रेसी लोगोंके नैतिक बंधन टूट गये हैं। उन्होंने पुराने योद्धाओं और उनका साथ दे रहे हैं जो हमारे स्वातंत्र्य आन्दोलनके कट्टर विरोधी थे। अपना मतलब निकालनेके लिए वे लोग आज कांग्रेसमें अपना नाम लिखवा रहे हैं। समस्या दिन-ब-दिन ज्यादा पेचीदा बनती जा रही है। नतीजा यह है कि कांग्रेसकी और कांग्रेस सरकारकी बदनामी हो रही है। लोगोंका कांग्रेस परसे विश्वास हट रहा है। अभी अभी यहां म्युनिसिपैलिटीके चुनाव हुए थे। ये चुनाव बताते हैं कि कितनी तेजीसे जनता कांग्रेसके कब्जेसे बाहर जा रही है। चुनावकी पूरी तैयारी करनेके बाद गतूरमें लोकल बोर्डस (स्थानीय संस्थाओं) के मंत्रीको जरूरी सूचना आनेसे चुनाव एकाएक रोक दिये गये।

मैं समझता हूं कि करीब दस सालसे यहां सब सत्ता एक नियुक्त की हुई कौंसिलके हाथोंमें रही है और अब करीब एक सालसे म्युनिसिपैलिटीका कामकाज एक कमिश्नरके हाथोंमें है। अब ऐसी बात चल रही है कि सरकार शहरकी म्युनिसिपैलिटीका कारोबार संभालनेके लिए एक कौंसिल नियुक्त करेगी।

'मैं बूढ़ा हूं। मेरी टांग टूट गई है। लकड़ीके सहारे लंगड़ाते लंगड़ाते थोड़ा-बहुत चलता फिरता हूं। मुझे अपना कोई स्वार्थ नहीं साधना है। इसमें शंका नहीं कि जिले और प्रान्तकी कांग्रेस कमेटियां दिन-ब-दिन गुटबन्दियोंमें बंटी हुई हैं। उनके मुख्य मुख्य कांग्रेसवालोंके खिलाफ मैं कड़े विचार रखता हूं। और मेरे विचार सब लोग जानते हैं।

कांग्रेसमें फिरनेवाला, लेजिस्लेटिव कौंसिलके सभ्योंकी पैसे बनानेकी प्रवृत्ति और मंत्रियोंकी कमजोरीके कारण जनतामें विद्रोहकी वृत्ति पैदा हो रही है। लोग कहते हैं कि इससे तो अंग्रेजी हुकूमत बहुत अच्छी थी और वे कांग्रेसको गालियां भी देते हैं।'

आंध्रके और दूसरे प्रान्तोंके लोग इस त्यागी सेवकके कहनेकी कीमत करें। वे ठीक कहते हैं कि जिस बेईमानीका उल्लेख उन्होंने किया है वह सिर्फ आंध्रमें ही नहीं पाई जाती। परन्तु वे आंध्रके बारेमें ही अपना निजी अभिप्राय दे सकते हैं। हम सब सावधान बनें। २

१६
कांग्रेसजनोंमें भ्रष्टाचार

इस पद-ग्रहणका अर्थ या तो अधिक महान प्रतिष्ठाको प्राप्त करना है या फिर प्रतिष्ठासे बिलकुल हाथ धो बैठना है। अपनी प्रतिष्ठाको यदि हमें बिलकुल नहीं गंवा बैठना है तो मंत्रियों और धारासभाओंके सभ्योंको अपने व्यक्तिगत और सार्वजनिक आचरणके प्रति जागरूक रहना ही होगा। उनकी हर बात सन्देहसे परे होनी चाहिये। वे कोई ऐसा काम न करें, जिससे खुद उन्हें या उनके सम्बन्धियों या मित्रोंको व्यक्तिगत रूपमें कोई फायदा पहुंचता हो। अगर वे अपने सम्बन्धियों या मित्रोंकी किसी सरकारी पद पर नियुक्ति करें

विभाग – ६ मतदान, मताधिकार और कानून

१७

धारासभाके सदस्य और मतदाता

धारासभाके सदस्य सेवक हैं

धारासभाके सदस्य देशके शासक नहीं परन्तु देशके प्रतिनिधि हैं और इसलिए देशके सेवक हैं। १

केवल सीमित संख्यामें ही पुरुष और स्त्रियां धारासभाओंके सदस्य बन सकते हैं — कहिये कि १५००। इस सभामें बैठे हुए लोगोंमें से कितने धारासभाके सदस्य बन सकते हैं? और इस समय ३॥ करोड़से ज्यादा लोग इन १५०० सदस्योंके लिए मत नहीं दे सकते। तब बाकीके ३१॥ करोड़ लोगोंका क्या? स्वराज्यकी हमारी कल्पनामें तो ३१॥ करोड़ ही सच्चे स्वामी हैं और ३॥ करोड़ मतदाता इन लोगोंके सेवक हैं जो स्वयं धारासभाओंके १५०० सदस्योंके स्वामी हैं। इस प्रकार १५०० सदस्य देशके प्रति वफादार रहकर अपने कर्तव्यका पालन करें तो वे दोहरे सेवक हैं — सेवकोंके भी सेवक हैं।

परन्तु ३१॥ करोड़ लोगोंको भी अपने प्रति और अपने राष्ट्रके प्रति जिसके व्यक्तियोंके नाते वे केवल छोटे अंग हैं वफादार रहकर अपना कर्तव्य पालन करना है। और अगर वे आलसी और निष्क्रिय बने रहें स्वराज्यके बारेमें कुछ न जानें और उसे जीतनेके उपाय भी न जानें तो वे धारासभाके इन १५०० सदस्योंके गुलाम बन जायंगे। मेरी दलीलके लिए देशके ३॥ करोड़ मतदाता उसी श्रेणीके हैं, जिस श्रेणीके ३१॥ करोड़ लोग हैं। क्योंकि यदि वे उद्यमी और बुद्धिमान न बनें तो वे १५०० खिलाड़ियोंके हाथके प्यादे बन जायंगे — भले ही वे कांग्रेसजन हों या और कोई हो। अगर मतदाता केवल

हर तीसरे या पांचवें साल अपने मत दर्ज करानेके लिए ही नींदसे जागें और मत देकर फिर गहरी नींदमें सो जायँ, तो उनके सेवक जरूर उनके स्वामी बन जायंगे। २

सत्ता कहां रहती है?

हम एक अरसेसे इस बातको माननेके आदी बन गये हैं कि आम जनताको सत्ता सिर्फ धारासभाओंके जरिये मिलती है। इस खयालको मैं अपने लोगोंकी एक गंभीर भूल मानता रहा हूं। इस भ्रम या भूलकी वजह या तो हमारी जड़ता है या वह मोहिनी है जो अंग्रेजोंके रीति रिवाजोंने हम पर डाल रखी है। अंग्रेज जातिके इतिहासके छिछले या ऊपर ऊपरके अध्ययनसे हमने यह समझ लिया है कि सत्ता शासन-तंत्रकी सबसे बड़ी संस्था पार्लियामेण्टसे छनकर जनता तक पहुंचती है। सच बात यह है कि सत्ता जनताके बीच रहती है जनताकी होती है और जनता समय समय पर अपने प्रतिनिधियोंको हैसियतसे जितनी पसंद करता है उतनी उतने समयके लिए उसे सौंप देता है। जनतासे भिन्न या स्वतंत्र पार्लियामेण्टोंकी सत्ता तो ठीक हस्ती तक नहीं होती। पिछले इक्कीस बरसोंसे भी ज्यादा अरसेसे मैं यह इतनी सीधी-सादी बात लोगोंके गले उतारनेकी कोशिश करता रहा हूं। सत्ताका असली भण्डार तो सत्याग्रहकी या सविनय कानून भंगकी शक्तिमें है। एक समूचा राष्ट्र यदि अपनी धारासभाके कानूनोंके अनुसार चलनेसे इनकार कर दे और इस सिविल नाफरमानीके नतीजोंको बरदाश्त करनेके लिए तैयार हो जाय तो सोचिये कि क्या नतीजा होगा! ऐसी जनता सरकारकी धारासभाको और उसके शासन प्रबन्धको जहांका तहां, पूरी तरह रोक देगी। सरकारकी पुलिसकी या फौजकी ताकत फिर वह कितनी ही जबरदस्त क्यों न हो थोड़े लोगोंको ही दबानेमें कारगर होती है। लेकिन जब कोई समूचा राष्ट्र सब कुछ सहनेको तैयार हो जाता है तो उसके दृढ़ संकल्पको डिगानेमें किसी पुलिसकी या फौजकी कोई जबरदस्ती काम नहीं देती।

फिर पार्लियामेण्टके ढगकी शासन-व्यवस्था तभी उपयोगी होता है जब पार्लियामेण्टके सब सदस्य बहुमतके फैसलेको माननेके लिए तैयार हों। दूसरे शब्दोंमें इसे यों कहिये कि पार्लियामेण्टरी शासन-पद्धतिका प्रबन्ध परस्पर अनुकूल समूहोंमें ही ठीक-ठीक काम देता है। ३

१८

स्त्रियां और विधानसभायें

कस्तूरबा ट्रस्ट और विधानसभायें

२८, २९ और ३० माघ (१९४६)को उरूली कांचनमें दो बैठकें हुईं, एक कस्तूरबा स्मारक ट्रस्टके एजेन्टोंकी और दूसरी ट्रस्टकी कार्यकारिणी समितिकी। एजेन्टोंकी बैठक अपने ढंगकी पहली ही थी। बैठकमें एजेन्टोंने बहुतसे दिलचस्प सवाल पूछे। एक बहनने पूछा कि कस्तूरबा ट्रस्टकी एजेन्ट बहनें विधानसभाकी सदस्या क्यों नहीं हो सकतीं? इसका स्पष्ट उत्तर यह है कि यदि उन्हें अपने कामके साथ न्याय करना हो तो विधानसभाके कर्तव्य पूरे करनेके लिए उन्हें समय हो नहीं मिल सकता। निश्चित कारण यह है कि यदि ग्रामवासियोंको विधानसभाकी सदस्याको आर मतके लिए ताकना पड़े तो यह ग्रामवासियोंके लिए एक गलत उदाहरण पेश करना होगा। १

क्यों नहीं?

एक बहनको मेरा यह कहना चुभता है कि यदि धारासभाकी सदस्या बहनें कस्तूरबा निधि मंडलकी एजेन्ट बनें तो वह ग्रामवासियोंके सामने एक गलत उदाहरण होगा। वे कहती हैं कि अगर यह बात मौजूदा धारासभाओंके लिए हो तब तो ठीक हो सकती है, लेकिन जब हमारा शासन होगा तब तो शक्ल बदल जायगी। धारासभाके सदस्य पथ-प्रदर्शक होंगे। इसलिए वहां जाना लाभदायक ही होगा। जिस

कामको करनेमें या तो बरसों लग जाते हैं, वह काम धारासभाके मारफत एक ही चटकमें हो जायगा।

इस दलीलमें तीन गलतियाँ हैं। पहली तो यह बात ही गलत है कि मैंने आजकी और अपने शासन-कालमें होनेवाली धारासभाओंमें कोई भेद किया है। ऐसा भेद अनावश्यक है।

दूसरे यह मानना कि ऐसे सदस्य पथप्रदर्शक होंगे भ्रममूलक होगा। मतदाता किसीको धारासभामें इसलिए नहीं भेजते कि उससे मार्गदर्शन प्राप्त करें बल्कि इसलिए भेजते हैं कि हम उसके लिए जो रास्ता तय कर दें उस पर चलनेकी वफादारी उसमें है। पथप्रदर्शक तो हम हैं, धारासभाके सदस्य नहीं। वे हमारे सेवक हैं, स्वामी नहीं। आजका यह भ्रम वर्तमान शासन-पद्धतिका पैदा किया हुआ है। जब यह भ्रम दूर हो जायगा तो सदस्य बननेवालोंकी भरमार बहुत कम हो जायगी। धर्म समझकर जानेवाले लोग थोड़े ही होंगे। वे हमारी इच्छासे वहाँ जायँगे। धारासभामें जानेकी अगर कोई जरूरत हो सकती है तो वह आज है जब कि वहाँ जाकर लोक-शासनके लिए लड़ना है। लेकिन आज तो कुछ हद तक हमने यह भी देख लिया है कि वहाँ पहुँच कर लोक-शासनके लिए लड़ाई कम होती है।

तीसरी गलती यह माननेमें है कि धारासभायें ही मार्गदर्शनके सबसे योग्य साधन हैं। अपना इतिहास देखनेसे पता चलता है कि दुनिया भरमें पथप्रदर्शक ज्यादातर तो धारासभाके बाहर रहनेवाले लोग ही होते हैं। यदि ऐसा न हो तो लोक-शासन सड़ जाय। क्योंकि मार्गदर्शन करनेका क्षेत्र तो व्यापक और विशाल है और धारासभाका बहुत छोटा। लोक-जीवनकी धारा महासागर है जब कि धारासभा एक बहुत छोटी नदी। २

प्रश्नोत्तर

प्र० — हमें मालूम होता है कि कांग्रेस किसी भी प्रतिनिधि-संस्था या समितिके लिए महिला प्रतिनिधियोंको बड़ी तादादमें चुननेके खिलाफ

है। असलमें न्यायका तकाजा है कि अलग अलग संस्थाओंमें महिलाओंको ज्यादा संख्यामें चुना जाय। इस सवालको आप कैसे हल करेंगे?

उ० — ऐसी बातोंमें मुझे समानताका या दूसरे किसी तरहके अनुपातका मोह नहीं है। इसमें योग्यता ही मुख्य कसौटी होनी चाहिये। आज तक अगर स्त्रियोंको इस क्षेत्रसे दूर रखनेका रिवाज चला आया है तो अब समान योग्यताके आधार पर पुरुषोंके बजाय स्त्रियोंको तरजीह देनेका उलटा रिवाज चालू कर देना चाहिये। इस तरजीहका यह नतीजा हो सकता है कि पुरुषोंकी सारी जगहें स्त्रियोंके हाथमें आ जायें, लेकिन इसकी कोई चिन्ता नहीं। कोई स्त्री केवल स्त्री है इसलिए उसे सदस्य बनाने पर जोर देना खतरनाक बात होगी। स्त्रियां हों या दूसरे कोई दल हों उन्हें किसीकी मदद पर आधार न रखना चाहिये। उन्हें न्यायकी मांग करनी चाहिये न कि पक्षपात या मेहरबानीकी। इसलिए स्त्रियों और पुरुषों दोनोंके लिए यही ठीक होगा कि वे अंग्रेजी या पश्चिमी शिक्षाके बदले अपने समाजमें प्रान्तीय भाषाओं द्वारा ऐसी शिक्षाका प्रसार करें जो लोगोंको नागरिकोंके सारे फर्ज पूरे करने लायक बना दे। अगर पुरुष इस ओर पहले कदम बढ़ाते हैं तो उनका यह काम मेहरबानी नहीं बल्कि स्त्रियोंके साथ किया जानेवाला न्याय ही होगा जो बहुत पहले किया जाना चाहिये था। ३

१९

मताधिकार

मैंने बालिग मताधिकारका वरण किया है। बालिग मताधिकार एक नहीं अनेक कारणोंसे जरूरी है। और मेरे लिए एक निर्णायक कारण यह है कि वह मुझे न केवल मुसलमानोंकी परन्तु तथाकथित हिन्दुओंकी ईसाइयोंकी मजदूरोंकी और सभी प्रकारके वर्गोंकी सारी उचित महत्वाकांक्षायें सन्तुष्ट करनेके लिए समर्थ बनाता है। मैं

इस विचारको सहन नहीं कर सकता कि जिस आदमीके पास धन है उसे मतदानका अधिकार हो और जिस आदमीके पास धन या अक्षरज्ञान तो नहीं परंतु चरित्र है उसे मतदानका अधिकार न हो अथवा जो आदमी रात दिन पसीना बहाकर ईमानदारीसे कड़ी मेहनत करता है उसे केवल इस अपराधके लिए मतदानका अधिकार न हो कि वह गरीब है। १

जहां तक मताधिकारका सम्बन्ध है मैं विश्वास दिलाता हूं कि २१ या १८ वर्षकी उम्रसे ऊपरके सब बालिग स्त्री-पुरुषोंको मत देनेका अधिकार रहेगा। मैं अपने जैसे बूढ़ोंको यह अधिकार नहीं देना चाहता। ऐसे लोग किसी कामके नहीं। हिंदुस्तान और बाकीकी दुनिया उन लोगोंके लिए नहीं है जो मौतके किनारे खड़े हैं। उनके लिए मौत है जिन्दगी नौजवानोंके लिए है। इस तरह मैं चाहूंगा कि जैसे १८ वर्षकी उम्रसे कम उम्रके लोगोंको मत देनेका अधिकार नहीं होगा उसी तरह एक निश्चित उम्रके बादके लोगोंको—मान लीजिये कि ५० सालसे ऊपरकी उम्रके लोगोंको भी इससे वंचित रखना होगा। २

वयस्क मताधिकार और अक्षरज्ञानकी कसौटी

अब तक मैं यह मानता और कहता आया हूं कि हरएक वयस्क आदमीको—फिर वह निरक्षर हो या साक्षर—मत देनेका अधिकार होना चाहिये। लेकिन कांग्रेस विधानको जिस तरह अमलमें लाया जा रहा है उसका निरीक्षण करते करते मेरी राय बदल गई है। अब मैं यह मानने लगा हूं कि मताधिकारके लिए अक्षरज्ञानका होना आवश्यक है। इसके दो कारण हैं। मतको एक विशेष अधिकारके रूपमें माना जाय और उसके लिए कुछ योग्यता आवश्यक समझी जाये। सबसे सादी योग्यता अक्षरज्ञानकी—लिखना पढ़ना आ जानेकी—है। और अक्षरज्ञानवाले मताधिकारके विधानके अनुसार बना हुआ मंत्रिमंडल यदि मताधिकारसे वंचित निरक्षर प्रजाजनोंके हितकी चिंता रखनेवाला होगा तो आवश्यक अक्षरज्ञान तो उन्हें देखते देखते हो जायगा। ३

कानून द्वारा सुधार

लोग ऐसा सोचते मालूम होते हैं कि किसी बुराईके खिलाफ कानून बना दिया जाय तो वह बुराई अपने-आप निर्मूल हो जाती है। इस सम्बन्धमें अधिक कुछ करनेकी आवश्यकता नहीं रहती। लेकिन इससे ज्यादा बड़ा कोई आत्म-वंचना नहीं हो सकती। कानून तो अज्ञानमें फंसे हुए या बुरी वृत्तिवाले अल्पसंख्यक लोगोंको ध्यानमें रखकर बनाया जाता है और उसी स्थितिमें वह सफल भी होता है। बुद्धिमान और संगठित लोकमत अथवा धर्मकी आड़ लेकर दुराग्रही अल्पसंख्यक लोग जिस कानूनका विरोध करते हैं वह कभी सफल नहीं हो सकता। १

पहली चीज तो यह है कि हमारे प्रयत्नमें जबरदस्ती या जरा-सा जोर भी नहीं होना चाहिये। मेरी नम्र रायमें आज तक जबरदस्तीके द्वारा कोई भी महत्त्वपूर्ण सुधार नहीं कराया जा सका है। कारण यह है कि जबरदस्तीके द्वारा ऊपरी सफलता होती भले दिखाई दे किन्तु उससे दूसरी अनेक बुराइयां पैदा हो जाती हैं जो मूल बुराईसे भी ज्यादा हानिकारक सिद्ध होती हैं। २

एक बार जब कानून अमलमें आ जाता है तब उसे बदलनेके पहले सभी कठिनाइयोंका सामना करना होता है। जनमतके पूरी तरह शिक्षित होने पर ही देशमें प्रचलित कानून रद किये जा सकते हैं। जिस विधानके मातहत हर समय कानून सुधारे जाते हैं या रद किये जाते हैं उसे स्थायी या सुगठित नहीं कहा जा सकता है। ३

मुझे डर है कि भारतको अगले कई वर्षों तक दबी हुई और गिरी हुई जनताको दुःख और गरीबीके कीचड़से उठानेके लिए आवश्यक कानून कायदे बनानेका काम करते रहना होगा। इस कीचड़में उसे एक हद

तक तो पूंजीपतियों, जमींदारों और तथाकथित उच्च वर्गोंने और बादमें ब्रिटिश शासकोंने कमाया है। अलबत्ता ब्रिटिश शासकोंने अपना यह काम बहुत वैज्ञानिक रीतिसे किया है। अगर हमें इस जनताका उसकी इस दुरवस्थासे उद्धार करना है, तो अपना घर सुव्यवस्थित करनेकी दृष्टिसे भारतकी राष्ट्रीय सरकारका यह कर्तव्य होगा कि वह लगातार जनताको ही तरजीह देती रहे और जिन बोझोंके भारसे उसकी कमर टूटी जा रही है उनसे उसे मुक्त भी कर दे। और यदि जमींदारों, अमीरों और उन लोगोंको जो आज विशेषाधिकार भोग रहे हैं — फिर वे यूरोपीय हों या भारतीय — ऐसा मालूम हो कि उनके साथ निष्पक्षताका व्यवहार नहीं हो रहा है, तो मैं उनसे सहानुभूति रखूंगा। लेकिन मैं उनकी कोई सहायता नहीं कर सकूंगा, क्योंकि मैं तो इस प्रयत्नमें उनकी मदद चाहूंगा, और सच तो यह है कि उनकी मददके बिना इस जनताका कीचड़से उद्धार करना सम्भव ही नहीं होगा।

इसलिए धन या अधिकारोंके रूपमें जिनके पास कोई सम्पत्ति है उनके तथा जिनके पास ऐसी कोई सम्पत्ति नहीं है उन गरीबोंके बीच संघर्ष तो अवश्य होगा। और यदि इस संघर्षका भय रखा जाता हो और सब वर्ग मिलकर करोड़ों मूक लोगोंके सिर पर पिस्तौल तान कर ऐसा कहना चाहते हों कि तुम लोगोंको तुम्हारी अपनी सरकार तब तक नहीं मिलेगी जब तक कि तुम इस बातका आश्वासन नहीं दोगे कि हमारी सम्पत्ति और हमारे अधिकारोंको कोई आंच नहीं आयगी, तब तो मुझे लगता है कि राष्ट्रीय सरकारका निर्माण हो ही नहीं सकता। ४

२१

कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डल

पद-ग्रहणके मामलेमें कांग्रेस कार्यसमिति तथा कांग्रेसवादियोंने मेरी रायसे अपनेको प्रभावित होने दिया है, इसलिए सर्व-साधारणको यह बताना मेरे लिए शायद जरूरी हो गया है कि पद-ग्रहणके बारेमें मेरी क्या कल्पना है और कांग्रेसके चुनाव घोषणापत्रके अनुसार पद-ग्रहण द्वारा क्या क्या किया जा सकता है। यह बात शायद पाठकोंको उस मर्यादासे बाहरकी मालूम पड़े जो कि मैंने 'हरिजन' के लिए अपने-आप बना रखी है। लेकिन इसके लिए मुझे माफी मांगनेकी जरूरत नहीं है। कारण इसका बिलकुल साफ है। भारतीय शासन विधान (गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट) हिंदुस्तानकी स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए बिलकुल पर्याप्त नहीं है, यह आम तौर पर सब कोई मानते हैं। परन्तु इसके द्वारा तलवारके शासनको बहुमतके शासनमें बदला जा सकता है फिर वह कितना ही सीमित और निर्बल क्यों न हो। तीन करोड़ स्त्री-पुरुषोंके विशाल निर्वाचक मण्डलका निर्माण करके उसके हाथमें विशाल सत्ता सौंपनेकी बातको हम और कह ही क्या सकते हैं? यह सच है कि इस विधानमें यह आशा निहित है कि हमारे ऊपर जो कुछ भी जबरदस्ती लादा गया है उसे हम ग्रहण करेंगे यानी अपने शोषणको अंतमें हम अपने लिए वस्तुतः एक आशीर्वाद समझेंगे। लेकिन तीन करोड़ मतदाताओंके प्रतिनिधियोंको अपने आपमें काफी विश्वास हो और उनमें इतनी कुशलता हो कि अपने हाथमें आई हुई सत्ताका (जिसमें पद-ग्रहण भी शामिल है) वे विधान बनानेवालोंके स्वाभाविक आशयको पराजित कर देनेमें

उद्देश्यसे उपयोग कर सके तो यह आशा निष्फल हो सकती है। और ऐसा करना कुछ कठिन काम नहीं है, बशर्ते कि हम कानूनी तौर पर इस विधानका ऐसा उपयोग करें जैसा उपयोग किये जानेकी उन्होंने आशा नहीं रखी है और जैसा वे चाहते हैं वैसा उपयोग हम उसका न करें।

इस प्रकार शराबकी आमदनीसे शिक्षाका खर्च चलानेके बजाय शिक्षाको स्वावलम्बी बनाकर मन्त्रि-मण्डल तत्काल मद्य-निषेधको अमलमें ला सकते हैं। यह एक चौंका देनेवाली बात मालूम पड़ेगी, लेकिन मैं तो इसे सर्वथा व्यावहारिक और बिल्कुल उचित समझता हूं। इसी तरह जेलोंको सुधार-गृहों और कारखानोंका रूप दिया जा सकता है। उस हालतमें वे खर्चीले और सजा देनेवाले महकमोंके बदले स्वावलम्बी और शिक्षणात्मक महकमे बन जायेंगे। इर्विन-गांधी करारके अनुसार जिसकी सिर्फ नमकवाली धारा अब भी कायम है, नमक गरीबोंके लिए मुफ्त मिलना चाहिये। लेकिन ऐसा है नहीं। अब कमसे कम कांग्रेसी प्रान्तोंमें तो यह हो ही सकता है। इसी तरह जो भी कपड़ा खरीदा जाय वह खादीका ही होना चाहिये। शहरोंके बजाय अब गांवों और किसानोंकी तरफ ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिये। ये तो इधर-उधरके कुछ उदाहरण भर हुए। ये सब बातें पूरी तरह कानून-सम्मत हैं। परन्तु इनमें से किसी एकके लिए भी अभी तक कोई प्रयत्न नहीं किया गया है।

इसके बाद मन्त्रियोंके अपने निजी आचरणका सवाल आता है। कांग्रेसी मन्त्री किस तरह अपना कर्तव्य पालन करेंगे? राष्ट्रपति (कांग्रेस अध्यक्ष) तो तीसरे दर्जेमें यात्रा करते हैं। तब क्या मन्त्री पहले दर्जेमें यात्रा करेंगे? इसी प्रकार राष्ट्रपति तो खुरदरे और सादे खद्दरके कुर्ते, धोती और जाकिटसे ही सन्तोष कर लेते हैं, तब क्या मन्त्री पश्चिमके रहन-सहनके ढंग और पैमाने पर पैसा खर्च करेंगे? गत १७ वर्षोंसे कांग्रेसियोंने कठोरतासे सादगीका पालन किया है। अतः राष्ट्र

लक्ष्य हमारी पद्धतिसे बिल्कुल भिन्न है दोनों लक्ष्योंका प्रतिनिधित्व करनेवाले स्त्री-पुरुष मूलतः एक ही मानव-परिवारके हैं। अब उन्हें एक-दूसरेके सम्पर्कमें आनेका ऐसा अवसर मिलेगा जैसा पहले कभी नहीं मिला था। मानव-दृष्टिसे मैंने विधानका जो अध्ययन किया है वह अगर सही हो तो उसके जरिये दो दल — हरएक अपने अपने इतिहास अपनी आधार भूमि और अपना लक्ष्य सामने रखकर — एक-दूसरेको बदलनेके लिए आगे बढ़ते हैं। जड और आत्मा रहित संस्थायें होती हैं न कि उन्हें बनानेवाले और उनका उपयोग करनेवाले मनुष्य। अगर अंग्रेज या अंग्रेजियतमें पले हुए हिन्दुस्तानी कमसे कम यदि भारतीय यानी कांग्रेसके दृष्टिकोणसे भी देख सकें तो समझना चाहिये कि कांग्रेस अपनी लड़ाई जीत ली और पूर्ण स्वाधीनता हमें एक बूंद खून बहाये बिना ही प्राप्त हो जायगी। मैं जिसे अहिंसात्मक तरीका कहता हूं वह यही है। यह तरीका चाहे बेवकूफी भरा समझा जाय या काल्पनिक अथवा अव्यावहारिक परन्तु यही वह सर्वोत्तम तरीका है जिसे कांग्रेसियों अन्य भारतीयों तथा अंग्रेजोंको जानना चाहिये। यह ध्यान रहे कि पद ग्रहण इसलिए नहीं किया जा रहा है कि किसी न किसी तरह नये विधान पर अमल किया जाय। यह तो कांग्रेसका अपना पूर्ण स्वतंत्रताका ध्येय सिद्ध करनेकी दिशामें एक ऐसा गंभीर प्रयत्नमात्र है जिसमें एक ओर तो खूनी क्रांति यानी रक्तपातको बचाना है और दूसरी ओर सविनय अवज्ञाको ऐसे पैमाने पर करनेसे रोकना है जिस पर कि अभी तक उसे करनेका प्रयत्न नहीं हुआ है। ईश्वर हमारे इस प्रयत्नको आशीर्वाद दे। १

२२

कितना मौलिक अंतर है!

जरा सोचनेकी बात है कि पुराने और नये राज्य प्रबंधमें कितना मौलिक अन्तर है। इसे महत्त्वको पूरी तरह अनुभव करनेके लिए हम नये विधान द्वारा लादी गई तथा प्रबंधकोंके मार्गमें बेहद रोड़े अटकानेवाली मर्यादाओंको हम एक क्षणके लिए भूल दें। पद ग्रहण करनेमें कांग्रेस ठेठ पराकाष्ठाकी सीमा तक चली गई है। पर सवाल यह है कि इससे दरअसल उसके हाथमें सत्ता कितनी आई है। पहले मंत्रि-मंडलों पर गवर्नरोंका नियंत्रण था। अब कांग्रेसका है। अब वे कांग्रेसके प्रति जिम्मेदार हैं। अपनी प्रतिष्ठाके लिए वे कांग्रेसके ऋणी हैं। गवर्नरों और सिविल सर्विसवालोंको आज भले ही हम हटा न सकें फिर भी वे मंत्रि-मंडलोंके प्रति जवाबदेह हैं। तब भी मंत्रियोंका उन पर नियंत्रण एक हद तक ही है। किन्तु इस हदके अंदर रहते हुए भी वे कांग्रेसकी यानी जनताकी सत्ताका संगठन कर सकते हैं। मंत्रियोंके काम गवर्नरोंके लिए चाहे जितने अरुचिकर हों पर जब तक वे इस कानूनकी मर्यादामें रहेंगे तब तक गवर्नर उनका कुछ भी नहीं कर सकेंगे। और अच्छी तरह परीक्षा करने पर हमें साफ साफ दिखाई दे सकता है कि जनता अगर अहिंसक बनी रही तो कांग्रेसके मंत्रि-मंडलोंके हाथमें राष्ट्रको विकसित करनेकी अब भी काफी सत्ता है।

इस सत्ताका उपयोग करके अगर अच्छे परिणाम लाने हैं तो जनताको चाहिये कि वह कांग्रेस और उसके मंत्रियोंको हार्दिक सहयोग दे। अगर मंत्री कुछ अन्याय करें तो हर आदमी इसकी शिकायत राष्ट्रीय महासमिति (आल इंडिया कांग्रेस कमेटी) के मंत्रीसे कर सकता है और उसके परिमार्जनकी मांग भी कर सकता है। पर कानूनको कोई अपने हाथमें न ले।

कांग्रेसवादियोंको यह भी अच्छी तरह जान लेना चाहिये कि आज सारा भारत कांग्रेसके हाथोंमें है। एक भी राजनीतिक दल ऐसा नहीं है जो उनकी सत्ताके खिलाफ उंगली तक उठा सके। क्योंकि दूसरे दल कभी गांवोंमें गये ही नहीं हैं। और न यह काम ही ऐसा है जो एक दिनमें किया जा सके। इसलिए जहां तक मैं नजर दौड़ाता हूं मुझे तो यही दिखाई देता है कि हमारे मंत्रियोंके लिए — यदि वे ईमानदार, निःस्वार्थ, उद्योगशील, सजग और तत्पर हैं तथा अपने करोड़ों भूखों मरनेवाले भाई-बहनोंका सचमुच भला करना चाहते हैं — कांग्रेसके पूर्ण स्वतंत्रतावाले ध्येयकी तरफ तेजीसे आगे कदम बढ़ानेके लिए यह बड़ा अच्छा मौका है। निःसन्देह इस कथनमें भी बहुत सत्य है कि इस नये कानूनने राष्ट्र निर्माणकारी महकमोंके लिए मंत्रियोंके हाथोंमें कुछ भी पैसा नहीं छोड़ा है। पर अधिकांशमें यह भी तो एक भ्रम ही है कि राष्ट्र निर्माण केवल पैसेसे ही हो सकता है। सर डेनियल हेमिल्टनके साथ मैं भी यही मानता हूं कि सच्चा धन सोना-चांदी नहीं बल्कि श्रमशक्ति है। धनशक्तिके साथ श्रमशक्तिका होना अच्छा है। किन्तु श्रमशक्ति मुख्य हो और उसके साथ जहां जरूरत हो वहां पैसेकी भी सहायता ले ले तो वह अधिक अच्छा है कम तो हरगिज नहीं।

एक अंग्रेज अर्थशास्त्री जो कि हिंदुस्तानमें एक बड़े ऊंचे पद पर रह चुके हैं लिखते हैं "हिंदुस्तानको हमारी सबसे बुरी देन है ये महंगी नौकरियां। पर जो हुआ सो हुआ। मुझे तो अब कोई स्वतंत्र वस्तु ढूंढकर बतानी होगी। आज जो कुछ पैसेके लिए किया जाता है वह अब आगे सेवाकी दृष्टिसे होना चाहिये। डाक्टरों तथा शिक्षकोंको भारी भारी तनखाहें क्यों दी जायं? सहकारिताके सिद्धांतके अनुसार क्या नहीं अधिकांश काम चलाया जा सकता? आप पूंजीकी चिल्लाहट क्यों मचाते हैं जब कि सत्तर करोड़ हाथ काम करनेके लिए तैयार हैं? अगर हम सहकारिताके आधार पर — जो कि समाज

वास्त्रा एक समाधित रूप है — काम करें, तो हमें धनकी कमसे कम अधिक परिमाणमें तो जरूरत नहीं होगी।'

सेगाँवमें मुझे इसका प्रमाण मिल रहा है। यहाँके चार सौ बालिग निवासी बड़ी आसानीसे एक सालमें दस हजार रुपये कमा सकते हैं, बशर्ते कि वे मेरे बताये हुए मार्ग पर चलें। पर वे चलते नहीं। उनमें सहयोगकी कमी है। वे काम करते समय बुद्धिसे काम नहीं लेते और कोई भी नई बात सीखना नहीं चाहते। छुआछूत उनके रास्तेमें एक बड़ी जबरदस्त रुकावट है। अगर कोई उन्हें एक लाख रुपये भी दे दे, तो वे उसका सदुपयोग नहीं करेंगे। लेकिन अपनी इस दशाके लिए ये लोग खुद ही जिम्मेदार नहीं हैं। जिम्मेदार हम मध्यम वर्गके लोग हैं। सेगाँव जैसी ही हालत दूसरे गाँवोंकी भी समझ लीजिये। लेकिन धीरजके साथ प्रयत्न किया जाय, तो उन पर भी सेगाँवकी ही तरह असर — भले बहुत थोड़ा ही क्यों न हो — पड़ सकता है। पर बगैर एक पाई भी अधिक खर्च किये राज्य इस दिशामें बहुत-कुछ कर सकता है। सरकारी अधिकारियोंका उपयोग लोगोंको सतानेके बजाय उनकी सेवामें किया जा सकता है। ग्रामीणों पर किसी तरहकी जोर-जबरदस्ती करनेकी जरूरत नहीं है। उन्हें ऐसी बातें करनेकी शिक्षा दी जा सकती है जिससे कि वे नैतिक बौद्धिक शारीरिक और आर्थिक सब दृष्टियोंसे सम्पन्न हो जायँ। १

२३

मंत्रीपद कोई पुरस्कार नहीं है

विभिन्न प्रान्तोंसे मेरे पास कई एसे पत्र आ रहे हैं जिनमें कांग्रेस के मन्त्रीपद ग्रहण करने पर खुदको या अपने किसी मित्रको मन्त्रीपद न देनेकी शिकायतके साथ साथ इस सम्बन्धमें मुझसे बीचमें पड़नेके लिए कहा जाता है। मेरे खयालमें एसा एक भी प्रान्त न होगा जहांसे मेरे पास एसी शिकायतें न आई हों। बल्कि इनमें से कई पत्रोंमें तो यह भय भी बताया गया है कि अगर अमुक व्यक्तिके दावा पर ध्यान न दिया गया तो साम्प्रदायिक दंगे आदि भयंकर परिणाम उपस्थित होंगे।

इस सम्बन्धमें पहली बात तो मैं यह कहूंगा कि मन्त्रियोंके चुनाव के किसी भी मामलेमें मैंने कोई दखल नहीं दिया है। पहले तो मेरी एसी कोई इच्छा ही नहीं है फिर अगर इच्छा हो भी तो कांग्रेससे बिलकुल अलग हो जानेके कारण मुझे एसे मामलोंमें हस्तक्षेप करनेका कोई अधिकार नहीं है। कांग्रेसके मामलोंमें मैं उसी हद तक पड़ता हूं जहां तक मंत्रीपद ग्रहण करनेके सिलसिलेमें खड़े होनेवाले प्रश्नोंके बारेमें या पूर्ण स्वाधीनताके हमारे लक्ष्यको पहुंचनेके लिए अपनाई जानेवाली नीतियोंके बारेमें मेरी सलाहकी जरूरत हो।

लेकिन मुझे एसा मालूम होता है कि मेरे पास जो लोग लम्बे लम्बे पत्र भेज रहे हैं उनके खयालमें मंत्रीपद मानो पुरानी सेवाओंके बदलेमें मिलनेवाले पुरस्कार हैं जिनके लिए कुछ कांग्रेसी अपने दावे पेश कर सकते हैं। मैं उन्हें यह सुझानेका साहस करता हूं कि मंत्रीपद तो सेवाके द्वार हैं जिन लोगोंको वे सुपुर्द किये जायें उन्हें प्रसन्नता और पूरी योग्यताके साथ जनताकी सेवा करनी चाहिये। इसलिए इन पदोंके लिए आपसमें छीना-झपटी होनी ही नहीं चाहिये। विभिन्न हितों

को संतुष्ट करनेके लिए मंत्रीपदोंका निर्माण करना निश्चय ही गलती होगी। अगर मैं किसी प्रांतका प्रधानमंत्री होता और मेरे पास ऐसे दाव आते तो मैं अपने निर्वाचकोंसे कह देता कि वे किसी और आदमी को अपना नेता चुन लें। इन पदोंसे हमें चिपट नहीं जाना है बल्कि हलके हाथसे उन्हें पकड़े रहना है। ये तो कांटोंके ताज हैं या होने चाहिये। ये प्रसिद्धिके लिए कभी नहीं हो सकते। ये तो यह देखनेके लिए ग्रहण किये गये हैं कि अपने लक्ष्यकी ओर हम जिस गतिसे बढ़ रहे हैं उसमें इनसे कुछ जल्दी होती है या नहीं। ऐसी सूरतमें अगर स्वार्थी या गुमराह लोगोंको प्रधानमंत्रियों पर हावी होकर प्रगतिमें बाधा डालने दी गई तो वह बड़ी दुःखद बात होगी। जिन लोगोंसे अंतमें आकर मंत्रियोंको सत्ता हासिल होती है उनसे अगर आश्वासन मांगना जरूरी था तो आपसमें एक-दूसरेको समझने, अस्निग्ध रूपसे वफादार रहने और अनुशासनका स्वेच्छापूर्वक पालन करनेका आश्वासन पानेकी दूनी जरूरत है। कांग्रेसजनोंने अगर अपने व्यवहारमें काफी निःस्वार्थता अनुशासन और लक्ष्यप्राप्तिके लिए कांग्रेस द्वारा प्रतिपादित साधनोंमें अपना विश्वास प्रकट नहीं किया तो जिस विकट लड़ाईमें हमारा देश लगा हुआ है उसमें हमें विजय नहीं मिल सकती।

भले ही कराचीके प्रस्तावका जिसके कारण कांग्रेसके मातहत ग्रहण किये जानेवाले मंत्रीपदोंके लिए आर्थिक आकर्षण नहीं हो सकता। यहां मैं यह जरूर कहूंगा कि ५०० रु०की तनखाहको ज्यादासे ज्यादा समझनेके बजाय कमसे कम समझना गलती है। ५०० रु० तो आखिरी हद है। हमारे देश पर बहुत भारी भारी तनख्वाहोंका जो बोझ लदा हुआ है उससे हम अगर आदी न हो गये होते तो ५०० रु०की तनखाहको हमने बहुत ज्यादा समझा होता। कांग्रेसमें तो पिछले १७ सालोंसे आम तौर पर तनखाहकी कमसे कम दर ७५ रु० रही है। राष्ट्रीय शिक्षा खादी और ग्रामोद्योग कांग्रेसके जो तीन बड़े बड़े रचना

रमक अरिल भारतीय विभाग है, उनमें तनख्वाहका स्वीकृत दर ७५ रु० माहवार रही है। और इन विभागोंमें एसे व्यक्ति मौजूद है जो — जहां तक योग्यताका सम्बन्ध है — इतने योग्य है कि किसी भी दिन मंत्रीपदकी जिम्मेदारी संभाल सकते है। उनमें ख्यातिप्राप्त शिक्षाशास्त्री वकील, रसायनशास्त्री और व्यापारी है जो अगर चाहे तो आसानीसे ५०० रु० माहवारसे ज्यादा कमा सकते है। भला ममा कमन पर एसा फर्क क्यों आ जाना चाहिये जैसा कि हम आज देख रहे है? लेकिन अब तो शायद जो कुछ होना था वह हो चुका। मन जो बातें कही व तो मेरी व्यक्तिगत रायको ही प्रगट करती है। प्रधानमंत्रियोंके लिए मेरे मनमें इतना ज्यादा आदर है कि उनके निर्णय और उनकी बुद्धिमत्ता पर मैं शंका नहीं कर सकता। उनके सामने जो परिस्थितियां उपस्थित थी उनमें उनके खयालसे निःसन्देह यही सर्वोत्तम था। अपने पास आनेवाले पत्रोंके जवाबमें पत्रलेखकोंको जो बात मैं बताना चाहता हूं वह यह है कि इन पदोंको इनकी वजहसे मिलनेवाली तनखाह और भत्तेकी रकमके खातिर ग्रहण नहीं किया गया है।

और फिर दलमें से उन्हीं लोगोंको ये पद दिये जायगे जो कि इन पर आसीन होकर इनके द्वारा प्राप्त कर्तव्यका पालन करनेके लिए सबसे अधिक योग्य होंगे।

और अंतमें असली कसौटी तो यह है कि उसी दलके सदस्योंको इन पदोंके लिए चुना जाय जिसकी वजहसे प्रधानमंत्रियोंको अपना पद प्राप्त हुआ है। कोई भी प्रधानमंत्री अपने दलके ऊपर अपनी मर्जीके किसी पुरुष या स्त्रीको एक क्षणके लिए भी नहीं लाद सकता। वह तो इसीलिए प्रमुख है कि योग्यता व्यक्तियोंके ज्ञान तथा दूसरे जिन गुणोंसे नेतृत्व प्राप्त होता है उनके लिए उसे अपने दलका पूरा विश्वास प्राप्त है। १

२४

विजयकी कसौटी

मुझे अपनी यह राय जाहिर करनेमें कोई हिचकिचाहट नहीं हुई कि कांग्रेसके मंत्रियोंने अपने लिए जो वेतन लेनेका निश्चय किया है वह हमारे — अर्थात् संसारके इस सबसे अधिक दरिद्र देशके — पैमानेको देखते हुए बहुत ही अधिक है क्योंकि हमारा असली पैमाना तो वही होना चाहिये। प्रो० के० टी० शाहने जल्दी जल्दीमें एक टिप्पणी* तैयार करके मेरे पास भेजी है। उसमें उन्होंने बताया है कि हिंदुस्तानकी वार्षिक औसत आमदनी ४ पौंड और इंग्लैंडकी ५० पौंड है। दुर्भाग्य

---

*तुलनात्मक आंकडे

इसके साथ दुनियाके भिन्न भिन्न देशोंके कुछ मुख्य अधिकारियोंको दिये जानेवाले वार्षिक वेतन और भत्तोंकी यादी दी जा रही है। (ग्रेट ब्रिटन ८००० पौंड अमरिका १८००० पौंड फ्रांस २८००० पौंड आस्ट्रेलिया ८००० पौंड कनेडा १०००० पौंड, भारत १३०००० पौंड।) इन आंकडों परसे पूरी स्थिति समझमें नहीं आ सकती क्योंकि ये वेतन देशकी औसत आय पर कितने भाररूप हैं, यह बात ये आंकडे नहीं बता सकते। आज तकके निश्चित आंकडे मैं नहीं दे सकता, लेकिन मुझे जो याद हैं वे लगभग निश्चित हैं और उन परसे मैं यह कह सकता हूं कि भिन्न भिन्न देशोंकी वार्षिक आयके नीचे दिये जा रहे आंकडे बराबर हैं। वे इस प्रकार हैं:

ग्रेट ब्रिटन	पौंड	५०	आस्ट्रेलिया	पौंड	७०
अमेरिका		१००	कनेडा	"	७५
फ्रांस		४०	हिंदुस्तान	"	४ (आजके

भावोंके अनुसार अधिकसे अधिक)

जापानकी आय भी हिंदुस्तानकी अपेक्षा नहीं अधिक है।

(हरिजन २१-८-'३७, पृ० २१८) —के० टी० शाह

रा हमें अब भी कुछ समय अंग्रेजी विरासतका बोझ ढोना ही होगा। अपना शक्तिभर कोशिश करने पर भी आदर्श पैमाने पर हम आज नहीं पहुंच सकते। ये तनखाहें और भत्ते अब बदले नहीं जा सकते। पर अब सवाल तो यह है कि क्या ये मंत्री उनके सचिव और धारा सभाओंके सदस्य खूब परिश्रम करके अपनेको इन ऊंची तनखाहोंके पात्र सिद्ध कर देंगे? क्या धारासभाओंके सदस्य भी अब अपना पूरा समय राष्ट्रकी सेवामें देंगे और अपनी सेवाओं तथा समयका ठीक ठीक हिसाब पेश करेंगे? कोई यह कल्पना करनेकी भूल न करे कि जैसा भी कुछ हम चाहते हैं या जैसा होना चाहिये वैसा सब हो गया है।

फिर केवल यही काफी नहीं होगा कि मंत्रीगण सादगीसे रहें और केवल खुद ही खूब काम करते रहें। उन्हें यह भी ध्यान रखना होगा कि उनके अधीन काम करनेवाले विभाग भी ठीक उसी तरह काम कर रहे हैं जैसा कि वे चाहते हैं। उदाहरणके लिए अब जनताको न्याय जल्दी और कम खर्चमें मिल जाना चाहिये। आज तो वह अमीरोंके विलासकी वस्तु और जुएका खेल बन गया है। पुलिसका भय मिट जाना चाहिये और अब उसे जनताका मित्र बन जाना चाहिये। शिक्षामें भी ऐसी क्रांति होनी चाहिये कि वह साम्राज्यवादी लुटेरोंकी जरूरतोंकी नहीं, बल्कि गरीब ग्रामवासियोंकी जरूरतोंकी पूर्ति करने लगे।

अगर मंत्रियोंके बसकी बात होगी तो अब शीघ्र ही वे सब कैदी छोड़ दिये जायेंगे जिन्हें राजनीतिक अपराधोंके कारण — चाहे वे हिंसात्मक अपराध ही क्यों न हों — कैद कर लिया गया था। यह एक गंभीरतासे सोचनेकी बात है। क्या इसके मानी यह हैं कि अब सबको हिंसा करनेकी छूट मिल गई? हरगिज नहीं। यह कांग्रेसके अहिंसात्मक उद्देश्यके बिलकुल खिलाफ होगा। व्यक्तियोंकी हिंसासे जितनी अंग्रेज सरकारको — जिसे कांग्रेस उलटना चाहती है — घृणा है उससे कहीं अधिक घृणा खुद कांग्रेसको है। कांग्रेस इस हिंसाका प्रतिकार सत्ता अर्थात सुसंगठित हिंसा द्वारा नहीं परन्तु अहिंसा द्वारा करेगी। वह गुमराहोंको

मन्त्रीभावमें समझा-बूझा कर और हर प्रकारकी हिंसाके खिलाफ जोर दार और विचारपूर्ण लोकमत तयार करके उसे दूर करेगी। उसके उपाय निषेधात्मक ह दडात्मक नहीं। दूसरे शब्दोंमें, कांग्रेस सेनाबल पर भरोसा रखनेवाली पुलिसकी सहायतासे नहीं, बल्कि जनताकी सदिच्छा पर आधार रखनेवाले अपने नतिक बलसे शासन करेगी। वह आज जो शासन करने जा रही है उसका आधार शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित किसी महान सत्ताकी दी हुई शक्ति नहीं बल्कि उस जनताकी सेवा है जिसका वह अपने हर कार्यमें प्रतिनिधित्व करना चाहती है।

तमाम प्रकारके साहित्य पर लगाई गई बन्दी भी उठाई जा रही है। मेरा खयाल है कि इस साहित्यमें कुछ एसी भी पुस्तक होगी, जिनमें हिंसा अश्लीलता तथा जातीय विद्वेषका प्रचार भी होगा। कांग्रेस रा यके मानी हिंसा अश्लीलता और जातीय विद्वेष फलानेकी आजादी नहीं है। कांग्रेसका विश्वास है कि आपत्तिजनक साहित्य पर रोक लगानेमें सुशिक्षित नागरिक उसका पूरा साथ देंगे। मन्त्री भी अगर देखें कि उनके प्रान्तोंमें हिंसा जातीय विद्वेष या अश्लीलता बढ रहा है, तो तांजीरात हिन्द या एसे ही तमाम उपायोंका अवलम्बन लेनेसे पहले मैं यह आशा कर और चाहू कि कांग्रेस कमेटियां उनकी तत्काल और पूरी सहायता करेंगी। वे कांग्रेस कार्यसमितिसे भी सहायता मांगें। सचमुच कांग्रेसकी विजयकी कसौटी तो यही है कि वह किस हद तक पुलिस और सेनाको बेकार साबित कर देती है। और अगर वह ऐसा न कर सकी अगर ऐसे प्रसंग आ ही जायें जब पुलिस और सेनाकी सहायता लेना अनिवार्य हो जाय तो कहना चाहिये कि कांग्रेस बुरी तरह असफल हुई। इस मौजूदा विधानको तोडनेका सबसे उत्तम उपाय यही है कि कांग्रेस सेनासे किसी भी प्रकारकी सहायता न ले और यह सिद्ध करके दिखा दे कि वह अच्छी तरह शासन कर सकती है। पुलिससे भी, जिसका मन्त्रीभाव प्रकट करनेवाला कोई नया नामकरण किया जा सकता है, वह कमसे कम सहायता ले। १

२५

पद ग्रहणका मेरा अर्थ

श्री शंकरराव देव लिखते हैं

आक्षेपपत्र नहीं शीर्षक आपकी टिप्पणी (ह० से० २८-८-३७) के दूसरे पैरेमें आपने लिखा है — कांग्रेसके चुनाव घोषणापत्र और प्रस्तावोंकी दृष्टिसे भी मैं मंत्रीपद ग्रहण करनेका एक खास अर्थ लेता हूं। इसलिए पद-ग्रहणके अपने इस अर्थको मैं जनता और मंत्रियोंके सामने न रखूं तो वह ठीक नहीं होगा। मैंने जहां तक आपके आशयको समझा है पद-ग्रहणको आपने इसलिए आवश्यक समझा कि इससे रचनात्मक कार्यक्रममें सहायता मिलेगी तथा जनताकी सेवा करने तथा कांग्रेसकी शक्ति बढ़ानेका मौका मिलेगा। लेकिन मैं समझता हूं कि इस सम्बन्धमें आप अपना आशय जरा विस्तारसे समझा दें तो ज्यादा अच्छा होगा।

सही हो या गलत लेकिन १९२० से कांग्रेसके जैसे विचार रखने वाले लाखों-करोड़ों हिंदुस्तानियोंका यह दृढ़ मत रहा है कि अंग्रेजी हुकूमत हिंदुस्तानके लिए कुल मिलाकर शापरूप ही सिद्ध हुई है। और इस हुकूमतके टिके रहनेका कारण अंग्रेजी फौजें तो हैं ही पर साथ ही उसके लिए धारासभाएं उपाधियां अदालतें शिक्षासंस्थाएं और अर्थनीति भी उतनी ही जिम्मेदार हैं। कांग्रेस अन्तमें इस नतीजे पर पहुंची कि हमें बंदूकोंसे डरना नहीं चाहिये। इतना ही नहीं बल्कि जनताको उस सुसंगठित हिंसाका अंग्रेजी बंदूक जिसका एक नग्न प्रतीक मात्र है, प्रतिकार अपनी सुसंगठित अहिंसा द्वारा करना चाहिये और धारासभाओं आदिका प्रतिकार असहयोग द्वारा होना चाहिये। इस असहयोगका एक मजबूत और परिणामजनक विधायक पहलू भी था जिसे लोग रचनात्मक कार्य कहते थे। जिस हद तक यह १९२० का कार्यक्रम सफल हुआ उसी हद तक राष्ट्र भी सफल हुआ।

और यह नीति कभी बदली नहीं है। इसकी शर्तें भी कांग्रेसने उठाई नहीं हैं। बल्कि मेरा तो यह मत है कि तबसे जितने भी प्रस्ताव कांग्रेसने स्वीकार किये हैं वे सब इस मूलभूत नीतिके निषेधक नहीं बल्कि पूरक हैं, जब तक उनकी तहमें वही १९२० वाली वृत्ति मौजूद है।

१९२० की नीतिका मुख्य आधार राष्ट्रकी सुसंगठित अहिंसा था। अंग्रेजी शासन-प्रणाली पत्थरकी तरह जड़ हो नहीं बल्कि सजीव भी थी। परन्तु उसके पीछे काम करनेवाले स्त्री-पुरुष हृदयहीन नहीं थे। इसलिए हमारी अहिंसाका उद्देश्य तो यह था कि हम इस प्रणालीको चलानेवालोंका हृदय बदल दें, यह नहीं कि उनका नाश कर दें। फिर वे अपना हृदय चाहे खुशीसे बदलें या मजबूर होकर। अगर उन्होंने यह देखा — भले वे इसे न भी चाहते हों — कि हमारी अहिंसाके कारण उनकी बंदूकें, तोपें और वे तमाम चीजें जो उन्होंने अपनी सत्ताको मजबूत करनेके लिए निर्माण की थीं बेकार हो गई हैं, तो वे सिवा इसके कर ही क्या सकते हैं कि अटल नियतिके सामने अपना सिर झुकाकर या तो यहांसे चले जायं या अगर रहना ही पसंद करें तो हमारी शर्तों पर रहें, यानी हमारे मित्र बनकर हमसे सहयोग करें न कि शासक बनकर हम पर अपनी इच्छाएं लादें।

अगर कांग्रेसवाले इस मनोवृत्तिको लेकर धारासभाओंमें गये हैं और इसी मनोवृत्तिसे उन्होंने पद-ग्रहण किया है, और अगर अंग्रेज शासक भी कांग्रेसी मंत्रि-मण्डलोंको अनिश्चित काल तक बरदाश्त करते रहें तो समझना चाहिये कि कांग्रेस इस कानूनको तोड़ने और सम्पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करनेके मार्गमें काफी हद तक सफल हो जायगी। क्योंकि अगर मेरी बताई शर्तों पर काफी अरसे तक मंत्रि-मंडल कायम रहे तो निश्चय ही कांग्रेसकी शक्ति दिन दिन बढ़ती ही जायगी और अन्तमें जाकर वह ऐसी दुर्दमनीय हो जायगी कि उसके मार्गमें कोई खड़ा नहीं हो सकेगा। पर इस परिणतिकी सबसे पहली और अनिवार्य शर्त हमारी

जनता द्वारा अहिंसाका स्वेच्छापूर्वक पालन। इसके माने हैं समस्त जातियोंके बीच सम्पूर्ण मित्रता और सहयोग अस्पृश्यताका सम्पूर्ण नाश, नशेबाजों द्वारा अफीम और शराबका स्वेच्छासे त्याग स्त्रियोंकी सामाजिक गुलामीसे मुक्ति, गांवोंमें रहनेवाले करोड़ों श्रमजीवियोंकी उत्तरोत्तर कष्ट निवारण निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा — आज कलकी तरह नाममात्रकी नहीं बल्कि सच्ची जैसी कि मैंने बतानेकी साहस किया है और शिक्षा द्वारा ऐसे अंधविश्वासोंका क्रमशः निर्मूलन जो निश्चित रूपसे हानिकर सिद्ध हो चुके हैं, माध्यमिक शिक्षामें इस दृष्टिसे आमूल परिवर्तन कि वह मुट्ठीभर मध्यम वर्गकी नहीं बल्कि करोड़ों ग्रामवासियोंकी जरूरतोंकी पूर्ति कर सके न्याय विभागके अंदर भी ऐसा मौलिक परिवर्तन हो कि जिससे कम खर्चमें शुद्ध न्याय मिल सके और जेलोंका सुधार गृहोंमें परिवर्तन हो और वहां सजाके लिए नहीं बल्कि सम्पूर्ण शिक्षा पानेके लिए उन आदमियोंको भेजा जाय जिनको अब तक हम गलतीसे अपराधी कहते आये हैं परन्तु दरअसल जिनके दिमागमें तात्कालिक खराबी पैदा हो जाती है।

इस लम्बी-चौड़ी कार्य-योजनाको देखकर कोई डरे नहीं। अगर हम निश्चय कर लें तो मेरी बताई हुई इस योजनाके हर हिस्से पर बगैर किसी रुकावटके हम आज ही अमल शुरू कर सकते हैं।

पद-ग्रहणकी सलाह देते समय तक मैं शासन विधानको ध्यानसे पढ़ा नहीं था। लेकिन उसके बादसे अध्यापक के० टी० शाहकी लिखी 'प्रांतीय स्वायत्त शासन' पुस्तकका मैं ध्यानपूर्वक अध्ययन कर रहा हूं। यह पुस्तक नये विधानकी एक जोरदार निंदा है लेकिन कट्टर लोगोंकी दृष्टिसे वह एक सच्चा और न्यायपूर्ण निषेध है। किन्तु कांग्रेसके इन तीन महीनोंके संयमने सारे वायुमंडलको बदल दिया है। मुझे ऐसी एक भी बात इस कानूनमें नजर नहीं आती जो मंत्रियोंको सुझाये गये मेरे कार्यक्रमको आरंभ करनेमें बाधक हो। कानूनमें जिन विशेष अधिकारों और संरक्षणोंका उल्लेख है, उन पर अमल करनेका मौका तभी

आ सकता है जब कि देशमें हिंसा या अल्पसंख्यकों और तथाकथित बहुसंख्यक जातिके बीच संघर्ष — जो कि हिंसाका दूसरा नाम है — पैदा हो।

इस कानूनकी हरएक धारामें मुझे यह दिखाई देता है कि इसके बनानेवालेके मनमें हिंदुस्तानकी अपना शासन खुद करनेकी योग्यतामें घोर अविश्वास और अंग्रेजी हुकूमतको चिरस्थायी बनानेकी इच्छा है। परन्तु साथ ही इसके निर्माताओंने जनताको अंग्रेजोंके पक्षमें लानेके लिए एक साहसपूर्ण प्रयोग किया है और इसमें अगर वे सफल न हुए तो अंग्रेजी सत्ताको खतम करनेकी जनताकी इच्छाके वश होनेकी तैयारी भी उनकी है। इन लोगोंका दिल बदलनेकी दृष्टिसे ही कांग्रेसने धारा सभाओंमें जाना स्वीकार किया है और अगर वह अहिंसा असहयोग और आत्मशुद्धिकी सच्ची भावनासे काम करती रही, तो मुझे निश्चय है कि वह जरूर सफल होगी। १

२६
आलोचनाओंका जवाब

ता० १७-७-३७के 'हरिजन' में छपे मेरे कांग्रेसी मंत्रिमंडल शीर्षक लेखकी ओर लोगोंका ध्यान आकर्षित हुआ है और उस पर आलोचनायें भी हुई हैं जिनका उत्तर देना जरूरी है।

शराबबंदी

कहा जाता है कि पूर्ण शराबबंदी अगर संभव भी हो, तो वह एकदम कैसे की जा सकती है? एकदमसे मेरा मतलब यह है कि ऐसी घोषणा तुरन्त कर दी जाय कि १४ जुलाई १९३७ से — अर्थात् कांग्रेसके पहले मंत्रि-मंडलने जबसे सत्ता हाथमें ली उस दिनसे — लेकर तीन सालके अन्दर अंदर शराब वगैरा मादक द्रव्योंकी पूर्ण बंदी हो जायगी। मेरा तो खयाल है कि शराबबंदी दो सालके अन्दर ही हो

लिए उसका अधिकार ग्रहण तभी साथक कहा जायगा जब वह इस महानाशकार बुराईके साथ साहस और कठोरतासे युद्ध छेड देगी।

शिक्षा

शिक्षाका सवाल दुर्भाग्यवश शराबके साथ जोड दिया गया है। शराबकी आय यदि बन्द हो जाय तो शिक्षाका क्या होगा? निस्सन्देह नये कर लगानेके और भी तरीके हो सकते ह। अध्यापक शाह और खबाताने यह दिखाया भी है कि इस गरीब देशमें भी कुछ नये कर लगानेकी गुजाइश है। सपत्ति पर हमारे यहा अभी काफी कर नही लगा है। ससारके अन्य देशोंमें कुछ भी हो यहा तो व्यक्तियोके पास अत्यधिक सपत्तिका होना भारतका मानवताके प्रति एक अपराध ही समझा जाना चाहिये। अत सपत्तिकी एक निश्चित मर्यादाके बाद जितना भी कर उस पर लगाया जाय उतना थोडा ही होगा। जहा तक म जानता हू इग्लडमें व्यक्तिकी आय एक निश्चित सख्या तक पहुच जानेके बाद उससे आयका ७ प्रतिशत कर लिया जाता है। कोई कारण नही कि हिन्दुस्तानमें हम इससे भी काफी अधिक कर क्यो न लगायें? मृत्युकर भी क्यो न लगाया जाय? करोडपतियोके लडके जब बालिग होने पर भी विरासतमें मिली सपत्तिका उपभोग करते ह तो इस विरासतके कारण ही उन्हे नुकसान उठाना पडता है। इस तरह राष्ट्रकी दुगनी हानि होती है। जो विरासत वास्तवमें राष्ट्रकी होनी चाहिये वह राष्ट्रको नही मिलती दूसरे राष्ट्रको इस दृष्टिसे भी हानि होती है कि सपत्तिके बोझके नीचे दब जानेके कारण इन वारिसोके सपूर्ण गुणोका विकास नही हो पाता। इस बातसे मेरे तर्क पर कोई असर नही पडता कि प्रान्तीय सरकार मृत्युकर नही लगा सकती।

परन्तु समग्र राष्ट्रकी दृष्टिसे हम शिक्षामें इतने पिछडे हुए ह कि अगर शिक्षा प्रचारके लिए हम केवल धन पर ही निर्भर रहेंगे तो एक निश्चित समयके अदर राष्ट्रके प्रति अपने कर्तव्यका पालन करनेकी आशा हम इस पीढीमें तो कर ही नही सकते। इसलिए मने यह

मुझानेका साहस किया है कि शिक्षाको हमें स्वावलम्बी बना देना चाहिये। फिर भले ही लोग मुझे यह कहें कि मेरे भीतर रचनात्मक कार्यकी कोई योग्यता नहीं है।

मंत्रिमंडलोंके पक्षमें उनकी योजनाओंको सफल बनानेके लिए सिविल सर्विसकी सुसगठित बुद्धि चातुरी और संगठनशक्ति भी है। सिविल सर्विसके अधिकारियोंको तो यह कला याद है जिसकी सहायतासे ऐसी ऐसी शासन-नीतिको भी वे अमलमें ले आते हैं जो उनके लिए इक्का गवर्नर या वाइसराय बनाकर दे देते हैं। मंत्री एक निश्चित और विचारपूर्ण नीति निश्चित कर दें। फिर उस पर अमल करना सिविल सर्विसका काम रहेगा। उनकी ओरसे जो वचन दिये गये हैं उनका पालन करके सिविल सर्विसके अधिकारी उन लोगोंके प्रति उऋण हों जिनका वे नमक खा रहे हैं।

जेलें

जेलोंको दण्डगृहके बजाय सुधार-गृह बना देनेवाली मेरी सलाह पर बहुत टीका टिप्पणी नहीं हुई है। केवल एक टीका मैंने देखी है। अगर जेलें बेचने योग्य चीजें बनाने लगेंगी तो वे बाजारके साथ अन्यायमूलक प्रतिस्पर्धामें पड़ जायगी। परन्तु इस कथनमें कोई सार नहीं है। इसकी कल्पना मुझे १९२२ में ही थी जब मैं यरवडा जेलमें बंद था। अपनी इस योजना पर मैंने तत्कालीन होम मेम्बर जेलके तत्कालीन इन्स्पेक्टर जनरल और श्री सुपरिटेंडेंटोंके साथ भी जिनके मातहत उन दिनों क्रमशः यरवडा जेल रही बातचीत की थी। उनमें से एकने भी उस योजनामें कोई दोष नहीं बताया था। तत्कालीन होम मेम्बरको उसमें विशेष दिलचस्पी हो गई थी। उन्होंने मुझसे अपनी योजना लिखकर देनेको भी कहा था। शायद उस पर वे गवर्नरकी मंजूरी भी लेना चाहते थे। परन्तु गवर्नर महोदय एक ऐसे कैदीकी बात सुनना कैसे गवारा कर सकते थे जो कि जेलके ही प्रबन्धके विषयमें सूचनायें दे रहा हो? इसलिए मेरा वह योजना या हो

इनकार कर दी गई। पर उसके कर्ताको तो आज भी उसमें उतना ही विश्वास है जितना १९२२में था जब कि यह पहले-पहल बनाई गई थी। मेरी योजना नीचे दी जाती है :

जेलोंके वे तमाम उद्योग बंद कर दिये जायं जिनसे आवश्यक लाभ न होता हो और तमाम जेलोंको हाथ-कताई और हाथ-बुनाईका काम करनेवाली संस्थाओंमें बदल दिया जाय। जहां संभव हो वहां कपासकी खेतीकी भी शुरुआत की जा सकती है और ठेठ उत्तम कपड़ा बनानेतककी सब क्रियायें उनमें हों। मैं यह सूचित करना चाहता हूं कि इस कार्यके लिए आवश्यक हर प्रकारका बुद्धि-कौशल जेलोंमें पहलेसे ही मौजूद है। केवल योजक बुद्धि और इच्छाकी जरूरत है। कैदियोंको अपराधी समझनेके बजाय उन्हें एक प्रकारके अपंग समझा जाय। बाहर उनके लिए कोई भयंकर जीवनके समान न हो। जेलके अधिकारियोंको भी कैदियोंके मित्र और शिक्षक बन जाना चाहिये। हां, एक शर्त जरूर अनिवार्य हो कि जेलोंमें जो खादी बने उस सबको लागत मूल्य पर राज्य खरीद ले। राज्यकी जरूरतोंके बाद जो खादी बचे उसे कुछ अधिक कीमत पर जनतामें बेच दिया जाय, जिससे उसके नफेमें से एक बिक्री भंडारका खर्च निकल आय। इन सूचनाओंके स्वीकारसे जेलोंका गांवोंके साथ निकट सम्बन्ध स्थापित हो जायगा और ये गांवोंमें खादीका संदेश पहुंचानेका काम करेंगी। साथ ही जेलसे छूटे हुए कैदी राज्यके आदर्श नागरिक भी बन सकते हैं।

नमक

मुझे स्मरण दिलाया जा रहा है कि चूंकि नमक केन्द्रीय सरकारके मातहतका विषय है इसलिए प्रांतीय मंत्री इस विषयमें कुछ नहीं कर सकते। अगर वे सचमुच कुछ न कर सकें तो मुझे आश्चर्यके साथ दुःख भी होगा। प्रांतीय भूभागों पर भी केन्द्रीय सरकारकी सत्ता भले ही हो, पर प्रांतीय सरकारोंका यह भी तो कर्तव्य है कि वे अपने प्रजाजनोंकी अन्यायसे रक्षा करें, फिर चाहे वह अन्याय केन्द्रीय सरकार

द्वारा ही क्यों न हो रहा हो। इसलिए मन्त्रि-मण्डल अपने शासित क्षेत्रमें गरीब प्रजाके साथ होनेवाले अन्यायोंके खिलाफ जब शिकायत करे तो गवर्नरोंका यह कर्तव्य होगा कि वे अपने मन्त्रियोंका समर्थन करें। मन्त्रि-मंडल सावधानीसे काम लें तो मैं निश्चयके साथ कह सकता हूँ कि गरीब ग्रामीणोंके अपने लिए जरूरी नमक ले लेनेमें केन्द्रीय सरकार द्वारा कोई अनुचित रुकावट नहीं डाली जायगी। कमसे कम मुझे तो ऐसे अनुचित हस्तक्षेपका जरा भी भय नहीं है।

अन्तमें मैं इतना ही जोड़ना चाहता हूँ कि शराबबन्दी, शिक्षा और जेलोंके विषयमें मैंने जो कुछ कहा है वह इसीलिए कहा है कि कांग्रेसके मन्त्रीगण और इस विषयमें रस लेनेवाले प्रजाजन इस पर विचार करें। जो विचार दीर्घ कालसे मेरे मनमें बने रहे हैं उन्हें — भले वे आलोचकोंको कितने ही विचित्र, काल्पनिक या अव्यावहारिक क्यों न लगें — जनतासे छिपाये रखना उचित नहीं होगा। १

२७

कांग्रेसी मन्त्रियोंकी चौहरी जिम्मेदारी

कांग्रेसी मन्त्रियोंकी चौहरी जिम्मेदारी है। व्यक्तिगत रूपमें तो मन्त्री अमलमें अपने मतदाताओंके प्रति जिम्मेदार है। अगर उसे यह विश्वास हो जाय कि वह अब उनका विश्वासपात्र नहीं रहा है या जिन विचारोंके लिए वह चुना गया था वे उसने बदल लिये हैं, तो वह इस्तीफा दे देगा। सामूहिक रूपसे मन्त्री धारासभाके सदस्योंके बहुमतके प्रति जिम्मेदार हैं, जो चाहें तो अविश्वासके प्रस्ताव या ऐसे ही किसी उपायसे उन्हें पदच्युत कर सकते हैं। लेकिन कांग्रेसी मन्त्री अपने पद और जिम्मेदारीके लिए कांग्रेसकी प्रान्तीय समिति और महासमितिके प्रति भी जिम्मेदार हैं। जब तक ये सारेके सारे

सस्याएं मिलकर काम करती रहती है सब तरह मंत्रियोंको अपने कर्तव्य पालनमें आसानी रहती है।

लेकिन महासमितिकी हालकी बैठकसे मालूम हुआ कि उसके कुछ सदस्य कांग्रेसी मंत्रि मंडलोंसे और खासकर मद्रासके प्रधानमंत्री श्री राजगोपालाचार्यसे बिल्कुल सहमत नहीं थे। स्वस्थ पूरी जानकारीसे पूर्ण और संतुलित आलोचना सार्वजनिक जीवनका प्राण है। एक सर्वथा प्रजातंत्रवादी मंत्री भी जनताकी सतत निगरानीके बिना पथसे विचलित हो सकता है। लेकिन कांग्रेसी मंत्रि मंडलोंकी आलोचना करने वाला महासमितिका प्रस्ताव और उससे भी अधिक उस पर हुए भाषण सीमासे बाहर थे। आलोचकोंने तथ्योंको जाननेकी परवाह नहीं की। श्री राजगोपालाचार्यका उत्तर उनके सामने नहीं था। वे जानते थे कि श्री राजगोपालाचार्य वहां आने और अपने आलोचकोंको उत्तर देनेके लिए बहुत उत्सुक थे लेकिन गंभीर बीमारीके कारण वे आ नहीं सके। अपने प्रतिनिधिके प्रति आलोचकोंकी यह जिम्मेदारी थी कि वे इस प्रस्ताव पर विचार करना स्थगित कर देते। इस सम्बन्धमें पं० जवाहरलालने अपने विस्तृत वक्तव्यमें जो कुछ कहा है उन्हें चाहिये कि वे उसका अध्ययन करें और उसे हृदयगम करें। मेरा विश्वास है कि आलोचकोंने अपनी आलोचनाओंमें सत्य और अहिंसाकी सीमाको छोड़ दिया था। अगर उन्होंने महासमितिको अपने पक्षमें कर लिया होता तो कमसे कम मद्रासके मंत्रियोंको तो—जाहिरा तौर पर धारासभाके सदस्योंके बहुमतका पूर्ण विश्वास प्राप्त होते हुए भी—इस्तीफा दे देना पड़ता। निश्चय ही यह कोई वांछनीय परिणाम न होता।

मेरी रायमें इससे भी कहीं अधिक हानिकर मसूरवाला प्रस्ताव था और दुःखकी बात तो यह है कि किसीके जरा भी सत्य प्रकट किये बिना वह पास हो गया। मैं मसूरकी हिमायत नहीं करता। वहां बहुतसी बातें ऐसी हैं जिनमें मैं चाहता हूं कि महाराज सुधार करें। लेकिन कांग्रेसकी यह नीति है कि अपने विरोधीको भी उचित मौका दिया

जाय। मेरी रायमें मसूरवाला प्रस्ताव (देशी राज्योंमें) हस्तक्षेप न करनेके प्रस्तावके खिलाफ था। जहां तक मैं जानता हूं, वह प्रस्ताव कभी रद्द नहीं हुआ। वस्तुस्थितिके लिहाजसे महासमितिके सामने मसूरका मामला नहीं था। वह एक पूरी रियासतके रूपमें उस पर विचार करने नहीं जा रही थी। वह सिर्फ दमन-नीति पर विचार कर रही थी। प्रस्तावमें घटनाओंका सही स्थितिका उल्लेख नहीं था भाषण गुस्सेसे भरे हुए थे और उनमें मामलेके तथ्योंका विचार नहीं किया गया था। अगर महासमितिका ऐसा ही खयाल था, तो अपना फैसला सुनानेसे पहले उसे तथ्य मालूम करनेके लिए ज्यादा नहीं तो कमसे कम एक ही आदमीकी एक कमेटी नियुक्त करनी चाहिये थी। अगर उसे सत्य और अहिंसाका जरा भी खयाल है तो ऐसे मामलोंमें वह कमसे कम जो कर सकती है वह यह है कि पहले वह कार्य-समितिको उन पर अपना निर्णय घोषित करने दे और बादमें अगर जरूरत हो तो न्यायाधीशके रूपमें उसकी जांच करे। अपनी बातको सिद्ध करनेके लिए मैंने जान-बूझकर दोनों प्रस्तावोंके सम्बन्धमें तफसीलमें जानेसे अपनेको रोका है। मैं अपनी परिमित शक्तिको बचा रहा हूं और साथ ही इस मामलेको महासमितिके, जिसने कि १९२० से ऐसा अपूर्व महत्त्व प्राप्त किया है और जो पद-ग्रहणके प्रस्तावके बाद दुगुना हो गया है, सदस्योंकी दूरदर्शिता पर छोड़ता हूं। १

शराबबन्दी

शराबबंदी और सरकारी आय

या शराबबन्दीकी तारीफ तो हमेशा होता ही रही है। लेकिन सन् १९२० में उसे कांग्रेसके रचनात्मक कार्यका एक मुख्य अंग बनाया गया। इसलिए इसके किसी भी हिस्सेमें कांग्रेसके हाथमें सत्ता आते ही वह शराब वगैरा मादक वस्तुओंकी पूरी बन्दी नहीं करती तो कैसे काम चलता? कांग्रेसी शासनके छह प्रान्तोंमें मंत्रियोंको करीब ग्यारह करोड़ रुपयेका घाटा सहनेकी हिम्मत करनी पड़ी है। परन्तु कार्य समितिने अपने वचनकी पूर्ति तथा शराब और अन्य नशीली चीजोंके आदी बने हुए लोगोंके नैतिक और भौतिक कल्याणकी दृष्टिसे यह खतरा भी उठानेका साहस किया है।

मैं जानता हूँ कि बहुतसे लोगोंको यह सन्देह है कि शराबकी पूरी बन्दी कैसे होगी। उनका खयाल है कि उनके लिए आयके लोभको रोकना बड़ा कठिन होगा। उनकी दलील यह है कि नशेबाज लोग तो किसी भी प्रकारसे शराब या मादक वस्तुएं प्राप्त कर ही लेंगे और जब मंत्री लोग देखेंगे कि इस बन्दीके मानी तो केवल सरकारी आयकी कुरबानी ही है — इससे मादक वस्तुओंकी खपतमें भले ही वह गैर कानूनी हो कोई उल्लेखनीय कमी नहीं हुई है — तो वे फिर पापकी कमाई करनेके मोहमें फंस जायेंगे और यह हालत आजसे भी बुरी होगी।

अब सवाल यह है कि शराबसे होनेवाली आयका घाटा जो कुछ प्रान्तोंमें आयका एक तिहाई हिस्सा है किस प्रकार पूरा किया जाय? मैंने तो बगैर किसी हिचकिचाहटके यह सुझाया है कि हम शिक्षा पर किये जानेवाले खर्चमें कमी कर दें क्योंकि अक्सर इसकी पूर्ति आब

कारकी आयमे ही की जाती है। मैं अब भी यह कहता हूँ कि शिक्षा स्वावलम्बी बनाई जा सकती है। यह जरूर है कि यदि हम मान लें कि शिक्षा स्वावलम्बी हो सकती है तो भी वह एक दिनमें नहीं हो जायगी। मौजूदा भार और जिम्मेदारियोंको तो निबाहना ही होगा। इसलिए आयके नये साधन ढूंढने होंगे। मद्य, तम्बाकू— जिसमें बीडी भी शामिल है—आदि पर कर लगानेकी बात कुछ लोगोंने सुझाई है। अगर यह खयाल असम्भव हो या ऐसा समझा जाय तो फिलहाल खर्चकी पूर्तिके लिए थोडी मीयादवाले कर्ज निकाले जा सकते हैं। पर अगर यह भी सम्भव न हो तो केन्द्रीय सरकारसे प्रार्थना की जा सकती है कि वह अपने फौजी खर्चमें कमी करके उस बचतमें से हर प्रान्तको उसके अनुपातमें सहायता दे। और केन्द्रीय सरकार इस प्रार्थनाको कभी अस्वीकार नहीं कर सकेगी खास तौर पर जब प्रान्तीय सरकारें यह सिद्ध कर देंगी कि कमसे कम उनकी आन्तरिक सुरक्षा और शान्तिके लिए उन्हें फौजकी जरूरत नहीं है। १

शराबबन्दी और बजट

हम देखते हैं कि सभी लोग शराबबन्दीका कार्यक्रम पूरे बनिय पनकी भावनासे बना रहे हैं। उसमें हानिकारक पहलुओंका उन्हें ध्यान रहता है। मुझे आश्चर्य होता है कि अगर सभी शराबी और अफीमची एकाएक शराब और अफीमका परित्याग कर दें तो मंत्री क्या करेंगे? शायद यह उत्तर दिया जाय कि उस हालतमें कुछ-न-कुछ प्रबन्ध तो व करते ही। लेकिन स्वेच्छापूर्वक वे ऐसा क्यों नहीं कर डालते? अच्छाई तो निस्सन्देह किसी कामको स्वेच्छापूर्वक करनेमें ही है मजबूर होकर करनेमें नहीं। यह याद रखना चाहिये कि भूकम्पके कारण प्रान्तका सामाना आमदनीसे अधिक नुकसान हो जाने पर भी बिहारका कारबार बन्द नहीं हो गया था। और जब अकाल तथा बाढ़ोंसे गांवोंकी तबाही और बरबादी होनेके कारण सरकारी आमदनीमें कमी पडती

हैं तब हिन्दुस्तान भरकी सरकार क्या करती है? मैं तो यह मानता हूं कि कांग्रेसी सरकार आपके खातिर शराबबन्दीके काममें देर करके अपनी प्रतिज्ञाका अक्षरमें चाहे भंग न कर रही हो परन्तु उसकी भावनाका जरूर भंग कर रही है।

नये कर लगाकर वे आय प्राप्त कर सकते हैं और इसके लिए उन्हें म्युनिसिपालिटियोंके साथ बातचीत भी करनी चाहिये। शराबखोरी शहरोंमें बहुत ज्यादा है अतः इन शहरोंमें वे नये कर लगा सकती हैं। शराबबन्दीका लाभ उन लोगोंको प्रत्यक्ष रूपसे मिलता है जिनके कारखाने होते हैं और उनमें मजदूर काम करते हैं। ऐसे लोग यानी कारखानोंके मालिक निश्चय ही शराबबन्दीसे होनेवाली आमदनीकी कमी पूरी कर सकते हैं। अहमदाबादमें कुछ ही महीने शराबबन्दीका जो काम हुआ है उससे मालिक मजदूर दोनोंको आर्थिक लाभ हुआ है। इसलिए कोई वजह नहीं कि इस बहुमूल्य सेवाके लिए मालिकोंसे पैसा क्यों न वसूल किया जाय? इसी तरह आमदनीके और भी अनेक साधन आसानीसे ढूंढे जा सकते हैं।

मैंने तो यह सुझानेमें भी कोई पसोपेश नहीं किया कि जहां अतिरिक्त आयकी कोई अमली सूरत न हो वहां भारत सरकारसे सहायता या कमसे कम बिना ब्याज कर्ज देनेकी मांग की जाय। २

शराबबंदी और अर्थमंत्री

बम्बईमें शराबबंदी होनेसे सरकारकी आय बहुत घट जायगी। लेकिन अर्थमंत्रीको तो अपना आय-व्यय संतुलित करना ही होगा। इसके लिए उन्हें आयके दूसरे जरिये खोजने पड़ेंगे और नये कर लगाने पड़ेंगे। अतः जिन्हें यह बोझ बरदाश्त करना पड़े उन्हें इसकी शिकायत नहीं करनी चाहिये। यह सब कोई जानते हैं कि कर कितने ही उचित क्यों न हों किन्तु कोई उन्हें पसन्द नहीं करता। पर मुझे मालूम हुआ है कि अर्थमंत्रीने इस सम्बन्धकी सभी उचित आपत्तियोंका निराकरण कर दिया है। अतः जिन लोगों पर यह बोझ पड़े वे इस महान प्रयोगमें भागीदार होनेका विशेष अधिकार प्राप्त करनेका गर्व अनुभव

क्या न करें? अगर सभी नागरिकोंके आनंदके बीच शराबबंदीकी शुरुआत हो तो निश्चय ही वह दिन बम्बईके लिए बड़े गौरवका होगा। याद रहे कि यह शराबबंदी दूसरोंकी लादी हुई नहीं है। इसका आरंभ तो वे सरकार कर रहा है, जो जनताके प्रति जिम्मेदार है। १९२० से ही हमारे राष्ट्रीय कार्यक्रमका यह एक अंग रहा है। इस लिए २० वर्ष पहले राष्ट्रने निश्चित रूपसे जो इच्छा प्रकट की थी, उसकी ही अवसर मिलने पर यह पूर्ति हो रही है। ३

मंत्री और शराबबंदी

मंत्रियोंका कर्तव्य स्पष्ट है। उन्हें अपने कार्यक्रम पर अबाधित रूपसे अमल करते चले जाना चाहिये बशर्ते कि उनकी इसमें श्रद्धा हो। मद्य निषेध कांग्रेसके कार्यक्रमका एक सबसे बड़ा नैतिक सुधार है। पहलेकी सरकारोंने भी इसका मौखिक समर्थन किया था परन्तु गैर जिम्मेदार होनेके कारण न तो उनमें ऐसा करनेका साहस था और न उनके भीतर उस पर अमल करनेकी प्रेरणा ही थी। वे उस आयको छोड़नेके लिए तैयार नहीं थी जिसे वे बिना किसी प्रयासके प्राप्त कर सकती थी। इसके बजाय उसका जोड़ा जाता करनेके लिए वे ठहर नहीं सकती थी।

कांग्रेसी सरकारोंके पीछे लोकमत है। कार्यसमितिने बहुत सोच विचारके बाद शराबबंदीके सम्बन्धमें अपना आदेश निकाला है। इस पर अमल करनेका तरीका स्वाभाविक तौर पर मंत्रि-मंडलों पर छोड़ दिया गया है। बम्बईके मंत्री साहसपूर्वक पूरी सफलताकी आशासे अपने कार्यक्रमको अमलमें लानेका प्रयत्न कर रहे हैं। उनकी स्थिति बहुत कठिन है। किसी न किसी दिन उन्हें बम्बईका प्रश्न हाथमें लेना ही था। तब भी मंत्रियोंको उन्हीं निहित स्वार्थोंकी तरफसे जिन्हें शराब बन्दीकी नीतिसे सीधी हानि पहुंचनेका डर था होनेवाले विरोधका सामना करना पड़ता जैसा कि आज हो रहा है। कोई भी कांग्रेसजन मंत्रियोंको परेशान नहीं कर सकता। ४

२९

खादी

मंत्री और खादी

एसा प्रतीत होता है कि खादीको मानो हम मजाक कर रहे हैं। १५ अगस्तको किसीने चरखेको याद नहीं किया। मेरा बस चले तो मैं मंत्रियोंसे शपथ विधि करानेके पहले उनसे उसी हालमें आधा घण्टा यज्ञार्थ कताई करवाऊं और प्रार्थना करवाऊं। इसके बाद ही शपथ विधि पूरी होगी। १

मैं यह जानता हूं कि खादीमें एसी जीवित श्रद्धा कांग्रेसजनोंमें से बहुत कमको है। मंत्रीगण कांग्रेसी हैं। वे आसपासकी परिस्थितिसे प्रेरणा लेते हैं। अगर उन्हें खादीमें सजीव श्रद्धा हो तो वे उसे लोकप्रिय बनानेके लिए बहुत कुछ कर सकते हैं।

मैं बताऊं कि कांग्रेसी मंत्री और बस सभी मंत्री इस सम्बन्धमें क्या कर सकते हैं और उन्हें क्या करना चाहिये।

एक मंत्री एसा हो सकता है जिसका एकमात्र काम खादी और ग्रामोद्योगोंकी देखभाल करना हो। अतः इस कामके लिए एक अलग विभाग होना चाहिये। दूसरे विभाग उसे सहयोग दें। उदाहरणके लिए कृषि विभाग कपासकी पैदावारके विकेन्द्रीकरणकी एक योजना बनायेगा गांवोंके उद्योगके लिए कपासकी पैदावारके अनुकूल भूमिकी पैमाइश करेगा और पता लगायेगा कि उसके प्रान्तके लिए कितनी कपासकी जरूरत होगी। वह वितरणके लिए अनुकूल केन्द्रोंमें कपास जमा करके भी रखेगा। भंडार विभाग प्रान्तमें उपलब्ध खादी खरीदेगा और अपनी जरूरतके कपड़के लिए मांग पेश करेगा। उद्योग विज्ञानसे सम्बन्धित विभाग अपनी बुद्धिका उपयोग करके अधिक अच्छे चरखे और हाथके उत्पादनके अन्य औजार निकालेगा। ये सारे विभाग चरखा-संघ और

ग्रामोद्योग संघके साथ सम्पर्क रखेंगे और उन्हें उनके कामका निष्णात मान कर उनका उपयोग करेंगे।

माल मंत्री मिलके उत्पादनसे खादीकी रक्षा करनेके साधन खोज निकालेगा। २

एक मंत्रीका स्वप्न

'अगर आप प्रांतीय सरकारों और लोगोंको इस आशय का संदेशा या सूचना दें कि तमाम स्कूलोंमें लड़कों और लड़कियोंके लिए कताई और बुनाई लाजिमी कर देना चाहिये तो मेरा विश्वास है कि थोड़े ही समयमें स्कूलोंके बच्चे खुद अपना बनाया हुआ कपड़ा पहनने लग जायंगे। यह पहला कदम होगा। आपके आदर्शोंके विषयमें मेरी आज भी वैसी ही श्रद्धा है और मैं वह दिन देखनेकी आशा करता हूं जब हरएक घर अपना जरूरतका कपड़ा खुद बना लेगा और हरएक गांव भी अपनी ग्रामोद्योग तथा शिक्षाकी योजनाओंके अनुसार केवल कपड़ेमें ही नहीं बल्कि हरएक जरूरी चीजके सम्बन्धमें स्वावलम्बी बन जायगा। आपकी तरह मैं भी यह मानता हूं कि इस देशमें सच्चा स्वराज्य तभी स्थापित हो सकता है जब कि प्रांतीय सरकार अथवा भारत सरकारका बजट — जिसके पीछे मिलानेके लिए चालाकियां और करामातें करनी पड़ती हैं — ग्रामवासी जनताके बजटसे मेल खा जायगा।'

उपर्युक्त पत्र एक कांग्रेसी मंत्रीने लिखा है। मेरे पास यदि निरंकुश सत्ता हो तो मैं कमसे कम प्राइमरी स्कूलोंमें तो कताईको अवश्य लाजिमी कर दूं। जिस मंत्रीमें श्रद्धा हो उसे ऐसा करना चाहिये। हमारे स्कूलोंमें कितनी ही बेकार चीजोंको लाजिमी बना दिया जाता है तब इस अति उपयोगी कलाको लाजिमी क्यों न बना दिया जाय? लेकिन लोकतंत्रमें हम किसी चीजको जब तक वह विस्तृत रूपमें लोकप्रिय न हो लाजिमी नहीं बना सकते। इस तरह लोकतंत्रमें अनिवार्यता नामकी

ही होती है। यह आलस्यको तो उडा देती है पर लोगोंकी इच्छा पर जोर-जबरदस्ती नहीं करती। इस प्रकारकी अनिवार्यता शिक्षणकी एक क्रिया है। मैं इससे एक हल्का रास्ता सुझाता हूँ। सबसे अच्छे कातने वाले लड़के या लड़कियोंको इनाम मिलना चाहिये। इस प्रतिस्पर्धासे सब नहीं तो अधिकांश इसमें भाग लेनेके लिए प्रेरित होंगे। किसी भी योजनामें यदि शिक्षकोंकी खुद श्रद्धा न हो तो वह सफल होनेकी नहीं। प्रांतीय सरकार अगर बुनियादी तालीमको स्वीकार कर ले तो कताई आदि शिक्षाक्रमके केवल अंग ही नहीं बल्कि शिक्षाके वाहन बन जायंगे। बुनियादी तालीम अगर जड़ पकड़ ले तो हमारी इस पीड़ित भूमिमें खादी अवश्य सार्वत्रिक और अपेक्षाकृत सस्ती हो सकती है। २

मंत्रियोंका कर्तव्य

यह प्रश्न उचित ही है कि अब जब सत्ता कांग्रेसी मंत्रियोंके हाथमें आ गई है तो वे खादी और अन्य देहाती उद्योगोंके लिए क्या करेंगे। मैं प्रश्नको व्यापक बना कर भारतकी सारी प्रांतीय सरकारों पर लागू करना चाहूंगा। दरिद्रता सभी प्रांतोंमें एकसी है और जन साधारणकी दृष्टिसे कष्ट निवारणके उपाय भी एकसे हैं। चरखा-संघ और ग्रामोद्योग-संघ दोनोंका यही अनुभव है। यह सुझाव दिया गया है कि इस कामके लिए एक अलग मंत्री होना चाहिये क्योंकि इसको भलीभांति संगठन करनेके लिए एक मंत्रीका उसमें सारा समय लग जायगा। मुझे यह सुझाव देते हुए डर लगता है क्योंकि हमने अंग्रेजी पैमाने पर खर्च करना अभी तक नहीं छोड़ा है। मंत्री अलगसे नियुक्त किया जाय या न किया जाय पर एक अलग विभाग अवश्य ही इस कामके लिए जरूरी है। भोजन और वस्त्रकी कमीके इस कालमें यह विभाग बड़ीसे बड़ी सहायता कर सकता है। चरखा-संघ और ग्रामोद्योग-संघके मारफत मंत्रियोंको विशेषज्ञ तो उपलब्ध हो ही जायेंगे। इस समय कमसे कम पूंजी और समय लगा कर भारतकी खादीकी

कपड़ा पहना देना संभव है। प्रत्येक प्रांतीय सरकारको अपने ग्राम-वासियोंसे यह कहना होगा कि उन्हें अपने उपयोगके लिए अपनी खादी आप तैयार करनी है। इसमें स्थानीय उत्पत्ति और वितरणकी बात अपने आप आ जाती है। और कमसे कम कुछ माल निःसन्देह शहरोंके लिए बच रहेगा जिससे स्थानीय मिलों पर भी दबाव घट जायगा। फिर तो हमारी मिलें संसारके दूसरे भागोंमें कपड़ेकी कमी पूरी करनेमें भाग ले सकेंगी।

यह परिणाम कैसे लाया जा सकता है?

सरकारको ग्रामवासियोंको सूचना देनी चाहिये कि उनसे एक निश्चित तारीखके भीतर अपने गांवोंकी जरूरतका खद्दर तैयार कर लेनेकी आशा रखी जायगी। उस तारीखके बाद उन्हें कपड़ा मुहैया नहीं किया जायगा। सरकार अपनी तरफसे ग्रामवासियोंको जहां जरूरत होगी लागत कीमत पर कपास या कपासका बीज देगी और माल तैयार करनेके औजार भी लागत कीमत पर देगी जो पांच या अधिक वर्षोंमें आसान किश्तोंमें वसूल की जा सकती है। जहां आवश्यकता होगी सरकार उन्हें शिक्षक देगी और खादीका बचा हुआ माल खरीद लेनेका वचन देगी। शर्त यह होगी कि संबंधित ग्रामवासी अपनी कपड़ेकी जरूरत अपने ही तैयार किये हुए मालसे पूरी करें। इससे कपड़ेकी कमी शोरगुल मचाये बिना और बहुत थोड़े व्यवस्था-खर्चमें दूर हो जायगी।

गांवोंकी जांच-पड़ताल की जायगी और ऐसी चीजोंकी एक सूची तैयार की जायगी जो किसी मदद बिना या बहुत थोड़ी मददसे गांवोंमें तैयार की जा सकती हैं और जिनकी जरूरत गांवोंमें बरतनेके लिए या बाहर बेचनेके लिए हो। जैसे घानीका तेल, घानीकी खली, घानीमें निकला हुआ जलानेका तेल, हाथसे कुटा हुआ चावल, ताड़का गुड़, शहद, खिलौने, मिठाइयां, चटाइयां, हाथसे बना हुआ कागज, गांवका साबुन आदि। अगर इस तरह काफी ध्यान दिया जाय तो

उन गावामें — जिनमें से ज्यादातर उजड चुके हैं या उजड रहे हैं — जीवनकी चहल-पहल पैदा हो जाय और उनमें अपनी और हिन्दुस्तानके शहरों और कस्बोंकी बहुत ज्यादा जरूरतोंको पूरा करनेकी जो ज्यादासे ज्यादा शक्ति है वह दिखाई पडने लगे।

फिर हिन्दुस्तानमें अनगिनत पशु भी है जिसकी तरफ हमने ध्यान न देकर बडा अपराध किया है। गोसेवा-संघका अभी तक ठोस अनुभव नहीं है फिर भी वह इस कार्यमें कीमती मदद दे सकता है।

बुनियादी शिक्षाके बिना गाववाले विद्यासे खाली ही रहे हैं। यह जरूरी बात हिन्दुस्तानी तालीमी संघ पूरी कर सकता है। यह प्रयोग पहले ही कांग्रेसी सरकारोंने आरम्भ किया था पर कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डलोंके इस्तीफा देनेसे इस कामर्में गडबडी हो गई थी। अब वह तार फिर आसानीसे जोडा जा सकता है। ४

अगर मैं मन्त्री होता

ता० २९ से ३१ जुलाई (१९४६) तक पूनामें ग्रामोद्योगों और नई तालीमसे सम्बन्ध रखनेवाले मन्त्रियोंके साथ हुई बातचीतके कारण बहुतसा पत्र-व्यवहार और निजी वाद-विवाद चल पडा है। यह बहुत कुछ तो एक खादीको लेकर खडा हुआ है। इसलिए मैं इस सम्बन्धमें अपने विचार प्रांतीय सरकारों और खादीके प्रश्नमें दिलचस्पी रखनेवाले दूसरे लोगोंके मार्गदर्शनके लिए नीचे देता हूं।

२८ अप्रैल १९४६ के 'हरिजन' में मैंने 'मन्त्रियोंका कर्तव्य' नामक एक लेख लिखा था। उसमें मैंने जो विचार प्रगट किये थे उनमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। एक बातसे कुछ गलतफहमी पैदा हुई है। कुछ भाइयोंको उसमें जबरदस्ती दिखाई दी है। मुझे इस अस्पष्टताके लिए खेद है। उसमें मैंने इस प्रश्नका उत्तर दिया था कि आम लोगोंकी प्रतिनिधि सरकार यदि चाहें तो क्या क्या कर सकती हैं। मैंने मान लिया था — आशा है मेरी वह मान्यता क्षम्य थी — कि इन सरकारोंकी नोटिसोंको भी कोई जोर-जबरदस्ती नहीं

मानेगा। कारण किसी सच्ची प्रतिनिधि सरकारके प्रत्येक कार्यमें जिन निर्वाचकोंकी वह प्रतिनिधि है उनकी अनुमति मान ली जायगी। निर्वाचकोंका अर्थ होगा सारी जनता चाहे उसका नाम निर्वाचक सूचीमें हो या न हो। इस पृष्ठभूमिको खयालमें रखकर मैंने लिखा था कि सरकार ग्रामवासियोंको ऐसी सूचना दे दे कि एक निश्चित तारीखके बाद ग्रामवासियोंको मिलका कपड़ा नहीं दिया जायगा ताकि वे अपनी ही तैयार की हुई खादी पहन सकें।

मेरे पिछले लेखका (२८–४–४६) कुछ भी अर्थ हो मैं इतना कह देना चाहता हूँ कि सम्बन्धित लोगोंके स्वेच्छापूर्ण सहयोगके बिना खादी सबकी कोई भी अपनाई हुई योजना व्यर्थ सिद्ध होगी और वह उस खादीको मार डालेगी जिसे हम स्वराज्य प्राप्त करनेका साधन बनाना चाहते हैं। फिर तो खादीके बारेमें लोगोंका यह ताना सही होगा कि खादी हमें मध्यकालीन गुलामी और अज्ञानकी ओर ले जाती है। परन्तु मेरा विचार इससे विपरीत रहा है। जहाँ जबरन पैदा की जानेवाली या पहनी जानेवाली खादी हमारी गुलामीकी निशानी थी वहाँ सोच समझकर और स्वेच्छासे तैयार की जानेवाली खादी जो मुख्यतः अपने ही उपयोगके लिए हो हमारी आजादीकी निशानी है। स्वतंत्रता अगर सर्वांगीण स्वावलम्बनका विकास न करे तो उसका कोई अर्थ नहीं है। अगर खादी स्वतंत्र मनुष्यके अपने अधिकार और कर्तव्यकी निशानी न हो तो कमसे कम मुझे उसमें कोई दिलचस्पी न रहेगी।

मित्रभावसे टीका करनेवाले एक भाई पूछते हैं कि इस योजनाके अनुसार तैयार की गई खादी क्या बेची भी जा सकती है? मेरा उत्तर यह है कि यदि बिक्री उसका गौण उद्देश्य हो तो ऐसा किया जा सकता है लेकिन अगर बिक्री ही उसका एकमात्र या मुख्य लक्ष्य हो तो वह हरगिज नहीं बेची जा सकती। हमने बिक्रीके लिए खादी उत्पन्न करके अपना काम शुरू किया उसका कारण यह था कि उसके बारेमें तब हम दूर तक सोच नहीं पाये थे और यह भी था कि उस समय

हमें उसकी जरूरत थी। अनुभव एक महान शिक्षक है। उसने हमें अनेक बातें सिखाई हैं। उनमें से एक बड़ी बात यह है कि खादीका मुख्य उपयोग स्वयं अपने लिए उसका व्यवहार करना है। परन्तु यह भी उसका अंतिम उपयोग नहीं है। मेरा मन कल्पनाके मनोहर क्षेत्रको छोड़कर नीचेके पूछे गये प्रश्नका निश्चित उत्तर देना चाहिये।

संपूर्ण शासन-कार्यके केन्द्रके रूपमें गांवोंके पुनरुद्धारकी जिम्मेदारी संभालनेवाले मंत्रीकी हैसियतसे मेरा पहला काम यह होगा कि स्थायी राज्य कर्मचारियोंमें से इस कामके लिए मैं ईमानदार और निष्ठावान आदमी ढूंढ निकालूं। मैं उनमें से उत्तम लोगोंको चरखा संघ और ग्रामोद्योग संघसे जो कांग्रेसके बनाये हुए हैं संपर्क कराकर गांवोंके हाथ उद्योगोंको अधिकसे अधिक प्रोत्साहन देनेके लिए एक योजना प्रस्तुत करूंगा। मैं यह ध्यान रखूंगा कि ग्रामवासियों पर कोई जबरदस्ती नहीं की जायगी। उन्हें दूसरोंकी बेगार करनेके लिए मजबूर नहीं किया जायगा। और उन्हें अपना सब कुछ आप करना तथा भोजन वस्त्र और अन्य आवश्यक वस्तुओंके उत्पादनके लिए अपनी ही मेहनत और कुशलता पर भरोसा करना सिखाया जायगा। इस प्रकारकी योजनाको व्यापक बनाना होगा। इसलिए मैं अपने पहले आदमीको यह आदेश दूंगा कि वह हिंदुस्तानी तालीमी संघका काम देखे उसके अधिकारियोंसे मिले और समझे कि इस विषयमें उनको क्या कहना है।

मैं मान लेता हूं कि इस प्रकार तैयार की हुई योजनामें एक धारा यह होगी ग्रामवासी स्वयं यह घोषणा करें कि उन्हें एक निश्चित तारीखसे एक वर्षके बाद मिलके कपड़ेकी जरूरत नहीं होगी और यह कि अपना कपड़ा तैयार करनेके लिए उन्हें रुई ऊन और आवश्यक औजार तथा शिक्षाकी जरूरत है। ये चीजें वे दानके रूपमें नहीं लेंगे बल्कि आसान किस्तोंमें उनकी कीमत चुकानेकी शर्त पर लेंगे। इस योजनामें यह बात भी होगी कि वह किसी पूरे प्रान्त पर एकदम लागू नहीं होगी परन्तु शुरूमें उसके एक हिस्से पर ही लागू होगी। योजनामें

यह भी कहा जायगा कि चरखा-संघ इस योजनाको अमलमें लानेके लिए पथ-प्रदर्शन करेगा और आवश्यक सहायता देगा।

इस योजनाके लाभप्रद होनेका विश्वास हो जाने पर मैं कानून विभागकी सलाहसे उसे कानूनी रूप दूंगा और एक विज्ञप्ति निकालूंगा जिसमें योजनाकी बुनियादी बातोंका पूरा वर्णन होगा। ग्रामवासी मिल मालिक और अन्य लोग इसमें शरीक रहेंगे। विज्ञप्तिमें साफ बताया जायगा कि यह जनताका काम है भले ही उस पर सरकारकी मुहर लगी हो। सरकारी पैसा गरीबसे गरीब ग्रामवासियोंके कल्याणके लिए खर्च किया जायगा ताकि भरसक लोगोंको उससे अधिकसे अधिक लाभ पहुंचे। इसलिए वह शायद पूंजीका सबसे लाभप्रद नियोजन होगा जिसमें विशेषज्ञोंकी सहायता स्वेच्छापूर्ण होगी और व्यवस्था-खर्च कमसे कम होगा। विज्ञप्तिमें देश पर पड़नेवाले सारे भार और लोगोंको मिलनेवाले लाभका पूरा ब्योरा दिया जायगा।

मंत्रीके नाते मेरे लिए एकमात्र प्रश्न यह है कि चरखा-संघमें यह दृढ़ विश्वास और क्षमता है या नहीं जिससे वह खादीकी एक योजना तैयार करके उसे सफलता तक पहुंचानेका भार उठा सके। अगर उसमें यह दृढ़ विश्वास और क्षमता है तो मैं पूरे विश्वासके साथ अपनी छोटी नैयाको समुद्रमें उतार दूंगा। ५

सरकारी मालिकी बनाम सरकारी कंट्रोल

८, ९ और १० अक्तूबर (१९४६) को हरिजन बस्ती, किंग्सवे, नई दिल्लीमें अ० भा० चरखा-संघकी वार्षिक बैठक हुई। उसमें करीब ८० सदस्य हाजिर थे। चर्चाओंके फलस्वरूप एक बात यह सामने आई कि आज तक जिन बातोंकी चर्चा केवल सैद्धान्तिक दृष्टिसे की जाती थी, वे अब हमारी सरकारोंके आगे व्यावहारिक रूप ले रही हैं। चर्चाका एक विषय यह था कि मिलका कपड़ा खादीके साथ स्पर्धा न करे। इसलिए कुछ चुने हुए स्थानों पर मिलका कपड़ा न जाने दिया जाय और वहां कपड़ेकी नई मिलें खड़ी न की जायं, क्योंकि

मिलकी स्पर्धामें खादी जिन्दा नहीं रह सकती। गांधीजीने सुझाया कि जहां लोग वस्त्र-स्वावलम्बनका प्रयोग करनेको तैयार हों वहां सरकार मिलका कपड़ा न जाने दे। इसी तरह अगर प्रांतीय सरकार नई मिलें खड़ी करनेमें करोड़ों रुपये खर्च करेंगी तो ग्रामवासी खादीके बारेमें उनकी बात नहीं सुनेंगे। वे समझ जायेंगे कि असली चीज तो मिलका ही है। इसलिए यदि सरकारें सचमुच ही खादीको बचाना चाहती हैं तो उन्हें अपने प्रान्तमें नई मिलें न खड़ी करनेका फैसला करना ही होगा।

एक सज्जनने यह भी सुझाव रखा कि कपड़ेकी नई मिलों पर सरकारका अधिकार हो और यथासम्भव जल्दीसे जल्दी सरकार पुरानी मिलों पर भी अधिकार कर ले ताकि उनका मुनाफा पूंजीपतियोंकी जेबमें जानेके बजाय देशकी जेबमें जाय और मिलोंकी नीति पर भी जनताका नियंत्रण रहे। इस पर गांधीजीने समझाया कि जब एक ओर हम सरकारसे यह कहते हैं कि खादीका प्रचार करना हो तो कपड़ेकी नई मिलें खड़ी ही न करनी चाहिये तब दूसरी ओर उससे नई और पुरानी मिलोंका राष्ट्रीयकरण करनेकी बात कहना ठीक नहीं। मद्रासके प्रधानमंत्री श्री टी० प्रकाशमने यह घोषणा भी कर दी है कि उनके प्रान्तमें कपड़ेकी कोई नई मिलें खड़ी नहीं की जायगी। अब रही बात पुरानी मिलों पर सरकारी अधिकारकी। तो मुझे तो मिलों पर अधिकार करनेके बजाय सरकारकी कड़ी देखरेखमें मिलोंका चलना ही अधिक अच्छा लगता है। आज मिलों पर अधिकार करनेके लिए सरकारोंके पास पर्याप्त साधन नहीं हैं। हम तो सब काम शांतिसे करना चाहते हैं। अगर हम मिल मालिकोंको अपने ट्रस्टी बना लें तो वे और उनके कर्मचारी अपने आप समाजके नियंत्रणमें आ जायेंगे। मिल मालिक मिल चलायेंगे लेकिन मुनाफेका उतना ही हिस्सा उनकी जेबमें जायगा जो उनकी मेहनतके बदलेमें लोग उन्हें देना उचित समझेंगे। सच्चे मालिक मिलोंमें मजदूर बनेंगे। मैंने सुना है कि श्री टाटाकी एक मिलमें मजदूरोंको मुनाफेमें साझा मिला है। श्री जे० आर० डी० टाटाने मुनाफा बांटनेके

मौके पर जो भाषण दिया वह पढ़ने लायक है। इससे अधिक मिलपर और क्या अधिकार किया जा सकता है? इससे आगे जानेकी बात मेरे दिमागमें नहीं आती। अनेक मिल-मालिकोंने मुझसे कहा है कि अगर हम ऐसी योजना बनायें तो वे हमारे साथ सहयोग करेंगे तथा अपनी मिलोंके अधिक विस्तारको रोक देंगे। मिलों पर सरकार, चरखा-संघ और मिल-मालिकोंका संयुक्त नियंत्रण होनेकी बात मेरे गले नहीं उतरती। हमारा काम चरखा चलाना है मिल चलाना नहीं। जो चीज हमारे कार्यक्षेत्रकी नहीं है उसकी चर्चामें हम इतना समय क्यों दें? अगर आज सारी मिलें जलकर खाक हो जायँ तो मुझे जरा भी दुःख नहीं होगा। उसके बाद तो खादीको बढ़ना ही है। लेकिन अगर मिलें रहेंगी तो खादीका भला ही होगा। गरीबोंकी अन्नपूर्णाके नाते खादी मिलोंके साथ भी चल सकती है। पर उसके लिए चरखा-संघ जैसी बड़ी संस्थाकी जरूरत नहीं रहेगी। मेरे लिए तो इतना ही काफी है कि प्रान्तोंकी सरकारें मिलोंके बारेमें अपनी नीति निश्चित करते समय हमारी सलाह ले लिया करें। ६

हाथकता बनाम मिलका कपड़ा

मद्रासकी खबर आई कायम अभी पूँजीपतियोंको लाभ पहुँचानेवाली नई संस्थायें और वहाँके कुछ कांग्रेसी भी प्रान्तके प्रधानमंत्रीके खिलाफ हो गये हैं। मद्रासके अखबारोंकी कई कतरनें मेरे पास भेजी गई हैं। मुझे यह कहते दुःख होता है कि यह टीका मुझे स्वार्थ और अज्ञानसे भरी मालूम होती है।

इस झगड़ेमें मेरा नाम भी घसीटा गया है। चूँकि मैं प्रधानमंत्रीकी योजनाका समर्थक हूँ इसलिए इस महत्त्वके प्रश्नकी निष्पक्ष चर्चा पर उसका असर नहीं पड़ना चाहिए।

सीधा-सादा प्रश्न केवल यह है कि अगर मद्रास सरकार नई मिलोंके खुलनेमें बाधा दे, या पुरानी मिलोंको अपना माल बढ़ाकर दुगुना माल पैदा करनेमें मदद दे तो क्या खादी सामान्य जनतामें फ

सकेगी ? क्या गाववालोंको इतना भोला समझ लिया गया है कि एक खास लम्बाईका कपडा बुननके लिए जितनी कीमतका कपासका जरूरत होती है उससे भी कम कीमत पर उन्हें मिलका कपडा बेचा जाय तो वे इतनीसी बात भी नही समझेंगे कि यह खादीके साथ केवल खिलवाड किया जा रहा है ? जब जापानने अपना कपडा भारतमें भेजा था तब ऐसा ही हुआ था।

इसमें कोई शक नही कि मद्रासवाली योजना इसी गरजसे बनाई गई है कि किसान अपने खाली समयमें कताई करके अपने पहनने लायक कपडा खुद तयार कर लिया करे। लोग अपने खाली समयका उपयोगी राष्ट्रीय और प्रामाणिक श्रममें खर्च करें इसके लिए उन्हें समझाना क्या निरा शेखचिल्लीपन है ?

जब बुनकरोंके लिए कोई उपयोगी और ज्यादा लाभप्रद कामकी अच्छी योजना सामने आयगी उस समय मद्रास सरकारके खिलाफ आवाज उठाना उचित होगा। जो लोग सचाईके साथ देशकी सेवा कर रहे है उन्हें आदर्शवादी स्वप्नदर्शी पागल या धुनी कहकर उनकी बात पर ध्यान देनेसे इनकार करना मनोरंजनका कोई अच्छा साधन नही है।

पूजीपतियोको और समाजमें अपनी जगह बनाकर बैठे हुए लोगो को चाहिये कि वे गरीब ग्रामवासियोके खिलाफ खडे न हो और उन्हें इज्जतके साथ मेहनत करके अपनी दुर्दशाको सुधारनेसे न रोकें।

मद्रासवाली योजनामें नई मिलोंके बारेमें जो एक भारी दोष रह गया था उसे मैंने पकड लिया है। जब टेक्सटाइल कमिश्नरको दोनो चार्जे (चरखा और मिल) एक साथ चलानेकी गलती समझमें आ गई और चरखा-संघकी तयार की हुई योजनाकी व्यावहारिकता उन्हें जान पड़ी तो उन्होंने मद्रास सरकारसे उसकी सिफारिश की। अगर यह योजना व्यावहारिक या उपयोगी सिद्ध न हुई तो उससे टेक्सटाइल कमिश्नरकी नेकनामीको धक्का लगेगा—टीका करनेवालोको नही।

यह एक लोकतांत्रिक सरकार द्वारा आम जनताकी भलाईके लिए उठाया गया कदम है।

इसलिए जहां यह योजना अमलमें लाई जाय वहां कमसे कम बनकर लोगोंको तो इसे जरूर अपनाना चाहिये।

यह एक आदमीकी योजना नहीं परन्तु पूरी सरकारकी योजना होनी चाहिये।

उसके पीछे धारासभाका पूरा समर्थन होना चाहिये।

उसमें जबरदस्तीकी बू भी नहीं आनी चाहिये।

वह वास्तवमें अमलमें आने लायक और आम जनताके लिए लाभकारी होनी चाहिये।

योजनाकी सफलताकी ये सब शर्तें लिखित रूपमें रखी गई हैं। मैं समझता हूं कि विनोबाजी और आपसमें पूरी चर्चा करनेके बाद ही मद्रास सरकारने इन सबको ज्योंका त्यों मान लिया है।

याद रहे कि मद्रासकी वर्तमान मिलोंको अभी छुआ नहीं जायगा। अगर एक दिन यह योजना जंगलकी आगकी तरह फैली — और मुझे आशा है कि ऐसी चीज एक दिन जरूर सब जगह फैल जायगी — तो इसमें कोई शंका नहीं कि समूचे मिल-उद्योग पर उसका असर होगा। अगर ऐसा दिन कभी आये तो बड़से बड़े पूंजीपतिको भी उसके न आनेकी इच्छा नहीं करनी चाहिये।

तब सोचने योग्य प्रश्न केवल यही रह जाता है कि मद्रास सरकार ईमानदार और योग्य है या नहीं। अगर वह ऐसी नहीं है, तो सारी योजना गड़बड़में पड़ जायगी। और अगर सरकार ईमानदार और योग्य होगी तो इसे सबका आशीर्वाद मिलेगा और यह योजना जरूर सफल होगी। ७

३०

कांग्रेस सरकारें और ग्राम सुधार

अबकी कांग्रेसके मन्त्रियोंने प्रान्तोंके शासनकी बागडोर जो अपने हाथमें ली है वह कोई वैधानिक प्रयोग नहीं है। वह राष्ट्रको खड़ा करनेका एक कोशिश है। उनका काम तो यह है कि जनताके लिए जिस आज़ादीकी कल्पना कांग्रेसने की है उसको वे अमली रूप दें। ३१ जुलाई (१९४६) को जब अलग अलग प्रान्तोंके उद्योग विभागके मंत्री पूनाके कौंसिल हॉलमें मिले तो उनके सामने ये प्रश्न थे : आर्थिक नीतिका अन्त क्या होना चाहिये? जो समाज रचना हम करना चाहते हैं उसका स्वरूप क्या होना चाहिये? और आजकलके आर्थिक और प्रशासनिक संगठनमें ऐसी क्या क्या बातें हैं जो ग्राम-सुधारके मार्गमें रुकावट डालती हैं?

गांधीजी ३ मिनिट बोले। उन्होंने ग्रामोद्योगोंके बारेमें अपनी दृष्टि समझाई। उन्होंने कहा नई तालीम और ग्रामोद्योगोंके कार्यक्रम — जिसमें खादी भी शामिल है — के पीछे जो कल्पना है उसकी जड़ एक ही है। अर्थात् बड़े शहरोंके मुकाबलेमें गांवोंकी और यंत्रके मुकाबलेमें व्यक्तिकी प्रतिष्ठा और दरजेकी चिन्ता। इस बातने इस चिन्ताको और भी बढ़ा दिया है कि हिन्दुस्तान थोड़ेसे बड़े शहरोंमें नहीं बसता परन्तु अपने सात लाख गांवोंमें बसता है। समस्या गांवों और शहरोंके सम्बन्धोंमें फिरसे न्याय स्थापित करनेकी है। आजकल गांवोंके मुकाबले शहरोंका पलड़ा बहुत भारी है जो गांवोंको नुकसान पहुंचानेवाला है।

यंत्रोंका युग

गांधीजीने कहा : हमारे युगको यंत्रयुग कहा गया है क्योंकि हमारे आर्थिक जीवन पर यंत्रोंका शासन चलता है। कोई पूछ सकता

है — यंत्र क्या है? एक अर्थमें मनुष्य एक उत्तम यंत्र है। न उसकी कोई मिसाल हो सकती है न नकल हो सकती है।' लेकिन गांधीजीने यंत्र शब्दका उपयोग उसके व्यापक अर्थमें नहीं किया। उनका मतलब तो केवल ऐसे साधनसे था जो मनुष्य और पशुकी शक्तिकी कमियोंको पूरा करने या केवल उसे अधिक उपयोगी बनानेके बजाय उसकी जगह ही ले लेता है। यह यंत्रकी पहली विशेषता है। यंत्रकी दूसरी विशेषता यह है कि इसकी शक्तिकी वृद्धि या विकासकी कोई हद ही नहीं है। आदमीकी मेहनतके बारेमें यह नहीं कहा जा सकता। उसकी कुछ मर्यादा होती है जिसके आगे उसकी शक्ति या यांत्रिक कार्यक्षमता नहीं जा सकती। इसमें से यंत्रकी तीसरी विशेषता पैदा हुई है। ऐसा मालूम होता है मानो यंत्रका अपना कोई निश्चय-बल या अपनी आत्मा हो। यंत्र मानवके श्रमका शत्रु है। वह ज्यादातर ज्यादा आदमियोंकी जगह ले लेता है क्योंकि एक यंत्र अगर हजार नहीं तो सौ आदमियोंका काम तो करता ही है। नतीजा यह होता है कि बेकारों और अर्द्ध-बेकारोंकी फौज बनती ही जाती है। इसलिए नहीं कि यह आकस्मिक है बल्कि इसलिए कि यह यंत्रका नियम है। अमेरिकामें तो शायद यह चीज चरम सीमा तक पहुंच गई है। गांधीजीने कहा कि मैं आज ही नहीं परन्तु १९०८ से भी पहलेसे यंत्रके खिलाफ रहा हूं। तब मैं दक्षिण अफ्रीकामें था और मेरे चारों तरफ यंत्र ही यंत्र थे। लेकिन यंत्रोंकी प्रगतिने मुझ पर कोई असर नहीं डाला बल्कि यंत्रोंके प्रति मेरे मनमें घृणा ही पैदा की। तब मैंने यह जाना कि यंत्र करोड़ोंको दबाने और लूटनेका एक उत्तम साधन है। अगर समाजके घटक होनेके नाते सब मनुष्योंको समान होना है तो मानवकी अर्थ-रचनामें यंत्रका कोई स्थान नहीं हो सकता। मैं कहता हूं कि यंत्रने मनुष्यको जरा भी ऊंचा नहीं उठाया है। और अगर यंत्रको उसके उचित स्थान पर नहीं बिठाया गया तो वह लाभ पहुंचानेके बजाय मनुष्यको बिलकुल तबाह कर देगा। उसके बाद डरबन जाते हुए रास्तेमें

मने रस्किनकी 'अंटु दिस लास्ट' (सर्वोदय) नामक पुस्तक पढ़ी। और उसने तत्काल मुझे अपने वशमें कर लिया। मैंने स्पष्ट समझ लिया कि अगर मानव जातिको प्रगति करनी है और अगर उसका यह आदर्श हो कि सब मानव समान हों सब मानव भाई भाईकी तरह रहें तो उसे गूगा और लूले-लंगडोंको भी अपने साथ लेकर चलना होगा। क्या युधिष्ठिरने जो सत्यके देवता थे अपने वफादार कुत्तेको छोड़कर स्वर्ग जानेसे इनकार नहीं कर दिया था?

मन्त्रि-मडल और ग्रामोद्योग-संघ

यन्त्रयुगमें इन लगड़े-लूलोंके लिए कोई स्थान नहीं है। इसमें तो सबसे बलवान ही टिकता है और वह भी निबलोंको छोड़कर और उनकी गर्दन पर सवार होकर। गांधीजीने कहा 'आजादीकी मेरी यह कल्पना नहीं है। उसमें तो निबलसे निबलके लिए भी जगह है। इसके लिए यह जरूरी है कि जितने मनुष्य हैं उनकी मेहनतका हम पहले पूरा पूरा उपयोग कर लें और फिर जरूरत हो तो यन्त्र शक्तिका उपयोग करें।

इसी पृष्ठभूमिको सामने रखकर मैंने तालीमी संघ और अ० भा० ग्रामोद्योग-संघकी नींव डाली थी। इनका उद्देश्य है कांग्रेसको मजबूत बनाना जो वास्तवमें आम जनताकी संस्था है। कांग्रेसने इन स्वायत्त संस्थाओंकी रचना की है। कांग्रेसी मन्त्रि मंडल हमेशा और बिना किसी संकोचके इन संस्थाओंकी सेवा मांग सकते हैं। उनका अस्तित्व ग्रामवासियोंके लिए है और उन्हींकी सेवाके लिए वे परिश्रम करती हैं। ग्रामवासी ही कांग्रेसके मुख्य आधार हैं। कांग्रेसी मन्त्रि मंडलों पर किसी तरहका दबाव नहीं है। अगर वे इन संस्थाओंके सिद्धान्तोंमें विश्वास नहीं रखते तो उन्हें कांग्रेस कार्य समितिके द्वारा ऐसा स्पष्ट कह देना चाहिये। अगर किसी काममें दिल न लगे तो उसके साथ खिलवाड़ करना सबसे बुरी बात होगी। इस कार्यको उन्हें तभी हाथमें लेना चाहिये जब वे मेरे साथ यह मानते हों कि इसीमें देशका आर्थिक

और राजनीतिक भलाई समाई हुई है। उन्हें खुदको या दूसरोंको धोखा नहीं देना चाहिये।

धरती माता

खेती ग्रामोद्योगोंका आधार और उनकी बुनियाद है। कई साल हुए मैंने एक कविता पढ़ी थी जिसमें किसानको दुनियाका पिता कहा गया है। अगर ईश्वर दाता है तो किसान उसका हाथ है। हम पर उसका जो ऋण है उसे चुकानेके लिए हम क्या करनेवाले हैं? अभी तक तो हम उसकी गाढ़े पसीनेकी कमाई ही खाते रहे हैं। हमें खेतीसे अपना काम शुरू करना चाहिये था लेकिन हम ऐसा कर न सके। इस दोषमें अंशतः मेरा भी हाथ है।

गांधीजीने कहा कि कई लोग यह कहते हैं कि जब तक राजनीतिक सत्ता हमारे हाथमें न आ जाय तब तक खेतीमें कोई बुनियादी सुधार नहीं हो सकता। इन लोगोंका स्वप्न यह है कि भाप और बिजलीका व्यापक पैमाने पर उपयोग करके यंत्रकी शक्तिसे खेती की जाय। मेरी इन लोगोंको यह चेतावनी है कि अगर वे जल्दी जल्दी उत्पादन बढ़ानेके प्रलोभनमें पड़ कर जमीनके उपजाऊपनका सौदा करेंगे तो यह विनाशक और अल्पदृष्टिकी नीति होगी। इसका परिणाम यह होगा कि जमीनका उपजाऊपन कम होता जायगा। अच्छी जमीनसे अन्न पैदा करनेके लिए पसीना बहाना पड़ता है।

लोग शायद इस दृष्टिकी टीका करें और यह कहें कि इससे काम धीमा होगा और प्रगतिके मार्ग पर आगे जानेवाला नहीं होगा और न इससे जल्दी कोई बहुत बड़ा नतीजा निकलनेकी आशा रखी जा सकती है। फिर भी मैं कहता हूँ कि जमीन और उस पर रहनेवाले मनुष्योंकी समृद्धिकी कुंजी इसी दृष्टिमें है। स्वास्थ्य और शक्ति देनेवाला भोजन ग्राम्य अर्थ-व्यवस्थाका केन्द्र है। किसानकी आयका ज्यादा भाग उसके और उसके परिवारके भोजन पर ही खर्च होता है। बाकी सब बातें उसके बाद आती हैं। मेहनत करनेवालेको अच्छा भोजन मिलना

चाहिये। उसे ताजे और शुद्ध घी, दूध और तेल काफी मात्रामें मिलने चाहिये। और अगर वह मांस खाता हो, तो उसे मछली, अंडे और मांस भी मिलने चाहिये। अगर उसे पेटभर अच्छा पौष्टिक भोजन न मिले तो उसके पास अच्छे कपड़े होनेका क्या अर्थ है? इसके बाद पीनेका पानी मुहैया करनेका प्रश्न और दूसरे प्रश्न आयेंगे। इन प्रश्नोंका विचार करते हुए स्वभावतः ऐसे प्रश्न भी निकल आयेंगे कि ट्रैक्टरसे जमीनमें हल चलाने और यंत्रसे जमीनका पानी देनेका तुलनामें कृषि-अर्थशास्त्रमें उनका क्या स्थान है। इस तरह एक एक करके ग्राम्य अर्थरचनाकी पूरी तसवीर हमारे सामने उभर आयेगी। इस तसवीरमें शहरोंका भी उचित स्थान होगा और वे आजकी तरह राज्यसंस्था पर उठे हुए फोड़ोंकी तरह या अस्वाभाविक घन घावोंकी तरह नहीं दिखाई देंगे। अंतमें गांधीजीने कहा: "आज इस बातका खतरा पैदा हो गया है कि कहीं हम हाथोंका उपयोग करना ही न भूल जायें। मिट्टी खोदना और जमीनकी देखभाल करना भूलनेका अर्थ होगा स्वयंको भूल जाना। अगर आप यह समझें कि केवल शहरोंकी सेवा करके आपने मंत्रीपदका कर्तव्य पूरा कर दिया, तो आप इस बातको भूल जाते हैं कि हिन्दुस्तान असलमें अपने सात लाख गांवोंमें बसा हुआ है। अगर किसी आदमीने सारी दुनिया पा ली, लेकिन इस सौदेमें अपनी आत्मा खो दी, तो उसे क्या लाभ हुआ?"

इसके बाद गांधीजीसे प्रश्न पूछे गये।

उपाय

प्र० — आपने शहरोंको राज्यसंस्थाके फोड़े कहा है। इन फोड़ोंका क्या किया जाय?

उ० — अगर आप किसी डॉक्टरसे पूछेंगे, तो वह आपको यह इलाज बतायेगा कि फोड़ेको चीरकर या पलस्तर और पुल्टिस बांधकर अच्छा करना होगा। एडवर्ड कारपेन्टरने सभ्यताको ऐसा रोग कहा है जिसका इलाज किया जाना चाहिये। बड़े बड़े शहरोंकी बढ़ती इस

रोगका ही चिह्न है। कुदरती उपचारमें विश्वास रखनेवाला होनेके कारण मैं तो इसी बातके पक्षमें हूँ कि संपूर्ण व्यवस्थाकी सामान्य शुद्धि की जाय और कुदरती मार्गसे इस रोगका भी इलाज किया जाय। अगर शहरवालोंके हृदय गांवोंमें रम गये और वे वास्तवमें ग्राम्य मानसवाले बन गये तो बाकी सब बातें अपने आप हो जायगी और फोड़ा जल्दी ही भरकर अच्छा हो जायगा।

प्र० — आजकी परिस्थितियोंमें ग्रामोद्योगोंको विदेशी और देशी कारखानोंके मालके आक्रमणसे बचानेके लिए क्या क्या व्यावहारिक कदम उठाये जा सकते हैं?

उ० — मैं सिर्फ मोटी मोटी बातें बता सकता हूँ। अगर आपको अपने हृदयमें ऐसा लगा हो कि आपने शासनकी बागडोर इसलिए हाथमें ली है कि आप आम जनताके हितका प्रतिनिधित्व और रक्षा करें, तो आप जो कुछ भी करेंगे — चाहे कानून बनायें, आर्डिनेन्स निकालें, हिदायतें दें — उसमें गांववालोंकी चिन्ता ही नजर आयगी। उनके हितोंकी रक्षा करनेके लिए आपको वाइसरायकी स्वीकृतिकी जरूरत नहीं है। मान लीजिये कि आप कतवैयों और बुनकरोंको मिलोंकी स्पर्धासे बचाना चाहते हैं और आप लोगोंकी कपड़ेकी तंगीकी समस्या हल करना चाहते हैं, तो आप लाल फीताशाहीको अलग हटाकर मिल-मालिकोंको बुलायेंगे और समझायेंगे कि अगर वे यह नहीं चाहते कि आप शासनकी बागडोर छोड़ दें, तो उन्हें उत्पादनकी अपनी नीतियोंका मेल जनताकी जरूरतोंके साथ बैठाना होगा। आप जनताके रक्षक और प्रतिनिधि हैं। आप मिल-मालिकोंसे कहेंगे कि वे उस क्षेत्रमें मिलका कपड़ा न भेजें जहां हाथसे कपड़ा तैयार किया जाता है; या उनसे कहेंगे कि वे उन खास प्रकारकी चीजका सूत और कपड़ा न बनायें जो हाथ-करघेके बुनकरोंके क्षेत्रमें आता है। अगर आप यह बात उनसे सच्चे मनसे कहेंगे, तो उन पर आपके कहनेका प्रभाव पड़ेगा और वे आपके साथ सहयोग करेंगे — जैसे उन्होंने कुछ समय पहले किया था जब

भारतको अकालसे बचानेके लिए उन्होंने अतिरिक्त चावलके बदलेमें इंडोनेशियाको मजदूरोंके लिए कपड़ा लिया था। परन्तु पहले आपको यह विश्वास पक्का होना चाहिये फिर तो सभी बातें ठीक हो जायगी। १

३१
कांग्रेसी मन्त्रि-मंडल और नई तालीम

सन् १९४० में जब सात प्रान्तोंके कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डलोंने इस्तीफा दिया तो वहां १९३५ के भारतीय शासन विधानकी ९३ वी धाराका गवर्नरी राज्य कायम हुआ। उन राज्योंमें कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डलों द्वारा शुरू की गई नई तालीमकी योजनाओं और शराबबन्दी ग्राम-सुधार तथा देहातके बुनियादी उद्योगोंको फिरसे जिलानेके कार्यक्रमको सबसे बड़ा धक्का पहुंचा। कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डलोंने जब फिरसे शासनकी बागडोर अपने हाथमें ली तो कुदरती तौर पर सबसे पहले उन्होंने अपने प्रयोगोंकी बची-खुची निशानियोंको बरबादीसे बचानेके लिए १९४० में छोड़ हुए कामोंको फिरसे हाथमें लेनेकी तरफ ध्यान दिया।

श्री बालासाहब खेरका न्योता पाकर कांग्रेसी प्रान्तोंसे आम हुए शिक्षा विभागके मन्त्रियोंकी एक कान्फरेन्स श्री खेरकी अध्यक्षतामें पूनाके कौंसिल हालमें २९ और ३० जुलाई १९४६ को हुई। न्योता तो सभी प्रान्तोंके मन्त्रियोंको दिया गया था लेकिन उनमें से दो प्रान्तके मन्त्री कान्फरेन्समें शरीक न हो सके। २९ जुलाईको तीसरे पहर गांधीजी एक घन्टे भी ज्यादा कान्फरेन्समें बैठे थे। सरकारों और उनसे जुड़ी हुई संस्थाओंमें नई तालीमके प्रयोगको जरूर धक्का लगा था। लेकिन तालीमी संघमें जो गांधीजीकी दूरन्देशीसे हर मुसीबतका सामना करनेके लिए पूरी तरह तैयार था वह प्रयोग उसी तरह चलता रहा। पहले सात साल पूरे हो जानेसे नई तालीमकी उमर पुख्ता हो चुकी है।

सबमें अच्छे हाथ-उद्योग हैं। लेकिन जिस तरह बीमार हाथ-उद्योगके जरिये तालीम दी जाय यह बात मैं काम करनेवालों पर ही छोड़ दूंगा। क्योंकि मेरा यह पूरा विश्वास है कि जिसके भीतर जल्दी खूबियां होंगी वही हाथ-उद्योग आदिमें जिंदा रहेगा। इन्स्पेक्टरों और शिक्षा विभागके दूसरे अधिकारियोंका यह कर्तव्य है कि वे गांवों और स्कूलोंके शिक्षकोंके पास जायें और प्रेमसे दलीलें दे देकर सरकारके शिक्षा विभागकी नई नीतिकी कीमत और उससे होनेवाले लाभ उन्हें समझायें। ऐसा करनेमें जबरदस्ती कभी न की जाय। अगर इस नीतिमें उनकी श्रद्धा नहीं है या वे ईमानदारीसे इस पर अमल करना नहीं चाहते तो मैं उन्हें इस्तीफा देकर चले जानेकी छूट दूंगा। लेकिन अगर मंत्री अपना कर्तव्य समझ लें और इस नीतिको अमली रूप देनेकी कोशिश करें तो यह नौबत ही न आय। सिर्फ आदेश निकाल देनेसे काम नहीं चलेगा।

युनिवर्सिटी शिक्षाकी कायापलट

प्रौढ़ शिक्षाके बारेमें मैंने जो कहा वह युनिवर्सिटी शिक्षा पर भी उसी तरह लागू होता है। उसका हिन्दुस्तानकी जरूरतोंके साथ पूरा पूरा मेल बैठना चाहिये। इसलिए युनिवर्सिटीकी शिक्षा नई तालीमके सिलसिलेमें जारी रहनेवाला उसका विस्तृत रूप ही होना चाहिये। यही मेरा बातका असली मुद्दा है। अगर इस बारेमें आप मुझसे पूरी तरह एकमत नहीं हैं तो मुझे डर है कि मेरी सलाहसे आपका कोई लाभ नहीं होगा। लेकिन अगर मेरे साथ आप भी इस बातको मानते हैं कि आजकी युनिवर्सिटी शिक्षाने हमें आजादीका रास्ता दिखानेके बजाय गुलाम ही बनाया है तो मेरी तरह आप भी उसे पूरी तरह बदल डालने और देशकी जरूरतोंके अनुसार नया रूप देनेके लिए उतावले हो उठेंगे।

आज युनिवर्सिटीमें शिक्षा पाये हुए हमारे नौजवान या तो सरकारी नौकरियोंके पीछे मारे मारे फिरते हैं या उसमें असफल होकर

लोगोंको लूट-पाटके लिए भड़काकर अपनी क्षुधा मिटाते हैं। लोगोंसे भीख मांगने या उनके टुकड़ोंके मोहताज बननेमें भी वे शर्म महसूस नहीं करते। उनकी दुर्दशाकी भी कोई हद है! आज युनिवर्सिटियोंको चाहिये कि वे देशकी आजादीके लिए जीने और मरनेवाले जनताके सेवक तैयार करें। इसलिए मेरी राय है कि तालीमी संघके शिक्षकोंकी मददसे युनिवर्सिटी शिक्षाको नई तालीमके साथ जोड़कर उसकी लाइनमें ले आना चाहिये।

आपने लोगोंके प्रतिनिधियोंके नाते शासनकी बागडोर संभाली है। इसलिए अगर आप लोगोंको अपने साथ नहीं ले सके तो आपके आदेश कौंसिल हॉलकी चहारदीवारीके आगे नहीं बढ़ पायेंगे। आज बम्बई और अहमदाबादमें जो कुछ हो रहा है उससे अगर यह जाहिर होता है कि लोगों परसे कांग्रेसका प्रभाव उठ गया है तो वह बुरा शकुन ही कहा जायगा। नई तालीम आज भी एक कमजोर पौधा ही है फिर भी वह भविष्यमें बड़े भारी वृक्षका रूप लेगा। लेकिन अगर जनता उसे पसन्द न करे तो मन्त्रियोंके आदेशोंके सहारे वह पनप नहीं सकता। इसलिए अगर आप जनताको अपनी रायकी नहीं बना सकते, तो मैं आपको सलाह दूंगा कि आप इस्तीफा दे दें। आपको अराजकतासे डरना नहीं चाहिये। आप लोग अपनी बुद्धिके कहे अनुसार अपना कर्तव्य पूरा करें और बाकी सब भगवानके भरोसे छोड़ दें। उस अनुभवसे भी लोग सच्ची आजादीका सबक सीखेंगे।

इसके बाद गांधीजीने लोगोंसे प्रश्न पूछनेके लिए कहा। पहला प्रश्न था — क्या स्वावलम्बनके सिद्धान्तके बिना भी नई तालीम दी जा सकती है?

गांधीजीने उत्तर दिया — आप बेशक इसकी कोशिश कर सकते हैं। लेकिन अगर आप मेरी सलाह पूछेंगे तो मैं यही कहूंगा कि ऐसी हालतमें आपको नई तालीमको पूरी तरह भूल जाना ही बेहतर होगा। स्वावलम्बन मेरे लिए नई तालीमकी पहली बात नहीं, बल्कि उसकी

सच्ची कसौटी है। इसका मतलब यह नहीं कि नई तालीम शुरूसे ही स्वावलम्बी बन जायगी। नई तालीमकी योजनाके अनुसार सात सालके पूरे अरसेमें आय और खर्चका हिसाब बराबर बैठना चाहिये। नहीं तो विद्यार्थियोंकी ट्रेनिंग पूरी होनेके बाद यही साबित होगा कि नई तालीम उन्हें जीवनकी तालीम नहीं दे सकती। स्वावलम्बनके बिना नई तालीम वैसी ही मानी जायगी जैसे बिना प्राणका शरीर।

इसके बाद और भी प्रश्नोत्तर हुए।

प्र०—हमने बुनियादी हाथ उद्योगके जरिये शिक्षा देनेका सिद्धान्त मान लिया है। लेकिन मुसलमान किसी वजहसे चरखेके खिलाफ हैं। जिन जगहोंमें कपास पैदा होता है वहां तो आपका कताई पर जोर देना ठीक मालूम होता है। लेकिन क्या आप इस बातको नहीं मानते कि जहां कपास पैदा नहीं होती वहां चरखे और कताईके लिए कोई जगह नहीं है? क्या ऐसी जगहोंमें कताईके बजाय कोई दूसरा हाथ उद्योग नहीं लिया जा सकता, उदाहरणके लिए खेती?

उ०—यह बहुत पुराना प्रश्न है। कोई भी बुनियादी हाथ उद्योग जिसके जरिये शिक्षा दी जाय सब जगहके लिए उपयुक्त होना चाहिये। सन १९०८में ही मैं इस नतीजे पर पहुंच गया था कि हिंदुस्तानको आजाद करने और उसको अपने पांव पर खड़ा होने लायक बनानेके लिए उसके हर घरमें चरखा चलना चाहिये। कपासकी एक डोडी भी पैदा न करके अगर इंग्लैंड सारी दुनियाको और हिंदुस्तानको कपड़ा भेज सकता है तो सिर्फ पड़ोसके प्रांत या जिलेसे कपास मंगाकर भी क्या हम अपने घरोंमें कताई शुरू नहीं कर सकते? सच पूछा जाय तो पुराने जमानेमें हिन्दुस्तानका एक भी ऐसा हिस्सा नहीं था जहां कपास न पैदा की जाती हो। सिर्फ कपास पैदा कर सकनेवाली धरतीमें ही कपास पैदा की जाय यह हानिकारक बात तो हालमें ही सूती माल तैयार करनेवाले निहित स्वार्थोंने हिंदुस्तान पर जबरन लादी है। ऐसा करनेमें उन्होंने गरीब टैक्स देनेवालों और सूत कातनेवालोंके

जिनकी जरा भी परवाह नहीं की। आज भी बढ़िया कपास हिंदुस्तानमें हर जगह मिलती है। ऐसी लचर दलीलें यह साबित करती हैं कि कोई कठिन काम हाथमें लेनेकी और मौका आने पर नये-नये साधन खोज निकालनेकी हममें योग्यता नहीं है। अगर कच्चे मालको एक जगहसे दूसरी जगह ले जानेके कामको दूर न की जा सकने वाली अड़चन मान लिया जाय तो सारे कारखाने बंद हो जायँ।

इसके अलावा किसी आदमीका उसकी कोशिशसे अपना तन ढकने लायक बना देना—जब कि ऐसा न किये जाने पर उसे नंगा रहना होता—अपने आपमें एक शिक्षा है। और कताईसे संबंध रखनेवाले अलग-अलग कामोंकी बुद्धिपूर्वक छानबीन की जाय तो उससे कई बातें सीखी जा सकती हैं। सच पूछा जाय तो कताईमें मनुष्यकी सारी शिक्षा समाई हुई है जो दूसरे किसी हाथ-उद्योगमें नहीं मिलेगी। हो सकता है कि आज हम मुसलमानोंका शक दूर न कर सकें क्योंकि उसकी जड़में उनका भ्रम है। और जब तक मनुष्य पर भ्रमका जादू बना रहता है तब तक भ्रम ही उसे सच्चा मालूम होता है। लेकिन अगर हमारी श्रद्धा शुद्ध और दृढ़ है और हम अपनी इस पद्धतिकी सफलता उन्हें दिखा सकें तो मुसलमान खुद होकर हमारे पास आयेंगे और हमारी सफलताका रहस्य हमसे जानना चाहेंगे। अभी तक उन्होंने यह महसूस नहीं किया है कि मुस्लिम लीग या दूसरी मुस्लिम संस्थाओंके बनिस्बत चरखेने ही गरीब मुसलमानोंकी अधिक सच्ची सेवा की है मुसीबतमें उन्हें ज्यादासे ज्यादा राहत पहुंचाई है। बंगालके सबसे ज्यादा धुनकिये और कतिनें मुसलमान ही हैं। मुसलमानोंको यह भी नहीं भूलना चाहिये कि ढाकाकी मलमलकी प्रसिद्धि सारी दुनियामें फैलानेवाले कुशल मुसलमान जुलाहे ही थे और सफाईके साथ बारीकसे बारीक सूत कातनेवाली मुसलमान कतिनें ही थीं।

यही बात महाराष्ट्र पर भी लागू होती है। इस भ्रमका सबसे अच्छा इलाज यह है कि हम अपना कर्तव्य पूरा करनेका ही ध्यान रखें। अकेली सचाई ही कायम रहेगी बाकी सब समयके बहावमें बह जायगा। सारी दुनिया मुझे छोड़ दे तो भी मुझे अकेले ही अपनी सच्ची बात पर डटे रहना चाहिये। हो सकता है कि आज मेरी आवाज कोई न सुने। लेकिन अगर वह सच्ची है तो दूसरी आवाजोंके शांत हो जाने पर लोग उसे जरूर सुनेंगे।

बुराइयोंका घेरा

अविनाशिलिंगम चेट्टियरने अंग्रेजीमें पूछा नई तालीमके लिए योग्य शिक्षक तैयार करनेमें समय लगेगा। इस बीच स्कूलोंकी शिक्षामें प्रगति करनेके लिए क्या किया जाना चाहिये? गांधीजीने उन्हें अंग्रेजीमें प्रश्न करनेके लिए चिढ़ाते हुए हंसीके फव्वारोंके बीच सुझाया अगर आप हिन्दुस्तानीमें नहीं बोल सकते थे तो आपको अपने पड़ोसीके कानमें धीरेसे यह बात कह देनी थी और वे मुझे हिन्दुस्तानीमें उसे कह सुनाते।

गांधीजीने आगे चलकर कहा अगर आप यह महसूस करते हैं कि आजकी शिक्षा हिन्दुस्तानको आजाद बनानेके बजाय उसकी गुलामीको और ज्यादा बढ़ाती है तो आप उसे प्रोत्साहन देनेसे इनकार कर दें भले ही उसकी जगह कोई दूसरी शिक्षा ले या न ले। आप नई तालीमकी चहारदीवारीके भीतर जितना कर सकें उतना करें और उसमें सन्तोष मानें। अगर लोग इस बात पर मंत्रियोंको उनकी जगह रखना नहीं चाहते तो वे इस्तीफा दे दें। वे लोगोंको जीवन देनेवाला खाना नहीं दे सकते या लोग ऐसा खाना पसन्द नहीं करते इस कारणसे लोगोंको जहर खिलानेमें तो वे कभी हाथ नहीं बटायेंगे।

प्र० — आप कहते हैं कि नई तालीमके लिए हमें पैसेकी नहीं बल्कि आदमियोंकी जरूरत है। लेकिन लोगोंको सिखानेके लिए हमें संस्थाओंकी जरूरत होगी और संस्थाओंके लिए पैसेकी भी। हम बुराइयोंके इस घेरेसे कैसे बाहर निकलें?

उ०—इसका इलाज आपके ही हाथोंमें है। अपने-आपसे यह काम शुरू कीजिये। अंग्रेजोंकी एक अच्छी कहावत है कि दान घरसे शुरू होता है। लेकिन आप खुद साहब बनकर आराम-कुर्सी पर बैठें और दूसरे कम योग्यतावालों से आशा करें कि वे इस कामके लिए तयार हों तो आपको सफलता नहीं मिल सकती। काम करनेका मेरा ढंग इससे अलग है। बचपनसे मेरी यह आदत रही है कि मैंने अपने आपसे और आसपासके लोगोंसे ही किसी कामकी शुरुआत की है—फिर वह कितना ही छोटे रूपमें क्यों न हो। इस बारेमें हम ब्रिटिश लोगोंसे सीखें। पहले पहल सिर्फ मुट्ठीभर अंग्रेज हिन्दुस्तानमें आकर बसे और धीरे धीरे उन्होंने अपना एक साम्राज्य खड़ा कर लिया। यह साम्राज्य राजनीतिक दृष्टिसे उतना डरावना नहीं है जितना कि सांस्कृतिक दृष्टिसे। उसने हम पर ऐसा जादू डाला है कि हम अपनी मातृभाषाको भी भूल गये हैं और अंग्रेजीके वशमें होकर उससे वैसे ही चिपटे रहते हैं जैसे एक गुलाम अपनी बेड़ियोंसे चिपटा रहता है। लेकिन इस साम्राज्य निर्माणके पीछे कितनी श्रद्धा कितनी भक्ति कितनी कुरबानी और कितनी मेहनत छिपी हुई है! यह इस बातका प्रमाण है कि इच्छा होने पर रास्ता भी निकल ही आता है। इसलिए हम उठें और दृढ़ निश्चयके साथ अपने काममें लग जायं। यदि रास्तेमें आनेवाले बड़से बड़े खतरोंकी भी हम परवाह न करें तो हमारी सारी मुश्किलें दूर हो जायगी।

अंग्रेजीका स्थान

प्र०—इस कार्यक्रममें अंग्रेजीका क्या स्थान रहेगा? क्या उसे अनिवार्य बनाया जाना चाहिये या दूसरी भाषाकी तरह पढ़ाया जाना चाहिये?

उ०—मेरी मातृभाषामें कितनी ही खामियां क्यों न हों, मैं उसमें उसी तरह चिपटा रहूंगा जैसे अपनी माकी छातीसे। वही मुझे जीवन देनेवाला दूध दे सकती है। मैं अंग्रेजीको उसकी जगह प्यार करता

हूँ। लेकिन अगर वह उस जगहको हड़पना चाहती है जिसकी वह अधिकारिणी नहीं है तो मैं उसका बड़ा विरोध करूँगा। यह बात मानी हुई है कि अंग्रेजी आज सारी दुनियाकी भाषा बन गई है। इसलिए मैं उसे दूसरी भाषाके रूपमें स्थान दूँगा — लेकिन युनिवर्सिटीके पाठ्यक्रममें, स्कूलोंमें नहीं। वह कुछ लोगोंके सीखनेकी चीज हो सकती है, लाखों-करोड़ोंकी नहीं। आज जब हमारे पास प्राथमिक शिक्षाको भी देशमें अनिवार्य बनानेके साधन नहीं हैं, तो हम अंग्रेजी सिखानेके साधन कहाँसे जुटा सकते हैं? रूसने बिना अंग्रेजीके ही विज्ञानमें इतनी प्रगति की है। आज अपनी मानसिक गुलामीकी वजहसे ही हम यह मानने लगे हैं कि अंग्रेजीके बिना हमारा काम चल ही नहीं सकता। मैं इस बातको नहीं मानता। १

३२

विदेशी माध्यम

विदेशी माध्यमसे हमारे विद्यार्थी दिमागी थकावटके शिकार हुए हैं, उनके ज्ञानतन्तुओं पर अनुचित भार पड़ा है, वे रट्टू और नकलची बन गये हैं, मौलिक कार्य और विचारके लिए वे अयोग्य हो गये हैं और अपनी विद्याको परिवार अथवा जनसाधारण तक पहुँचानेमें असमर्थ हो गये हैं। विदेशी माध्यमने हमारे बालकोंको अपने ही देशमें लगभग विदेशी बना डाला है। वर्तमान पद्धतिका यह सबसे बड़ा दुःखद परिणाम है। विदेशी माध्यमने हमारी देशी भाषाओंके विकासको रोक दिया है। अगर मेरे पास एक निरंकुश शासककी सत्ता हो, तो मैं विदेशी माध्यमके द्वारा हमारे लड़कों और लड़कियोंकी पढ़ाई आज ही रोक दूँ और तमाम शिक्षकों और अध्यापकोंसे यह कह दूँ कि अगर बरखास्त नहीं होना है तो इसे फौरन ही बदल दें। मैं पाठ्य पुस्तकोंके तैयार होनेकी प्रतीक्षा नहीं करूँगा। वे इस परिवर्तनके बाद तैयार

हो जायगी। यह एक ऐसी बुराई है जिसका इलाज एकदम हो जाना चाहिये। १

विदेशी भाषाके माध्यमने जिसके जरिये भारतमें उच्च शिक्षा दी जाती है हमारे राष्ट्रको हद्से ज्यादा बौद्धिक और नैतिक हानि पहुंचाई है। अभी हम अपने इस जमानेके इतने नजदीक हैं कि इस हानिका निर्णय नहीं कर सकते। और फिर ऐसी शिक्षा पानेवाले हमीं लोगोंको इसका शिकार और न्यायाधीश दोनों बनना है जो कि लगभग असम्भव काम है।

इस गलत और हमें अभारतीय बनानेवाली शिक्षा द्वारा हमारे करोड़ों लोगोंके साथ लगातार और दिन दिन बढ़ता हुआ जो अन्याय हो रहा है उसका प्रमाण मुझे रोज रोज मिलता है। जो ग्रेजुएट मेरे कीमती साथी हैं वे खुद अटक जाते हैं जब उन्हें अपने आन्तरिक विचार प्रगट करने होते हैं। वे अपने ही घरोंमें अजनबी हैं। मातभाषा के शब्दोंका उनका ज्ञान इतना सीमित है कि वे अंग्रेजी शब्दों और वाक्योंका आश्रय लिये बिना अपना भाषण हमेशा पूरा नहीं कर सकते। न वे अंग्रेजी पुस्तकोंके बिना रह सकते हैं। वे बहुधा एक दूसरेको अंग्रेजीमें पत्र लिखते हैं। अपने साथियोंकी बात मैं यह दिखानेके लिए कह रहा हूं कि यह बुराई कितनी गहरी पैठ गई है क्योंकि हमने तो अपना सुधार करनेकी जान-बूझकर कोशिश की है।

यह बुराई इतनी गहरी पैठी हुई है कि कोई साहसपूर्ण उपाय ग्रहण किये बिना काम नहीं चल सकता। हां कांग्रेसी मन्त्री चाहें तो इस बुराईको कम तो कर ही सकते हैं भले वे उसे दूर न कर सकें।

विश्वविद्यालयोंको स्वावलम्बी जरूर बनाना चाहिये। राज्यको तो साधारणतः उन्हींको शिक्षा देनी चाहिये जिनकी सेवाओंकी उसे आवश्यकता हो। अन्य सब शिक्षाओंके अध्ययनके लिए उसे खानगी प्रयत्नोंको प्रोत्साहन देना चाहिये। शिक्षाका माध्यम तुरन्त और किसी

भी कीमत पर बन्द हो जाना चाहिये और प्रांतीय भाषाओंको उनका उचित स्थान मिलना चाहिये। जो दण्डनीय बरबादी नित्य बढ़ती जा रही है उसके बजाय मैं यह ज्यादा पसन्द करूंगा कि थोड़े अरसेके लिए उच्च शिक्षामें अव्यवस्था फैल जाय।

प्रान्तीय भाषाओंका दर्जा और व्यावहारिक मूल्य बढ़ानेके लिए मैं चाहूंगा कि अदालतोंकी भाषा उस प्रान्तकी भाषा हो जहां अदालतें स्थित हों। प्रांतीय विधानसभाओंकी कारवाई प्रान्तकी भाषामें होनी चाहिये और यदि किसी प्रान्तकी सीमाके भीतर अनेक भाषायें हों तो उन सारी भाषाओंमें होनी चाहिये। विधानसभाओंके सदस्योंसे मेरा कहना है कि वे काफी मेहनत करें तो एक मासके भीतर अपने प्रान्तोंकी भाषायें समझ सकते हैं। एक तामिल निवासीके लिए ऐसी कोई रुकावट नहीं है कि वह तामिल भाषासे सम्बन्धित तेलुगु मलयालम और कन्नड़ भाषाओंका मामूली व्याकरण और कुछ सौ शब्द आसानीसे न सीख सके। केन्द्रमें हिन्दुस्तानीका ही राज्य होना चाहिये। २

अब जब कि शिक्षा पद्धतिमें सुधार करनेका समय आ गया है तो कांग्रेसजनोंको अधीर हो जाना चाहिये। यदि शिक्षाका माध्यम धीरे धीरे बदलनेके बजाय एकदम बदल दिया जाय तो बहुत ही शीघ्र हम देख सकेंगे कि आवश्यकताको पूरा करनेके लिए पाठ्य-पुस्तकें भी प्राप्त हो रही हैं और अध्यापक भी। और यदि हम प्रामाणिकता और सच्ची लगनसे काम करना चाहते हैं तो एक ही सालमें हमें यह मालूम हो जायगा कि हमें विदेशी माध्यम द्वारा सभ्यताका पाठ पढ़नेके प्रयत्नमें राष्ट्रका समय और शक्ति नष्ट करनेकी जरूरत नहीं है। सफलताकी शर्त यही है कि सरकारी दफ्तरोंमें और अगर प्रान्तीय सरकारोंका अपनी अदालतों पर अधिकार हो तो उन अदालतोंमें भी प्रांतीय भाषायें तुरत जारी कर दी जायें। यदि सुधारकी आवश्यकतामें हमारा विश्वास हो तो हम उसमें तुरत सफल हो सकते हैं। ३

३३
शालाओंमें संगीत

माधव संगीतविद्यालयके पंडित नारायणशास्त्री खरेने लड़के लड़कियोंमें शुद्ध संगीतका प्रचार करनेके काममें जीवन अर्पण किया है। खास तौर पर अहमदाबादमें और आम तौर पर गुजरातमें इस दिशामें जो बड़ी प्रगति हो रही है उसका हाल उन्होंने भेजा है और इस बारेमें अपना दुःख प्रकट किया है कि संगीतको पढ़ाईमें शामिल करनेकी बात शिक्षा विभागके अधिकारी नहीं सुनते। यह पंडितजीकी अनुभवके आधार पर कायम की हुई राय है कि प्रारंभिक शिक्षाके पाठ्यक्रममें संगीतको जगह मिलनी ही चाहिये। मैं इस सूचनाका हृदयसे समर्थन करता हूं। बच्चेके हाथको शिक्षा देनेकी जितनी जरूरत है उतनी ही जरूरत उसके गलेको शिक्षा देनेकी है। लड़के लड़कियोंके भीतर जो अच्छाइयां भरी रहती हैं उन्हें बाहर लाने और पढ़ाईमें भी उनकी सच्ची दिलचस्पी पैदा करनेके लिए कवायद उद्योग चित्रकारी और संगीत साथ-साथ सिखाने चाहिये।

यह बात मैं मानता हूं कि इसका अर्थ शिक्षाकी पद्धतिमें क्रांति करनेके बराबर है। राष्ट्रके भावी नागरिकोंके जीवन-कार्यकी पक्की बुनियाद डालना हो तो उपरोक्त चार चीजें जरूरी हैं। किसी भी प्राथमिक शालामें जाकर देख लीजिये तो वहां लड़के मैले होंगे व्यवस्थाका नाम न होगा और बेसुरी आवाजें निकलती होंगी। इसलिए मुझे तो कोई शंका नहीं कि जब कई प्रांतोंके शिक्षामंत्री शिक्षा-पद्धतिकी नये सिरसे रचना करेंगे और उसे देशकी जरूरतके मुताबिक बनायेंगे तब जिन जरूरी बातोंकी तरफ मैंने ऊपर ध्यान खींचा है उन्हें वे छोड़ नहीं देंगे। मेरी प्राथमिक शिक्षाकी योजनामें ये चीजें शामिल ही हैं। जिस समय बच्चोंके सिरसे एक कठिन विदेशी भाषा सीखनेका बोझ उतार दिया जायगा उसी समय ये चीजें आसान हो जायेंगी। १

३४

साहित्यमें गंदगी

लाहौरके यूथ वेल्फेयर एसोसियेशनके अवैतनिक मंत्रीका मुझे एक पत्र मिला है। इस पत्रमें अश्लीलता और कामुकतासे भरे काफी नमूने पाठ्य-पुस्तकोंसे उद्धृत किये गये हैं, जिन्हें विभिन्न विश्वविद्यालयोंने अपने पाठ्यक्रमोंमें रखा है। ये ऐसे गंदे अवतरण हैं कि पढ़नेमें घिन मालूम होती है। हालांकि ये पाठ्यक्रमकी पुस्तकोंमें से लिये गये हैं, फिर भी इन्हें उद्धृत करके मैं 'हरिजन' के पृष्ठोंको गन्दा नहीं करूंगा। मैंने जितना भी साहित्य पढ़ा है उसमें इतनी गंदगी कभी मेरी नजरसे नहीं गुजरी है। इन अवतरणोंको निष्पक्ष रीतिसे संस्कृत, फारसी और हिन्दीके कवियोंकी रचनाओंमें से लिया गया है। लेकिन यह एक ऐसा प्रसंग है जो विद्यार्थियों द्वारा की गई हड़तालोंको न सिर्फ उचित ही ठहराता है बल्कि मेरी रायमें उनका यह फर्ज हो जाता है कि ऐसा साहित्य अगर उनके ऊपर जबरन लादा जाय तो उसके खिलाफ वे विद्रोह भी करें।

किसीको चाहे जो पढ़नेकी स्वतंत्रता देनेका बचाव करना यह एक बात है। लेकिन यह बिल्कुल जुदी बात है कि नौजवान लड़कों-लड़कियोंको ऐसे साहित्यका परिचय कराया जाय जिससे निश्चय ही उनके काम विकारोंको उत्तेजन मिलता हो और ऐसी चीजोंके बारेमें वाहियात कुतूहल मनमें पैदा हो जिनका ज्ञान आगे चलकर उचित समय पर और जरूरी हद तक उन्हें जरूर हो जायगा। बुरा साहित्य तब कहीं अधिक हानि पहुंचाता है जब कि वह निर्दोष साहित्यके रूपमें हमारे सामने आता है और उस पर बड़े बड़े विश्वविद्यालयोंके प्रमाणकी छाप लगी होती है।

उक्त एसोसियेशनने मुझे लिखा है कि मैं कांग्रेसी मंत्रियोंसे यह अपील करूं कि वे पाठ्यक्रममें से ऐसी पुस्तकों या उन अंशोंको जो कि

आपत्तिजनक है हटवा देनेके लिए जो भी उपाय संभव हो वह करें। मैं इस लेख द्वारा सहायक ऐसी अपील न केवल कांग्रेसी मंत्रियोंसे बल्कि सभी प्रांतोंके शिक्षामंत्रियोंसे करता हूं। निश्चय ही, विद्यार्थियोंकी बुद्धिके स्वस्थ विकासमें तो सभी एकसी दिलचस्पी रखते हैं। १

३५

जुआ, वेश्यागृह और घुड़दौड़

जिन प्रांतोंमें कांग्रेसका बहुमत प्राप्त हुआ है वहांके लोगोंमें तरह तरहकी आशाएं पैदा हुई हैं। उनमें से कुछ बेशक उचित हैं और उन्हें निश्चित रूपसे पूरा किया जायगा। कुछ आशायें पूरी नहीं की जा सकतीं। उदाहरणके लिए जो लोग जुआ खेलते हैं — दुर्भाग्यसे बम्बई प्रदेशमें यह बुराई बढ़ती जा रही है — वे मानते हैं कि जुएको कानूनी मान्यता मिल जायगी और बम्बईमें जो जगह जगह चोरी छिपे जुआघर चलते हैं उनकी अब जरूरत नहीं रह जायगी। आज जहां जहां जुआ चलता है वहां सबको उसे चलानेकी कानूनी मंजूरी — आज जिस प्रकार मर्यादित रूपमें है उसी प्रकार — दे दी जाय तब भी चोरी छिपे चलनेवाले गैरकानूनी जुआघर नहीं रहेंगे इसका मुझे पूरा विश्वास है कि ... नहीं है। एक सुझाव यह दिया गया है कि टर्फ क्लबको जिसके पास आज रेसकोर्सका ठेका है एक अतिरिक्त दरवाजा खोलनेकी छूट दी जानी चाहिए, ताकि गरीब लोगोंको जुआ खेलनेकी अधिक सुविधा हो जाये। इसके लिए अतिरिक्त आयका लालच बताया जाता है।

इसी प्रकारका दूसरा सुझाव यह है कि वेश्यागृहों पर नियंत्रण लगाना चाहिये और उसके लिए परवाने दिये जाने चाहिये। इस सारे मामलेमें जैसा कि अक्सर होता है अक्सर यह कहा जाता है कि इन दुराचारोंको कानूनी मान्यता दी जाये या न दी जाये, लेकिन जब

वह चलता ही वाला है तो उस कानूनी मान्यता देना और वेश्यागृहोंमें जानेवाले सुरक्षित रहें इस बातकी व्यवस्था करना अधिक अच्छा है। मुझे आशा है कि कांग्रेसी मंत्री इस जालमें नहीं फसेंगे। वेश्यागृहोंके निवारणका मार्ग यह है कि स्त्रियां दुगुना प्रचार-कार्य करें (१) एक तो पेट भरनेके लिए अपना शील बेचनेवाली स्त्रियोंके पास जाकर उन्हें समझाना और (२) जो पुरुष अज्ञान या उद्धततापूर्वक स्त्रियोंको अबला कहते हैं उन्हें गरमीकर बहनोंके प्रति अधिक अच्छा व्यवहार करनेके लिए समझाना। मुझे याद है कि वर्षों पहले मक्तिसनाव बहादुर आदमी अपनी जानकी बाजी लगाकर वेश्याओंके मुहल्लेकी गलियोंके नुक्कड़ पर खड़े रहकर पहरा देते थे। ऐसी कोई चीज बड़े पैमाने पर क्यों नहीं की जानी चाहिये?

रेसकोर्सके जुएके बारेमें तो मैं यही कहूंगा कि जहां तक मैं जानता हूं यह और वैसी दूसरी चीजोंकी तरह पश्चिमसे ही यहां आई है। और मेरा बस चले तो रेसकोर्सके जुएको आजकल जो कानूनी रक्षण मिला हुआ है उसे भी मैं वापस ले लूं। १९२० के प्रस्तावमें स्पष्ट शब्दोंमें कहा गया है कि कांग्रेसका कार्यक्रम आत्मशुद्धिका है इसलिए कांग्रेस किसी भी प्रकारके दुराचारसे आय प्राप्त करनेका विचार कर ही नहीं सकती। इसलिए मंत्रियोंको जो सत्ता प्राप्त हुई है उसका उपयोग वे जनमतको सही दिशामें ... बारेमें प्रतिष्ठित वर्गमें चल रहे जुएको रोकनेके लिए करेंगे। यह ... करता ... है कि भोले अनजान लोग प्रतिष्ठित माने जानेवाले लोगोंका अनुकरण नहीं करेंगे। मैंने यह दलील सुनी है कि अच्छी नस्लके घोड़ोंकी औलाद तैयार करनेके लिए घुड़दौड़ जरूरी है। शायद इसमें सत्य हो सकता है। लेकिन क्या घुड़दौड़ जुएके बिना सम्भव नहीं है? या जुआ भी घोड़ोंकी नस्ल सुधारनेमें मददगार है? १

घुड़दौड़में होनेवाली लोगोंकी और पैसेकी बरबादीके बारेमें पहले मैं लिख चुका हूं। लेकिन एक मित्र कड़ा पत्र लिखते हुए कहते हैं कि घुड़दौड़में खेला जानेवाला जुआ शराबखोरीसे कम बुरा नहीं है।

इसीलिए इस बारेमें मुझे फिर लिखना पड रहा है। वे मित्र आगे लिखते हैं

> घुड़दौड़के लिए खास ट्रेनें चलती हैं। वे गांधी टोपी पहननेवाले लोगोंसे भरी रहती हैं जो अपनेको कांग्रेसी कहते हैं। वे घुड़दौड़में पैसा बरबाद करते हैं। यह पैसा कहांसे आता है? आज प्रान्तोंमें जनताके मंत्रि मंडल शासन चला रहे हैं लेकिन वे भी चुपचाप इस बुराईको सहन कर रहे हैं।'

हालांकि मैं घुड़दौड़को शराबखोरी जैसा बुरा नहीं मानता फिर भी बुरी चीजोंमें तुलना क्या की जाय? कम बुरा होनेसे जुआ अच्छी चीज तो नहीं बन जाता? घुड़दौड़के सारे रहस्योंको मैं नहीं जानता। मैं तो सिर्फ इतना ही कह सकता हूं कि अगर जनताकी सरकार इस बुराईको बन्द कर सकती हो तो उन्हें इसे मिटाना ही चाहिये। २

३६

कानून-सम्मत व्यभिचार

डा० मुथुलक्ष्मी रेड्डीने एक और प्रमाण इस बातका पेश किया है कि कांग्रेसी मंत्रिमण्डलोंसे लोग कैसी बड़ी बड़ी आशाएं रखते हैं। लोगोंको ऐसी आशाएं करनेका अधिकार है। कांग्रेसके विरोधियोंको तकको यह स्वीकार करना पड़ता है कि इस आशामें कांग्रेसी मंत्रि मंडल खरे उतर रहे हैं। वास्तवमें लोकहितकारी कामोंके प्रारम्भमें मानो वे एक दूसरेसे होड़ लगा रहे हैं जिससे उनका शासनप्रबन्ध देशकी सच्ची जरूरतोंकी पूर्ति कर सके। डा० मुथुलक्ष्मी रेड्डीने मद्रासके मंत्रि मंडलके नाम एक खुली अपील प्रकाशित की है जिसमें उन्होंने मंत्रियोंसे एक ऐसे कानूनको मसविदा स्वीकार करनेके लिए अनुरोध किया है जिसके जरिये देवदासियोंको पतित जीवनके लिए अर्पित कर देना बन्द हो जायगा। इस कानूनके मसविदेको तो मैं अभी ध्यानपूर्वक नहीं पढ़ पाया

है। लेकिन उसकी मूलभूत कल्पना इतनी निर्दोष और आवश्यक है कि यही आश्चर्य होता है कि इस दक्षिणा प्रान्तके कानूनकी पुस्तकमें अब तक उसे कैसे स्थान नहीं मिला। डा० मथुलक्ष्मीसे मैं इस विषयमें पूर्ण सहमत हूँ कि यह सुधार भी उतना ही जरूरी है जितना शराबबन्दी। उन्होंने इस बातकी भी याद दिलाई है कि वर्तमान प्रधान मंत्रीने वरसों पहले इस बुराईकी बड़े बड़े शब्दोंमें निन्दा की थी। मैं जानता हूँ कि इस बुराईको दूर करनेकी कुछ सत्ता उनके हाथोंमें आने पर प्रधानमंत्रीकी यह उत्सुकता जरा भी कम नहीं हुई है। डा० मथुलक्ष्मीके साथ साथ मैं भी यह आशा कर रहा हूँ कि चन्द महीनोंमें ही इस बुराईका कानूनी पञ्जरल हट जायगा। १

३७
मन्त्रिमंडल और हरिजनोंकी समस्यायें
भुसावल तालुकेमें हरिजन-कार्य

श्री ठक्करबापा लिखते हैं:

भुसावल तालुकेमें बड़े पैमाने पर सुन्दर हरिजन-कार्य करनेका निश्चय किया गया है। इसके लिए पिछली १४ मईको दो सभाएं रखी गई थीं। श्री वैकुठभाई महेता, श्री गणपतराव तपासे, श्री वर्वे, श्री दास्तान और मैं — इतने लोग उन सभाओंमें उपस्थित थे। आशा है कि गांवोंमें हरिजनोंके लिए कुएं खुल जायगे। ग्रामवासियोंने अच्छा उत्साह दिखाया है। इससे सफलता की आशा रखी जाती है। लक्षण अच्छे मालूम होते हैं।

यह अच्छी बात है। अच्छे लक्षणोंमें सबसे पहला तो शायद कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डलका होना ही है। इसका यह अर्थ नहीं है कि अब जबरदस्तीसे काम लिया जायगा। ऐसे कामोंमें जबरदस्तीकी कमसे कम गुंजाइश होती है। जो बात लोगोंकी रग रगमें घुस गई है और जिसने

घमंडा थाना पहन रखा है उसे जबरदस्तीसे नहीं निकाला जा सकता। परन्तु जब राज्य विदेशी होता है तो उसकी शक्ति दबे हुए लोगोंको अधिक दबानेमें खर्च होती है और अगर दबी हुई प्रजाकी मदद भी की जाती है तो वह भी या तो शक्तिके जोर पर की जाती है या अपना स्वार्थ साधनेके लिए की जाती है। ऐसी सरकार जो कुछ करती है वह जबरदस्तीसे ही करती है। कांग्रेसने गद्दी जोर आजमा कर नहीं पाई है। उसकी बुनियाद लोकमत पर टिकी हुई है। इसलिए हम आशा रखें कि कांग्रेसी मंत्री लोगोंको समझा-बुझा कर उनकी मददसे ही यह काम आगे बढ़ायेंगे। इसका नतीजा यह होना चाहिये कि उनके क्षेत्रमें हरिजन सेवा और ऐसे अन्य काम ज्यादा जोरसे चलें और उनमें रुकावट डालनेवाली ताकतें अपने आप शांत हो जायें। भुसावल जैसे छोटेसे ताल्लुकेमें भी काम स्थिर रूपमें चले तो उसका फल अधिक अच्छा निकलेगा। सारे देशमें एक ही साथ सब जगह काम हाथमें नहीं लिया जा सकता। जहां कार्यकर्ता अधिक बुद्धिमान और प्रभावशाली होंगे वहां यह काम अधिक तेजीसे चलेगा। इस छोटेसे क्षेत्रमें भी खूब अच्छा काम हो सके तो दूसरे भी उसकी नकल करने लग जायेंगे और सफलता जल्दी मिलेगी। हम आशा रखें कि भुसावल ताल्लुकेमें ऐसा ही होगा। १

हरिजन और कुए

श्री हरदेव सहाय लिखते हैं

कल शामके (४-९-४६) अपने प्रवचनमें हरिजनोंके कष्टोंकी ओर ध्यान खींचते हुए आपने यह कहा था कि उनको कुओंसे पानी नहीं भरने दिया जाता। पिछले २५ वर्षोंकी सतत कोशिशोंके बावजूद हरिजनोंका यह कष्ट अभी तक दूर नहीं हो सका है। हरिजनोंके कष्टोंको आपसे अधिक जाननेवाला दूसरा कोई नहीं है।

मेरेकी तुच्छ रायमें अब कांग्रेसी सरकारोंको हरिजनोंके सम्बन्धमें अपनी नीति शीघ्र ही घोषित करके इस तरहके

> कष्टोंको कानूनन् दूर करना चाहिये। मैं आपका ध्यान इस सम्बन्धमें पंजाबके हरिजनोंकी ओर दिलाना चाहता हूँ। वहाँ कुआँसे पानी भरना तो दूर रहा, कुएँ बनानेके लिए जमीन भी नहीं मिलती। इसलिए आपसे निवेदन है कि पंजाब सरकार द्वारा हरिजनोंको यह अधिकार मिलना चाहिये कि जहाँ उनको सार्वजनिक कुओंसे पानी भरनेकी मनाही हो — जैसी कि है — वहाँ सरकार अपने खर्चसे हरिजनोंकी आबादीके खयालसे कुएँ बनवा दे या कमसे कम हरिजनोंको अपने कुएँ बनानेके लिए जमीन दिलाने या देनेका नियम बनाये। बहुतेरे गाँव ऐसे हैं जहाँ चाहते हुए भी हरिजन अपने खर्चसे कुएँ नहीं बना सकते।
>
> कहीं कहीं सरकारने कुएँ बनाने शुरू भी किये हैं, पर वे बहुत कम हैं। हरएक प्रांतीय सरकारका यह कर्तव्य होना चाहिये कि वह अपने सारे नागरिकोंके लिए पीनेके पानीकी व्यवस्था अवश्य करे।

इन भाईने जो लिखा है वह ठीक ही है। हरिजनोंके लिए पानीकी व्यवस्था सरकारकी तरफसे होनी ही चाहिये। इसके लिए सिर्फ कुएँ खोदनेकी जगह देना ही काफी नहीं है, उसमें कुएँ खुदवा देना भी जरूरी है। २

एक बुद्धिमानीका काम

पिछड़ी हुई जातियोंके मंत्री श्री जी० डी० तपासे (बम्बई)ने बम्बईकी धारासभा द्वारा हालमें ही पास किये गये बम्बई हरिजन (रिमूवल आफ सोशियल डिसएबिलिटीज) एक्टकी एक प्रति मेरे पास भेजी है। उसमें से अत्यंत महत्त्वपूर्ण भाग मैं नीचे देता हूँ :

> ३. इसके विरुद्ध किसी पुराने कायदे-कानून, रीति रिवाज अथवा परम्पराके होते हुए भी किसी हरिजनको सिर्फ हरिजन होनेके कारण —

(अ) किसी भी कानूनके मातहत किसी सरकारी नौकरीमें जगह पानेसे वंचित नहीं रखा जायगा, अथवा

(आ) (१) ऐसे किसी नदी-नाले, चलते हुए तालाब, हौज, नल या पानी लेनेकी अथवा नहानेकी दूसरी जगह, मरघट या कब्रस्तान, पाखाना, जैसे सार्वजनिक उपयोगके साधन, सड़क या पगडंडी तक जाने या उसका उपयोग करनेसे रोका नहीं जायगा, जिन पर पहुँचने या जिनका उपयोग करनेका अधिकार दूसरी हिन्दू जातियों और वर्णोंको प्राप्त है

(२) प्रान्तीय सरकार या किसी स्थानीय सत्तासे परवाना पाकर किराये पर चलनेवाली सार्वजनिक सवारी तक पहुँचनेसे या उस पर चढ़नेसे रोका नहीं जायगा

(३) प्रांतकी आयसे या स्थानीय सत्ताके कोषसे पूरी या आंशिक सहायता देकर बनाये गये मकान, कुए, हौज या आम लोगोंके उपयोगके पाठ वगैरा स्थानों तक पहुँचने या उनका उपयोग करनेसे रोका नहीं जायगा

(४) आम लोगोंके मनबहलाव या खेल-कूद वगैराके लिए बनाये गये स्थानों पर जानेसे रोका नहीं जायगा

(५) ऐसी किसी दुकान पर जानेसे रोका नहीं जायगा जहाँ दूसरी हिन्दू जातियोंको जानेका अधिकार है

(६) ऐसे किसी स्थान पर जानेसे या उसके उपयोगसे रोका नहीं जायगा, जो हिन्दुओंके किसी खास वर्ग या समूहके लिए नहीं बल्कि सारे हिन्दुओंके लिए अलग कर दिया गया है या अलग रखा गया है

(७) किसी खास वर्ग या समूहके लिए नहीं बल्कि आम हिन्दू जनताके भलेके लिए स्थापित किये गये धर्मादा ट्रस्टका लाभ उठानेसे रोका नहीं जायगा।

३ अ तीसरे विभागकी उपधारा—१ ३ ४ ५ ६ में बताये गये स्थानोंमें काम करनेवाला कोई व्यक्ति या उपधारा २ में बताई गई सवारी रखनेवाला कोई व्यक्ति या विभाग —३ या धारा-ब में बताये गये स्थानोंमें काम करनेवाला कोई व्यक्ति किसी हरिजन पर कोई प्रतिबंध नहीं लगा सकता अथवा एसा कोई काम नहीं कर सकता जिससे यह मालूम हो कि हरिजनोंके खिलाफ कोई भेदभाव किया जा रहा है।

४ किसी बात पर निर्णय देने या किसी आदेश पर अमल करनेमें कोई अदालत किसी हरिजनके विरुद्ध सिर्फ उसके हरिजन होनेके कारण एसी किसी प्रथा या कानूनको नहीं मान सकती जो उस पर किसी तरहकी सामाजिक अयोग्यता लादता हो।

५ किसी कानूनके मातहत अपना कामकाज या फर्ज अदा करनेवाली कोई स्थानीय सत्ता विभाग—४ में कहे गये किसी रीति रिवाजको नहीं मानेगी।

६ जो भी कोई—

(क) हरिजन होनेके नाते किसी आदमीको तीसरे विभागकी (आ) धाराकी दूसरी उपधारामें बताई गई सवारी अथवा पहली तीसरी चौथी पांचवीं और छठी उपधाराओंमें बताये गये किसी स्थान पर जानेसे या उसका उपयोग करनेसे रोकता है अथवा उसी विभागकी (आ) धाराकी सातवीं उपधारामें बताये गये किसी धर्मार्थ ट्रस्टका लाभ उठानेसे रोकता है या रोकनेके लिए किसीको उकसाता है अथवा

(ख) किसी हरिजन पर किसी प्रकारकी कोई रोक लगाता है या उसके खिलाफ कोई भेदभाव प्रकट करनेवाला कोई काम करता है या किसी व्यक्तिको ऐसा प्रतिबंध लगानेके लिए उकसाता है या इसी तरहका और कोई काम करता

है, तो उसे अपराध सिद्ध हो जाने पर तीन माहकी कड़ी सजा दी जायगी, या उस पर २०० रु० जुर्माना किया जायगा या दोनों सजायें दी जायगी।

७ अगर ऐसा कोई आदमी जिसे इस एक्टके मातहत एक बार अपराध करने पर सजा मिल चुकी है दुबारा वही अपराध करेगा तो अपराध सिद्ध होने पर उसे ६ महीनेकी कड़ी सजा या ५०० रु० जुर्मानेकी सजा या दोनों सजायें दी जायगी। और अगर वही आदमी तीसरी बार या इससे अधिक बार अपराधी सिद्ध होगा तो उसे १ सालकी कड़ी सजा दी जायगी या उससे १००० रु० जुर्मानेके वसूल किये जायगे।

इस बिलको तैयार करनेवाले मित्रने कृपा करके अपने उस भाषणकी एक प्रति भी मेरे पास भेजी है जो उन्होंने धारासभामें बिल पेश करते समय दिया था। उसके कुछ अत्यधिक दर्दभरे हिस्से मैं नीचे देता हूं

यह 'अछूत' एक प्रकारका घोर अन्याय है। जैसे ही एक हरिजन उत्पन्न होता है वह अछूत मान लिया जाता है। वह अछूत पैदा होता है जीवन भर अछूत बना रहता है और उसमें अछूतके रूपमें ही मर जाता है। वह चाहे कितना ही साफ सुथरा रहे कितना ही बुद्धिमान हो दूसरोंसे कितना ही श्रेष्ठ हो लेकिन नामधारी कट्टर हिन्दुओंके लिए वह कभी श्रेष्ठ नहीं होता। सबसे बुरी बात तो यह है कि मरने पर भी हरिजनकी मिट्टी और बाकी दूसरोंकी मिट्टी और राखको मिलने नहीं दिया जाता। अछूतोंके कष्ट इस बातसे और ज्यादा बढ़ गये हैं कि सिर्फ सवर्ण हिन्दू ही नहीं ईसाई मुसलमान और दूसरे लोग भी उनसे अछूता जैसा ही व्यवहार करते हैं। मेरे मत यह बिल हरिजनोंका कुछ बुनियादी

सामाजिक और नागरिक अधिकारोंके उपयोगके लिए एक सनद या अधिकार-पत्र देता है।

यह ध्यान देनेकी बात है कि उपरोक्त बिल हिन्दुओंकी ओरसे बिना किसी विरोधके पास हो गया। कानूनको सफलतासे अमलमें लानेके लिए यह एक शुभ आरंभ है। परन्तु उसके बारेमें बहुत बड़ी आशा बना लेना भी ठीक नहीं होगा। हमारा दुर्भाग्य यह है कि हम जोरोंसे ताली बजाकर प्रस्ताव पास कर देते हैं और फिर उन्हें रद्दीकी टोकरीमें फेंक देते हैं। इस कानूनको पूरी तरह अमलमें लानेके लिए सरकार और सुधारकोंको ज्यादासे ज्यादा सावधानी रखनी होगी।

इस सचाईकी ओरसे आंख मूंद लेनेमें कोई लाभ नहीं कि जिस घोर अन्यायकी ओर बिल बनानेवाले मिशनने इशारा किया है उसका आज भी हिन्दुस्तानमें बोलबाला है। सिर्फ अछूतपनके मामलेमें ही नहीं परन्तु दूसरी बातोंमें भी यही स्थिति है। सुधारकोंको चाहिये कि वे इस भूत पर नजर रखें और जिन पर वह सवार है उनके साथ सावधानी सज्जनता और चतुराईसे काम लें। ३

३८

आरोग्यके नियम

श्री ब्रजलाल नेहरू मेरे पास ही रहते हैं। उन्होंने दैनिक अखबारोंमें एक पत्र लिखा है जिसमें आरोग्य मंत्री राजकुमारी अमृतकुंवरके इस कथनकी तारीफ की है कि हमारी बीमारियां अपने अज्ञान और लापरवाहीसे पैदा होती हैं। उन्होंने यह सूचना की है कि अब तक आरोग्य विभागका ध्यान अस्पताल वगैरा खोलने पर ही रहा है। उसके बदले राजकुमारीने जिस अज्ञानका उल्लेख किया है, उसे दूर करनेकी ओर इस विभागको ध्यान देना चाहिये। उन्होंने यह भी सुझाया है कि इसके लिए एक नया विभाग खोलना चाहिये। विदेशी सत्ताकी यह

एक बुरी आदत थी कि उसे जो सुधार करना होता उसके लिए वह एक नया विभाग और नया खर्च खड़ा कर देती थी। लेकिन हम क्या इस बुरी आदतकी नकल करें? बीमारियोंका इलाज करनेके लिए अस्पताल भले रहें लेकिन उन पर इतना वजन क्यों दिया जाय? घर बैठे आरोग्यकी रक्षा कैसे की जा सकती है इसकी तालीम लोगोंको देना आरोग्य विभागका पहला काम होना चाहिये। इसलिए आरोग्य मंत्रीको यह समझना चाहिये कि उनके अधीन जो डाक्टर और कर्मचारी काम करते हैं, उनका पहला कर्तव्य है जनताके आरोग्यकी रक्षा और उसकी संभाल करना।

श्री व्रजलाल नेहरूकी एक सूचना ध्यान देने योग्य है। वे लिखते हैं कि बीमारियोंके इलाजके बारेमें ढेरों पुस्तकें देखनेमें आती हैं लेकिन कुदरती इलाज करनेवालोंके सिवा डिग्रीधारी डाक्टरोंने आरोग्यके नियमोंके बारेमें कोई पुस्तक लिखी हो ऐसा कभी सुना नहीं गया। इसलिए श्री नेहरू यह सूचना करते हैं कि आरोग्य मंत्री प्रसिद्ध डाक्टरोंसे ऐसी पुस्तकें लिखवायें। ये पुस्तकें लोगोंकी समझमें आने लायक भाषामें लिखी जायें तो जरूर उपयोगी सिद्ध होंगी। शर्त यही है कि ऐसी पुस्तकोंमें तरह तरहके टीके लगानेकी बातें नहीं होनी चाहियें। आरोग्यके नियम ऐसे होने चाहियें जिनका पालन डाक्टरों और दवाओंकी मददके बिना घर बैठे हो सके। अगर ऐसा न हो तो कुएमें से निकल कर खाईमें गिरने जैसी बात होना संभव है। १

३९

लाल फीताशाही

मंत्री दफ्तरी घिसघिसमें इस तरह जकड़े हुए हैं कि उन्हें सोचने विचारनेका समय ही नहीं मिलता। उन्हें तो इतनी भी फुरसत नहीं कि वे मजेसे मुलाकात और विचार विनिमय कर कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। उनकी स्थिति जानते हुए मुझे भी यह हिम्मत नहीं होती कि उन्हें पत्र ही लिख दूं। हरिजन के स्तंभों द्वारा तो मुझे उनसे बात ही नहीं करना चाहिये।

अगर मंत्री अपनी नई जिम्मेदारियोंसे निबटना चाहते हैं तो उन्हें दफ्तरी तरीका — लाल फीताशाही — को खतम करनेकी तरकीब खोजनी चाहिये। पुरानी शासन व्यवस्था लाल फीताशाहीके द्वारा और उस पर ही जीवित रह सकती थी। लेकिन वह नई व्यवस्थाका गला घोट देगी। मंत्रियोंको स्टेनोग्राफर जरूर मिलना चाहिये जिनकी सद्भाव नासे ही वे इन पदों पर आसीन रह सकते हैं। उन्हें छोटीसे छोटी और बड़ीसे बड़ी शिकायतें जरूर सुननी चाहियें। लेकिन उनके पास जितनी शिकायतें और चिट्ठियां आती हैं उन सबका और अपने फैसलोंका रेकार्ड रखनेकी उन्हें जरूरत नहीं। उन्हें अपने पास केवल उतने ही कागजात रखने चाहियें जिनसे उनकी याददाश्त ताजा रहे और कामका सिलसिला बना रहे। विभागीय पत्र-व्यवहार बहुत कम हो जाना चाहिये। वे अपने उन लाखों मालिकोंके प्रति जवाबदार हैं जो न तो यह जानते हैं कि दफ्तरी कारवाईका ढंग क्या है और न जिन्हें उसके जाननेकी चिंता है। उनमें से कितने ही लोग तो लिख और पढ़ भी नहीं सकते। पर वे चाहते हैं कि उनकी प्राथमिक आवश्यकतायें पूरी हों। कांग्रेसजनोंने उन्हें यह सोचना सिखा दिया है कि शासन-सूत्र कांग्रेसके हाथमें आते ही हिंदुस्तान भरमें न तो कोई भूखा रहेगा और न तन ढकनेकी इच्छा रखनेवाला कोई नंगा रहेगा। यदि मंत्री उस विश्वासके साथ न्याय करना चाहते हैं जिसका

उन्होंने अपने ऊपर भार लिया है तो उन्हें इस प्रकारकी समस्याएं सुलझानेके लिए सोचने विचारनेमें समय देना चाहिये।

अगर वे तथाकथित गांधीवादको मानते हों तो उन्हें जानना चाहिये कि यह वाद क्या है, इसका पता उन्हें मुझसे नहीं बल्कि आत्म निरीक्षण करके लगाना चाहिये। शायद मैं भी हमेशा यह नहीं जान सकता कि वह क्या है। लेकिन मैं इतना जरूर मानता हूं कि अगर उसकी उचित रूपमें खोज की जाय और उसका अनुसरण किया जाय तो वह इतना मौलिक और क्रांतिकारी है कि भारतकी सभी वास्तविक आवश्यकताओंको पूरा कर सकता है।

कांग्रेस एक क्रांतिकारी संस्था है। लेकिन उसकी क्रांति संसारकी उन सभी राजनीतिक क्रान्तियोंसे अलग है जिनका हाल इतिहासमें लिपिबद्ध है। जहां पहली क्रांतियोंका आधार हिंसा था वहां कांग्रेसकी क्रांतिका आधार जान-बूझकर अहिंसात्मक रखा गया है। अगर यह भी हिंसात्मक होती तो शायद शासनका पुराना रूप और रिवाज बहुत-कुछ उसी तरह कायम रह जाता। लेकिन कांग्रेसने बहुतसे पुराने तरीकोंको निषिद्ध मान लिया है। सबसे बड़ा परिवर्तन पुलिस और सेनाका है। मैंने यह स्वीकार किया है कि जब तक कांग्रेसजन पदासीन हैं और वे शांतिव्यवस्थाको सुरक्षाके लिए शांतिपूर्ण उपाय नहीं खोज लेते तब तक इन दोनोंका प्रयोग उन्हें करना ही होगा। लेकिन मंत्रियोंके सामने सदा ही यह प्रश्न रहना चाहिये कि क्या इन दोनों चीजोंके प्रयोगका परित्याग नहीं किया जा सकता? अगर नहीं तो क्यों? यदि जांच करने पर भी—यह जांच पुराने तरीकेसे नहीं की जानी चाहिये जो कि खर्चीले और प्राय व्यर्थ सिद्ध होते हैं बल्कि बिना सोचके और साथ ही पूर्ण तथा परिणामकारी न्याससे होनी चाहिये—उन्हें पता चले कि पुलिस और सेनाका प्रयोग किये बिना वे राजकाज नहीं चला सकते तो अहिंसाका यह तकाजा है कि कांग्रेसको मंत्रीपद त्याग देना चाहिये और पुनः वनवासमें जाकर उस दुर्गम अमन की खोज करनी चाहिये। १

४०

व्यक्तिगत लाभकी आशा न रखें

कांग्रेस सरकारमें जो भी पद ग्रहण किया जाय सेवाकी भावनासे ही ग्रहण किया जाय। व्यक्तिगत लाभकी उसमें जरा भी आशा नहीं रखनी चाहिये। अगर कोई २५ रु० मासिक लेकर साधारण जीवन-यापनमें सन्तुष्ट है तो मंत्री बनकर या कोई भी सरकारी पद पाकर २५० रु० पानेकी आशा रखनेका उसे कोई अधिकार नहीं। और ऐसे बहुतसे कांग्रेसजन हैं जो सेवा संस्थाओंमें सिर्फ २५ रु० मासिक ले रहे हैं और वे किसी भी मंत्रीपदकी जिम्मेदारी बड़ी योग्यताके साथ उठा सकते हैं। बंगाल और महाराष्ट्रमें ऐसे योग्य आदमी बहुत मिलेंगे जिन्होंने सार्वजनिक सेवाके लिए अपने आपको अर्पण कर दिया है। सिर्फ गुजारे भरके लिए लेकर ये लोग देशकी सेवा कर रहे हैं। उन्हें कहीं भी रखा जाय वे अपनेको हर जगह सुयोग्य साबित कर सकते हैं। लेकिन उन्होंने अपने लिए जो सेवाक्षेत्र चुन लिये हैं उनका त्याग करनेके लिए उन्हें प्रलोभन नहीं दिया जायगा और उन्हें स्वेच्छासे चुने हुए अपने अमूल्य अज्ञातवाससे घसीट कर बाहर लाना गलत होगा। यह सारे संसारके लिए सत्य है और इस देशके लिए शायद और भी ज्यादा सत्य है कि आम तौर पर अच्छेसे अच्छे और सबसे उत्तम दिमागके आदमी मंत्री नहीं बनते न वे सरकारी पद ही स्वीकार करते हैं।

हो सकता है कि अच्छेसे अच्छे और सबसे ऊंचे दिमागके आदमी कांग्रेसी सरकारें चलानेके लिए हमेशा न मिलें परन्तु मंत्री और दूसरे पदों पर आसीन कांग्रेसजन स्वार्थरहित योग्य और निर्दोष चरित्रके

न होंगे, तो स्वराज्य हमारे लिए सदा दूरका स्वप्न हो जायेगा। अगर कांग्रेस कमेटियाँ नौकरियाँ प्राप्त करनेके अखाड़े बन जायँ जिनमें सबसे अधिक हिम्मतवाले आदमी ही बाजी मार सकें, तब तो ऐसे व्यक्तियोंके मिलनेकी संभावना कम ही रहेगी। १

४१

वेतनोंका स्तर

प्रान्तीय धारासभाओंके सदस्य और मंत्री सच्चे लोकसेवकोंकी तरह अपनी अपनी जगह काम करने पहुँच गये हैं। अंग्रेज सरकारने अब तक इन जगहोंके लिए जो वेतन दिये हैं, वैसे ही वेतन वे लोग नहीं ले सकते। अगर उन्होंने लिये तो इसकी कीमत उन्हें चुकानी पड़ेगी। यह भी कोई जरूरी नहीं कि अमुक वेतन उन्हें देना तय किया गया है, इसलिए उनमें से हर कोई वेतन ले ही। वेतनका जो पैमाना निश्चित होता है उससे तो वेतनकी मर्यादा ही बँधती है — यानी उससे अधिक वेतन कोई नहीं ले सकता। लेकिन पैसेवाले लोगोंके लिए तो यह एक शोभाकी बात होगी कि वे पूरा या थोड़ा भी वेतन न लें। वेतन तो उन लोगोंके लिए है जो बिना कुछ लिये आसानीके साथ अर्थात् सेवाभावसे काम नहीं कर सकते। वे दुनियाके गरीबसे गरीब लोगोंके प्रतिनिधि हैं। उन्हें मिलनेवाली पाई पाई गरीबोंकी कमाईसे आती है। वे इस महत्त्वकी बातको ध्यानमें रखें और उसके अनुसार रहें और व्यवहार करें। १

४२

मन्त्रियोंका वेतन

प्र० — इस बार कांग्रेसके बहुमतवाले प्रान्तोंमें मन्त्रियोंका वेतन वृद्धि किस सिद्धान्त पर की जा रही है? क्या कराचीवाला कांग्रेस प्रस्ताव आजकी परिस्थितिमें लागू नहीं होता? यदि महंगाईके प्रभावमें आकर ऐसा किया गया है तो क्या प्रान्तोंके बजटमें ऐसी गुंजाइश है कि प्रत्येक सरकारी नौकरका वेतन तिगुना किया जा सके? यदि नहीं तो क्या यह उचित है कि मन्त्री ५०० रुपयेसे १५०० कर लें और गांवके अध्यापक और चपरासीको यह उपदेश किया जाय कि वह अपना निर्वाह १२ और १५ रुपये माहवारमें करे और शासन प्रबन्धमें कोई अस्थिरता इसलिए उत्पन्न न करे कि कांग्रेस शासन चला रही है?

उ० — प्रश्न बिलकुल ठीक है कि मन्त्रियोंको ५०० रुपये क्यों और चपरासी या शिक्षकको १५ रुपये क्यों? लेकिन प्रश्न उठानेसे ही वह हल नहीं हो जाता। ऐसे अन्तरका सिलसिला सनातन जैसा है। हाथीको मन क्यों और चींटीको कण क्यों? इस प्रश्नमें ही इसका उत्तर समाया हुआ है। जितनी जिसकी जरूरत है ईश्वर उसे उतना दे देता है। मनुष्यकी जरूरत हाथी और चींटीकी तरह स्पष्ट हो सके तो शायद शंका ही न उठे। अनुभव तो हमें यही बताता है कि सब मनुष्योंकी आवश्यकता एकसी नहीं हो सकती जैसे सब चींटियोंकी या सब हाथियोंकी एकसी होती है। भिन्न भिन्न भागों और भिन्न भिन्न जातियोंकी आवश्यकताएं अलग अलग रहती हैं। इसलिए आज तो जो अन्तर है उसे कमसे कम करनेकी खातिर आन्दोलन कर लोकमत बनावें और एक आदर्श सामने रखकर उसकी ओर कूच करें। जबरदस्तीसे या सत्याग्रहके नाम पर दुराग्रह करके हम परिवर्तन नहीं करा सकेंगे। मन्त्रीगण हम लोगोंमें से हैं। मन्त्री बननेसे पहले भी उनकी आवश्यकताएं

चपरासिया जसी नही थी। म चाहूगा कि चपरासी मत्रीपदके लायक बनें और तब भी अपनी आवश्यकताए चपरासी जितनी ही रखें। इतना समझ लें कि कोइ मत्री निश्चित मर्यादा तक वेतन लेनेके लिए बधा हुआ नहा है।

प्रश्नकारकी एक बात सोचने लायक जरूर है। क्या चपरासी १५ रुपयेमें बिना रिश्वत लिये अपना और कुटुम्बका निर्वाह कर सकता है? यदि नहा तो उसको ज्यादा मिलना ही चाहिये। इलाज यह है कि यथासभव हम सब अपने अपने चपरासी बनें और इतने पर भी जो चपरासी आवश्यक हो उन्हें उनकी जरूरतके अनुसार वेतन दें और इस तरह मत्री और चपरासीके जीवनमें जो बडा अतर है उसे मिटायें।

मत्रियोंका वेतन ५०० से १५०० रुपये क्यों हुआ यह भिन्न प्रश्न है। लेकिन मूल प्रश्नकी तुलनामें यह छोटा है। मूल प्रश्न यदि हल हो सके, तो छोटा प्रश्न अपने आप हल हो जायगा। १

४३
मन्त्रियोंके वेतनमें वृद्धि

थोडे दिन हुए मने 'हरिजन' में दकी कलमसे एक पैरा मत्रियोंकी वेतन वृद्धिके बारेमें लिखा था। उसका मुझे बहुत बडा मूल्य चुकाना पडा है। बहुत लम्बे लम्बे पत्र मुझे पढने पडते ह जिनमें मेरा साव धानी पर दुःख प्रकट किया जाता है, और मुझे समझाया जाता है कि म अपनी राय बदल दू। मत्रियोंके वेतन पहलेसे ही बहुत ज्यादा ह। इनको और भी बढाना कहा तक उचित है जब कि गरीब चप रासियो और कर्मचारियोंको सिर्फ इतना तनख्वा मिलती है जिसमें उनका गुजारा भी नहा हो पाता। मैं अपनी टिप्पणीको फिर पढा है और मेरा दावा है कि जो कुछ पत्रलेखक चाहते ह वह सब उस छोटीसी टिप्पणीमें आ गया है। पर कोई गलतफहमी न हो इसलिए उसका अर्थ म और स्पष्ट कर देता हू।

मुझे खाना मिला है कि मन कराचीवाले प्रस्तावके बारेमें सोचा ही नहीं। मंत्रियोंको जो कम वेतन लेना चाहिये वह सिर्फ इसलिए नहीं कि कांग्रेसने एक प्रस्ताव पास करके उसका आदेश दिया है बल्कि उसके लिए इससे बहुत ऊंचा कारण है। जहां तक मैं जानता हूं कांग्रेसने उस प्रस्तावको कभी बदला नहीं और वह आज भी उतना ही लागू होता है जितना कि पास होनेके समय लागू होता था।

मैं यह नहीं कहता कि वेतनोंमें की गई वृद्धि ठीक है। लेकिन मैं मंत्रियोंकी बात सुने बिना इसको बुरा भला नहीं कह सकता। टीका करनेवालोंको यह समझ लेना चाहिये कि मेरा उन पर या अपने सिवा किसी पर भी कोई अधिकार नहीं है। न ही मैं कार्यसमितिकी सारी बैठकोंमें हाजिर होता हूं। जब सभापति चाहते हैं तभी मैं वहां जाता हूं। मैं तो सिर्फ अपनी राय दे सकता हूं फिर उसकी कीमत जो कुछ भी हो। और उसकी कीमत तभी हो सकती है जब सोच विचार कर दलीलों पर आधार रखकर राय दी जाय।

अमीर और गरीबमें ऊंची नौकरियों और छोटी नौकरियोंमें भयानक अंतरका प्रश्न एक अलग विषय है। इसके लिए बहुत सोच विचारकी जरूरत है और परिवर्तन धीरेसे करना पड़ेगा। थोड़े मंत्रियों और उनके सचिवोंके बदलनेके सिलसिलेमें लिये हाथ इसका निपटारा नहीं हो सकता। दोनों बातोंका अपने अपने महत्त्वके अनुसार निर्णय होना चाहिये। मंत्रियोंके वेतनका प्रश्न तो मंत्री आप ही हल कर सकते हैं। दूसरा प्रश्न इससे कहीं अधिक व्यापक है और उसमें बहुत बारीकीसे जांच पड़ताल करनेकी जरूरत होगी। मैं तो हमेशा यह माननेको तैयार हूं कि मंत्रियोंको फौरन ही अपने अपने प्रान्तमें इस कामको अपने हाथमें लेना चाहिये और सबसे पहले नीची नौकरीवालोंके वेतनों पर विचार करके जहां जरूरी हो वेतन बढ़ा देने चाहिये। १

हम ब्रिटिश हुकूमतकी नकल न करें

१५ अगस्तका दिन आया और चला गया। सारे हिन्दुस्तानके लोगोंने बड़ी धूमधामसे और अनोखे उत्साहसे स्वतंत्रता दिवस मनाया। उनका यह सोचना ठीक ही था कि साम्राज्यवादी हुकूमतके नीचे उन्हें जितने भी भयंकर कष्ट और यातनायें सहना पड़ीं वे सब अब पुराने जमानेकी निशानियां बन जायेंगी। जीवनमें पहली बार गांवके गरीबसे गरीब किसानोंकी निराशापूर्ण आंखें खुशीसे चमक उठीं। इस मौके पर शहरके मजदूरोंके उदास दिल भी खुशीसे उछलने लगे। इस विशाल देशके हरएक दबे और कुचले हुए पुरुष और स्त्रीने हार्दिक उत्साह और उमंगके साथ स्वतंत्रता दिवस मनाया, क्योंकि बरसोंके दुःख दर्द और कुर्बानियोंके बाद आखिर हिन्दुस्तानके पराधीन मानवको आशाकी झलक दिखाई दी — उसे अधिक अच्छे दिनोंकी और अपना बोझ हलका होनेकी भनक सुनाई पड़ी।

लेकिन स्वतंत्रता दिवसकी खुशियोंके बाद ही नई दिल्लीसे एक सरकारी सूचना निकली जिसमें प्रांतोंके गवर्नरोंके निश्चित किये हुए वेतन और भत्तोंकी घोषणा की गई है। भोलीभाली जनताने यह आशा लगा रखी थी कि साम्राज्यवादी हुकूमतके साथ ही उच्च अधिकारियोंके बड़े बड़े वेतनोंके भारसे दबा हुआ शासनतंत्र भी खतम हो जायगा जो गुलाम हिन्दुस्तानको साम्राज्यवादके फंदेमें फंसाये रखनेके लिए ही पैदा किया गया था। आजसे पहले दशकों प्रत्येक राजनीतिक नेताने, प्रत्येक प्रसिद्ध अर्थशास्त्रीने वाइसराय, केन्द्रीय मंत्रियों और प्रान्तीय गवर्नरों आदि सरकारी अधिकारियोंको दिये जानेवाले बड़े बड़े वेतनों और उनके भत्तोंकी स्पष्ट शब्दोंमें कड़ी निन्दा की थी। इस बारेमें कांग्रेसने कई प्रस्ताव पास किये थे।

यराचा याग्रसव प्रसिद्ध प्रस्तावमें गवरारके ऊचस ऊच अधिकारावा वेतन ५०० ६० माह्वार निश्चित किया गया था। लेकिन आज न्याय यह सब भुला दिया गया है और गवर्नराका वेतन ५५०० रु० माह्वार निश्चित किया गया है।

गरम पहलूसे हम यह देखें कि दूसरे देशोंमें एस ऊच अधिकारियोको क्या वेतन दिया जाता है। दुनियाके सबस धनी राष्ट्रके सबस धनी राज्य न्यूयार्कमें गवनरको १० हजार डालर वार्षिक दिये जाते है जो हमारे हिसाबसे तीन हजार रुपये माहमारसे भी कम होते है। अमेरिकाके आइडाहो नामक राज्यके गवनरका वतन १५०० रु० माहवारसे भी कम होता है। अमेरिकाका एक दूसरा राज्य मरीलण्ड अपने गवनरको १ ०० रु० माह्वारसे कुछ ही ज्यादा वेतन देता है। इलिनोइसका जिसकी आबादी उडीसा या आसामके बराबर है गवनर हजार रुपयसे कुछ ही ज्यादा पाता है। दक्षिण अफ्रीकाके यूनियनमें प्रान्तोके शासकाको, जो हमारे हिंदुस्तानी गवनराके दरजके होते है हर माह २२० स २७०० रु० के बीच वतन दिया जाता है। आस्ट्रेलियामें क्वीसलण्डके गवनरको ३ हजार रुपय माहवारसे कुछ ही ऊपर वेतन मिलता है। इसे सब कोई जानते है कि स्टलिनको ३५० रु माह्वार वतन दिया जाता था। ग्रेट ब्रिटनके मंत्रि मडलके मंत्रियाके वतनकी तुलना हमारे गवनरोके वेतनोसे नही की जा सकती क्योंकि वे लोग अपने पूरे देश पर शासन करते है। फिर भी उनका वतन हिंदुस्तानी गवनरके वेतनसे ज्यादा नही होता। यह ध्यानमें रखना चाहिये कि ऊपर बताये देशाके इन अधिकारियोको अपने वेतनोमें से इन्कम टक्स और दूसरे टक्स भी देने होते है। इसलिए बिना किसी विरोधके यह कहा जा सकता है कि हिंदुस्तानी गवनरका वतन दुनियामें सबसे ऊचा है।

अब हम इन बातो पर दूसरे पहलूसे विचार करें। हिंदुस्तानका गवनर अपने प्रान्तका प्रथम नागरिक सेवक है। इसलिए हम उस सेवककी

आयकी उसकी स्वामिनी (जनता) की आयसे तुलना करें। दूसरे विश्वयुद्धसे पहले प्रत्येक हिंदुस्तानीकी औसत सालाना आय ६५ रु० कूता गई थी। अगर हम एक सामान्य किसान या मजदूरकी औसत सालाना आयका हिसाब लगायें तो वह इससे बहुत कम होगी। प्रो० कुमारप्पाके हिसाबसे यह आय केवल १२ रु० थी और प्रिंसिपाल अग्रवालने यह सालाना रकम १८ रु० निश्चित की है। इन सारे औसतोंका हिसाब लगाने पर हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि एक हिंदुस्तानी गवर्नरकी आय अपने स्वामियोंकी आयसे हजार गुना ज्यादा होती है। और अगर हम नीचेसे नीचे वर्गके लोगोंकी जिनकी हिंदुस्तानमें बहुत ही बड़ी संख्या है सालाना आयको लें तो सेवक और स्वामियोंकी आयके बीचका यह भेद ४ हजार गुना तक पहुंच जाता है। अमरिकामें भी जिसे सबसे बड़ा पूंजीवादी देश कहा जाता है और जहां सबसे अधिक आर्थिक असमानता पाई जाती है एक गवर्नरकी आय किसी अमरिकन नागरिककी औसत आयसे केवल २० गुना ज्यादा होती है।

दूसरे प्रकारकी तुलना इस समस्या पर और अधिक प्रकाश डालेगी। प्रांतोंके शासन-प्रबंधमें चपरासियोंका नजर सरकारी दफ्तरोंमें सबसे नीचा होता है। मध्यप्रांतमें एक चपरासीका मासिक वेतन ११ रु० है। दूसरे प्रान्तोंमें यह कुछ कम या ज्यादा हो सकता है। जब एक गवर्नर और चपरासीके वेतनमें इतना बड़ा फर्क हो तब प्रांतका पूरा शासन-तंत्र आम जनताके भलेके लिए सामाजिक कल्याण और उन्नत व्यवस्था स्थापित करनेमें उत्साहसे एक-चित्तता तरह कैसे काम कर सकता है? चाहे हम चाहे अपनी नीचीसे नीची राष्ट्रीय आयको लें नीचेसे नीचे चपरासीके वेतनको लें या चोटी पर बैठे गवर्नरके वेतनको लें हमें दुनियामें हिंदुस्तानकी मिसाल कहीं नहीं मिलेगी।

जब प्रांतके गवर्नरोंको इतनी बड़ी बड़ी रकमें दी जाती हैं तब हम दूसरे ऊंचे वेतन पानेवाले सरकारी अधिकारियोंके वेतन घटानेके बारेमें क्या सोच सकते हैं ? अगर ऊंचे वेतन घटाये नहीं जा सकते और नीचे वेतन बढ़ाये नहीं जा सकते तो प्रांतोंमें अधमरी सारी प्रजाको शिक्षा देने या डाक्टरी सुविधायें देनेकी बड़ी योजनाओंको अमलमें लानेके लिए पैसे कहांसे लायें ? हम इस भ्रममें न रहें कि आजादीके आते ही कल्की भयंकर गरीबीवाला राष्ट्र थोड़े ही समयमें धनी और उन्नत राष्ट्र बन जायगा ताकि वह अपने गवर्नरों और दूसरे ऊंचे अधिकारियोंको ऊंचे ऊंचे वेतन दे सके। सोवियट यूनियनको अपनी राष्ट्रीय आय बढ़ानेके लिए तीन पंचवर्षीय योजनायें बनानेकी जरूरत पड़ी। बम्बई-योजना बनानेवालोंके अनुमान भी १० अरब रुपयेकी पूंजी लगाने पर १५ वर्षके अन्तमें हर हिन्दुस्तानीकी औसत सालाना आय १३ रुपये ही कूता है। इसलिए एक ही दिनमें हिन्दुस्तानके धनी बन जानेके सुनहले सपने जितनी जल्दी छोड़ दिये जायं उतना ही हम सबके लिए अच्छा होगा। सत्य बड़ा कठोर है और हमें ईमानदारीके साथ उसका पूरा सामना करना चाहिए। हम अपने नौकरोंको और अधिकारियोंको इतनी बड़ी बड़ी रकमें नहीं दे सकते।

डा० के० अग

[यद्यपि मैं प्रो० अग द्वारा दिये हुए आंकड़ोंके बारेमें निश्चित रूपसे कुछ नहीं कह सकता फिर भी उन्होंने हिन्दुस्तानके गवर्नरों और दूसरे ऊंचे अधिकारियोंके बड़े बड़े वेतनोंके बारेमें और हमारी सरकारों द्वारा अपने नौकरोंको दिये जानेवाले ऊंचेसे ऊंचे और नीचेसे नीचे वेतनोंकी भयंकर विषमताके बारेमें जो कुछ लिखा है उसका समर्थन करनेमें मुझे कोई हिचकिचाहट नहीं है। — मो० क० गांधी] १

४५

स्वतंत्र भारतके मंत्रियोंसे

[ता० १५-८-'४७ को दिन बंगालके मंत्रिगण गांधीजीको प्रणाम करने आये थे। उनसे गांधीजीने कहा]

आप सब आजसे कांटोंका ताज सिर पर रखते हैं। सत्ताका पद बुरी चीज है। इसलिए आप शासनमें विवेकपूर्ण व्यवहार करना। आप सबको ज्यादासे ज्यादा सत्य-परायण, अहिंसा-परायण, नम्र और सहनशील होना चाहिये। अंग्रेजोंकी हुकूमत चलती थी तब भी आपकी कसौटी हुई थी, फिर भी वह इतना कठिन नहीं था। परन्तु अब तो लगातार आपकी कसौटी ही कसौटी है। वैभवके जालमें न फंसना। ईश्वर आपकी मदद करे! आपको गांवों और गरीबोंका उद्धार करना है। १

४६

मंत्रियों तथा गवर्नरोंके लिए विधि-निषेध

स्वतंत्र भारतमें मंत्रियों और गवर्नरोंको कैसे रहना चाहिये इस पर गांधीजीने कुछ बातें कहीं:

(१) मंत्रियोंको अथवा गवर्नरोंको जहां तक हो सके वहां तक अपने देशमें उत्पन्न होनेवाली वस्तुयें ही काममें लेनी चाहिये, करोड़ों गरीबोंकी खादी, फिर इसके लिए उन्हें तथा उनके कुटुम्बको खादी ही पहनना चाहिये और अहिंसाके प्रतीक चरखेको हमेशा घूमता हुआ रखना चाहिये।

(२) उन्हें दोनों लिपियां (नागरी और उर्दू) मालूम होनी चाहिये। जहां तक हो सके आपसकी बातचीतमें भी उन्हें अंग्रेजीका व्यवहार नहीं करना चाहिये। सार्वजनिक रूपमें तो उन्हें हिन्दुस्तानी ही बोलनी चाहिये और अपने प्रान्तकी भाषाका सतत उपयोग करना चाहिये। आफिसमें भी जहां तक हो सके हिन्दुस्तानीमें ही पत्र-व्यवहार होना चाहिये और सरक्यूलर भी हिन्दुस्तानीमें ही निकाले जाने चाहिये। ऐसा होनेसे लोगोंमें व्यापक रूपसे हिन्दुस्तानी सीखनेका उत्साह बढ़ेगा और धीरे धीरे हिंदुस्तानी भाषा अपने-आप देशकी राष्ट्रभाषा बन जायगी।

(३) उनके दिलमें अस्पृश्यता जाति-पांति या मेरे-तेरेके भेदभाव नहीं होने चाहिये। किसीका मोह भी असर कहीं चलना नहीं चाहिये। सत्ताधारीकी दृष्टिमें अपना सगा बेटा सगा भाई या एक सामान्य माना जानेवाला नागरिक कारीगर या मजदूर सभी एकसे होने चाहिये।

(४) इसी तरह उनका व्यक्तिगत जीवन भी इतना सादा होना चाहिये कि लोगों पर उसका प्रभाव पड़े। उन्हें हर रोज देशके लिए एक घंटा शारीरिक श्रम करना ही चाहिये। भले वे चरखा कातें या अपने घरके आसपास अन्न फल या सागभाजी उगाकर देशके खाद्य उत्पादनको बढ़ायें।

(५) मोटर और बंगले तो होने ही नहीं चाहिये। आवश्यक हो वैसा और उतना बड़ा साधारण मकान उन्हें काममें लेना चाहिये। हां अगर दूर जाना हो या किसी खास कामसे जाना हो तो वे जरूर मोटरका उपयोग कर सकते हैं। लेकिन मोटरका उपयोग मर्यादित होना चाहिये। मोटरकी थोड़ी बहुत जरूरत तो कभी कभी रहेगी ही।

(६) मेरी तो यह इच्छा है कि मंत्रियों और गवर्नरके मकान पास पास हों जिससे वे एक-दूसरेके विचारोंमें कुटुम्बोंमें और कामकाजमें ओतप्रोत हो सकें।

(७) घरके दूसरे सदस्य और बच्चे घरमें हाथसे ही काम करें। नौकरोंका उपयोग कमसे कम होना चाहिये।

(८) आज जब देशके करोड़ों मनुष्योंको बैठनेके लिए शतरंजी तो क्या पहननेके लिए कपड़े भी नहीं मिलते तब विदेशी महंगा फर्नीचर — सोफासेट, आलमारियां या चमकीली कुर्सियां बैठनेके लिए नहीं रखी जानी चाहिये।

(९) अंतमें मंत्रियों और गवर्नरोंका किसी प्रकारका व्यसन तो होना ही नहीं चाहिये। १

४७

दो शब्द मंत्रियोंसे

[ता० २५-९-३७ के 'हरिजनसेवक' में छपे 'उड़ीसाका संकट' नामक लेखमें गांधीजीने मंत्रियोंको सलाहके दो शब्द कहे थे जो नीचे दिये जाते हैं।]

दो शब्द मंत्रियोंसे भी। उन्हें जो कुछ भी आर्थिक दान मिलेगा उससे तो संकटका आंशिक निवारण ही होगा। इसलिए उन्हें दो बातें करनी चाहिये। पहली बात तो यह है कि जो भी आदमी संकटग्रस्त मिलता है उसके लिए यह कोशिश की जाय कि वह किसी उत्पादक काममें लगकर अपनी सहायता खुद करना सीखे। बिहारमें कताई बुनाईका काम अपनाया गया था। उड़ीसामें अगर लोग चरखेके कामको न चाहते हों तो वे और कोई उद्योग ले सकते हैं। असल बात है श्रमधर्मका गौरव सीखे सबसे। खुद मंत्री भी थोड़ा देरके लिए अपना कुर्ता उतार कर रख दें और साधारण मजदूरोंकी तरह काम करें। इससे उन लोगोंको प्रोत्साहन मिलेगा जिन्हें काम और उससे प्राप्त होनेवाली मजदूरीकी जरूरत है। दूसरे मंत्री कुशल इसी

नियराकी तलाश करके उसके कोनोंको इस प्रकार काममें लायें जिससे वर्षाके मौसममें नदियोंके प्रलयकारी प्रवाहका ऐसा मार्ग निकाला जा सके कि वह उपयोगी बन जाय। १

४८

मन्त्रियोंको मानपत्र और उनका सत्कार

एक सज्जनकी बातचीतका जो मुझसे मुलाकात करने आये थे सक्षेपमें यह निचोड़ है

> आपको शायद यह पता न हो कि मंत्रियोंकी आज क्या दशा हो रही है। कांग्रेसजन सत्रह साल तक सरकारी पदोंसे अलग रहे हैं। अब वे देखते हैं कि जिस सत्ताका उन्होंने पहले अपनी इच्छासे परित्याग कर दिया था वह सत्ता उनके चुने हुए प्रतिनिधियोंके हाथमें आ गई है। उन्हें यह नहीं समझमें आता कि अपने इन प्रतिनिधियोंके साथ किस तरह बरताव करना चाहिये। वे उनको मानपत्रों और स्वागत सत्कारोंसे नाकमें दम कर देते हैं और चाहते हैं कि वे उनसे मुलाकात करें क्योंकि यह उनका हक है। उनके सामने वे तरह तरहके सुझाव रखते हैं और कभी कभी छोटी मोटी मेहरबानियां भी उनसे कराना चाहते हैं।

मन्त्रियोंको देशकी सेवा करनेके लिए अशक्त बना देनेका यह सबसे अच्छा तरीका है। इन मन्त्रियोंके लिए यह काम अभी नया नया है। शुद्ध न्यायबुद्धिसे काम करनेवाले मंत्रीके पास मानपत्र तथा स्वागत-सत्कार ग्रहण करने अथवा अतिशयोक्तिपूर्ण या उचित प्रशंसात्मक भाषण देनेके लिए समय ही नहीं होता न ऐसे मुलाकातियोंके साथ बैठकर बातें करनेका ही उनके पास समय होता है जिन्हें उन्होंने मिलनेके लिए बुलाया न हो या जिनसे उन्हें अपने काममें कोई

उनकी इस बारा साथीसे उन कुछ मिलना नहा। इसलिए अगर हमारे लोग अपने मंत्रियोको मानपत्र देत उनसे मुलाकातें मागन या उन्हें लम्बे लम्बे पत्र लिखनेमें समय बाम लें तो इससे मंत्रियोका लाभ ही होगा। १

४९
मानपत्र और फूलाके हार

प्र० — एक भाई शिकायत करते है यहुतसे प्रान्तोंमें काग्रेसी मंत्रि मडल स्थापित हो गये है और आम जनताको इस पर गर्व है। इसलिए जब कोई मंत्री किसी जगह जाता है तो वहाकी स्थानीय कमेटिया या दूसरी सस्थाए उसे कीमती मानपत्र देकर उसके प्रति अपना आदर भाव प्रकट करती है। करीब करीब सभी मामलोंमें इस तरह की जानवाली चीजें मंत्रीकी अपनी सपत्ति बन जाती है। मेरी रायमें यह प्रथा ठीक नही है। या तो इस तरह मानपत्र लेनेका यह सिलसिला बन्द किया जाना चाहिये या इस तरह दी गई चीजें स्थानीय काग्रेस कमेटीको मिलनी चाहिये। मंत्रियो या काग्रेसके नेताओको फूलोके हार वगैरा पहनानेके बारेमें भी कोई निश्चित नीति होना चाहिये। मैंने कई जगह यह देखा है कि मंत्रियोका स्वागत करते समय उन्हें ऐसे हार पहनाये जाते है जिनकी कीमत ३०–४०० रुपयेसे कम नही होती। यह पैसेकी निरी बरबादी है।

उ — यह एक उचित शिकायत है। आम जनताकी सेवा करने वाले किसी भी सेवकको अपने कामके लिए न तो कीमती मानपत्र लेने चाहिये और न बहुमूल्य फूलोके हार वगैरा लेने चाहिये। यह वस्तुत बुरी बात भले न हो मगर एक दु खदायक बात तो बन ही गई है। इसके बचावमें अक्सर यह दलील दी जाती है कि मान पत्रकी कीमती चौखटा और फूलोके बहुमूल्य हारो व गुलदस्तोकी

बल्कि इन चीजोंके बनानेवाले कारीगरोंको यश मिलता है। लेकिन ये कारीगर तो मंत्रियों और उनके जैसे दूसरोंकी मददके बिना भी अपना काम अच्छी तरह चला सकते हैं। मंत्री वगैरा अपने मौज शौकके लिए दौरा नहीं करते। उनके दौरे कामके सिलसिलेमें होते हैं और उनके पीछे अक्सर यह खयाल रहता है कि वे लोगोंसे प्रत्यक्ष मिलकर उनकी बातें सुन सकें। उन्हें दिये जानेवाले मानपत्रोंमें उनके गुणोंकी प्रशंसा करना जरूरी नहीं, क्योंकि गुण तो स्वयं ही अपने परिचायक हैं। मानपत्रोंमें तो स्थानीय जरूरतें और [illegible] बताना, यदि ऐसी कोई शिकायतें हों, उल्लेख किया जाना चाहिये। मंत्रियों और उनके सचिवोंके सामने कई बड़े काम पड़े हैं। लोगोंकी मानपत्रभरी तारीफोंसे मंत्रियोंके काममें मदद पहुंचनेके बजाय रुकावटें पैदा होंगी। १

५०

मंत्रियोंको चेतावनी

मेरे पास आकर कई लोगोंने यह कहा है कि कांग्रेसी मंत्री पुराने अंग्रेज अधिकारियोंकी तरह ही मनमाने ढंगसे काम करते हैं। इस पर प्रकाश डालनेवाले कुछ कागजात भी वे लोग मेरे पास छोड़ गये हैं। इस सम्बन्धमें मैंने मंत्रियोंसे बातचीत नहीं की। लेकिन इस मामलेमें मेरी यह स्पष्ट राय है कि जिन बातोंके लिए हम अंग्रेज सरकारकी आलोचना करते रहे हैं, उनमें से कोई भी बात जिम्मेदार मंत्रियोंके शासनमें नहीं होनी चाहिये। अंग्रेजी शासनके दिनोंमें वाइसराय कानून बनाने और उन पर अमल करानेके लिए आर्डिनेंस निकाल सकते थे। तब न्याय और शासनका काम एक ही व्यक्तिके हाथमें रहनेकी बातका विरोध किया गया था। लेकिन आज तक ऐसी कोई बात नहीं हुई जिससे इस विषयमें राय बदलना जरूरी हो। इसमें आर्डि-

नमका नाम बिल्कुल नहीं होना चाहिये। कानून बनानेका अधिकार सिर्फ आमसभा धारासभाओंको रहे। मंत्रियोंको जब जनता चाहे तब उनको पदसे हटाया जा सकता है। उनके बनाये कायदे वगैराका अधिकार आमसभा धारासभाको रहे। उन्हें न्यायका सारा गहरा और निर्दोष बनानेकी भरसक कोशिश करना चाहिये। इस ध्येयको पूरा करनेके लिए पंचायत राज का सुझाव रखा गया है। उच्च न्याया-ध्यक्ष लिए यह सभव नहीं कि वह लाखों लोगोंके झगडे निपटा सके। सिर्फ असाधारण परिस्थितियोंमें ही आकस्मिक कानून बनानेकी जरूरत पडती है। कानून बनानेमें कुछ ज्यादा देर भले लगे, लेकिन न्याय स्थापिका सभा (एक्जिक्यूटिव) को धारासभा पर हावी नहीं होने दिया जाय। इस समय कोई उदाहरण तो मेरे दिमागमें नहीं है। लेकिन अलग अलग प्रान्तोंसे मेरे पास जो पत्र आये हैं उन्हींके ही आधार पर मैंने ये बातें कही हैं। इसलिए जब मैं जनतासे यह अपील करता हूं कि वह कानूनको अपने हाथमें न ले तब जनताके मंत्रियोंसे भी मैं अपील करता हूं कि जिन पुराने तरीकोंकी उन्होंने निन्दा की है उन्हींको खुद अपनानेके बारेमें वे सावधान रहें। १

५१

गरीबी लज्जाकी बात नहीं

लोग कहते हैं कि पहले कांग्रेसको १ लाख रुपये जमा करनेमें भी मुसीबत होती थी। लोग देते तो थे मगर हम भिखारी थे। आज करोडों रुपये हमारे हाथमें आ गये हैं। करोडों लेनेकी ताकत भले आई पर खर्च तो हमारा वही अंग्रेजी जमानेवाला है। कुछ लोग यह मानते हैं कि जितना रुपया उडाना है उडावें। शानसे रहें तब उसका असर देशके बाहर भी पडेगा। लेकिन उन्हें समझना चाहिये कि पैसा नौकरके लिए खर्च करना चाहिये या देशके कामके लिए? यह बात ठीक है कि हम

इनके साथ मुकाबला कर ला कर सकते हैं। पर वहां एक आदमीकी जो आमदनी है उससे यहां बहुत कम है। ऐसा गरीब देश दूसरे देशोंके साथ ऐसा मुकाबला करे तो वह मर जायगा। दूसरे देशोंमें हमारे प्रतिनिधि भी यह बात समझें। अमेरिकाका मुकाबला रहने दो। खानमें पार्टियों और पार्टियां दलमें व जो दावा करते थे कि हमारी हुकूमत आवेगा तो हमारा भी रंग-ढंग बदल जायगा वह उन्हें भूठला देना चाहिये। हमारे त्यागी कांग्रेसवाले भी ऐसा गलती कर ला यह सोचनेकी बात है।

फिर लोग कहते हैं कि मंत्री लोग इतने पैसे लेते हैं तब हम सरकारकी नौकरी करें तो हम भी ज्यादा पैसे मिलने चाहिये। सरकार कल्पका अगर १५०० रुपये मिलें तो हमें ५०० तो मिलने ही चाहिये। यह हिन्दुस्तानमें रहनेका तरीका नहीं है। जब हरएक आदमी आत्मशुद्धिका प्रयत्न करता हो तब यह सब सोचना कैसा? पैसेसे किसीकी कीमत नहीं होना। १

५२

अनाप शनाप सरकारी खर्च और बिगाड़

जब करोड़ों मनुष्य पारावार कठिनाइयां झेल रहे थे उस समय गांधीजी व्याकुल होकर सरकारी तंत्रमें होनेवाले अनाप शनाप खर्च और बिगाड़ देख रहे थे। और उनकी यह व्याकुलता उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही थी। उनकी चौकस निगाहसे कोई भी चीज बाहर नहीं रह सकती थी — विदेशोंमें राजदूतावासों का खर्च मंत्रियोंके निवास स्थानोंमें लगाया जानेवाला साज-सामान विदेशोंकी राजधानियोंमें रहने वाले राष्ट्रके प्रतिनिधियोंका रहन-सहन आदि। समय समय पर वे चेतावनी देते रहते थे। हमारे एक विदेशमें रहनेवाले राजदूतका उल्लेख किया आपके बारेमें जो खबर मुझे मिल रही है उन परसे मालूम

जाता है कि भारत आपसे जैसी अपेक्षा रखता है वैसा जीवन आप नहीं जी रहे हैं। क्या यह बात सही है?

१९४७ में गरमीके दिनोंमें उन्होंने दिल्लीमें एक मित्रसे कहा कि तमाम मंत्री यदि स्वेच्छापूर्वक सादगीका आदर्श अपना लें तो वे सारी दुनियाको मंत्रमुग्ध कर देंगे और प्रजाका विश्वास संपादन कर सकेंगे। बादमें प्रजाका यह विश्वास कोई भी चीज या व्यक्ति डिगा नहीं सकेगा और न कोई उसका नाश ही कर सकेगा। लेकिन यह बात तो अलग रही यहां तो उल्टे गवर्नरों तथा मंत्रियोंको महल जैसे मकान चाहियें अंगरक्षकोंकी बड़ी पल्टन चाहिये और भड़कीली पोशाक पहने हुए खिदमतगार चाहिये। भोजन समारंभोंको गवर्नर पदकी नीति रीतिका एक महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता है। यह सब मैं किसी भी तरह समझ नहीं पा रहा हूं। देशकी प्रतिष्ठाके लिए अधिक हानिकारक कौनसी चीज है — भारतके असंख्य मनुष्योंका अन्न वस्त्र और मकानकी तंगीकी स्थितिमें रहना या हमारे मंत्रियों तथा गवर्नरोंका अपने आसपासकी परिस्थितिसे बिलकुल मेल न खानेवाले शानदार और बेहद खर्चवाले मकानोंमें रहनेके बदले सादे और छोटे मकानोंमें सादगीसे रहना?

उन्होंने आगे कहा कि मेरा बस चले तो लोग जब भारी तंगी बरदाश्त कर रहे हैं ऐसे समय मैं सरकारी भोज समारंभ तत्काल बन्द कर दूं। मैं मंत्रियोंके रहनेके लिए सादे छोटे घर तो दूंगा लेकिन कांग्रेसी गवर्नरों या मंत्रियोंको सशस्त्र अंगरक्षक नहीं दूंगा। उन्होंने नीतिके रूपमें अहिंसाको अपनाया है और इसके परिणाम-स्वरूप यदि उनमेंसे कुछको मार भी डाला जाय तो मैं इस बातकी परवाह नहीं करूंगा। [१]

५३

क्या मंत्री अपना अनाज-कपड़ा राशनकी दुकानोंसे ही खरीदेंगे ?

प्र० — जब अन्न विभाग गवर्नरोंके सलाहकारोंके हाथमें था तब उन पर नियंत्रण रखनेकी कोई असरकारक पद्धति नहीं थी। परन्तु अब तो प्रान्तोंमें लोगोंकी जिम्मेदार सरकार कायम हो गई है। इसलिए अब स्थिति बदल गई है। कांग्रेसी मंत्रियोंका यह कर्तव्य है कि वे अपना अनाज वहींसे खरीदें जहांसे सामान्य लोग खरीदते हैं। अनाजका एक दाना भी वे दूसरी जगहसे न लें। इसका असर फौरन होगा और वह दूर तक पहुंचेगा। आज कपड़े और अनाजकी सरकारी दुकानें खुली चोरी और बेईमानीका अड्डा बन गई हैं। अगर कांग्रेसी मंत्री इन्हीं दुकानोंसे अपने हिस्सेका कपड़ा और अनाज खरीदें तो उनका नैतिक बल इतना बढ़ जायगा कि वे इन बुराइयोंका सफलतासे सामना कर सकेंगे।

उ० — यह प्रश्न इस तरहके बहुत पत्रोंका निचोड़ है। मुझे इन प्रश्नोंमें दी गई सलाह जंचती है। मैं मानता हूं कि मंत्री और दूसरे सरकारी नौकर ऐसा ही करते होंगे। सरकारी दुकानोंके सिवा तो अनाज खरीदनेका रास्ता काला बाजार ही है। अधिकारी लोगोंसे कितना ही क्यों न कहें कि काले बाजारमें मत जाओ, लेकिन उसका उतना असर नहीं होगा जितना उनके अच्छा उदाहरण सामने रखनेसे हो सकता है। अगर वे आम लोगोंके साथ अनाज खरीदें तो दुकानदार समझ जायगा कि सड़ा हुआ अनाज नहीं बेचा जा सकता। मैं सुनता हूं कि इंग्लैण्डमें तो यह आम रिवाज है कि मंत्रीगण और बड़े-बड़े अधिकारी वहींसे सामान खरीदते हैं जहांसे आम लोग खरीदते हैं। होना भी यही चाहिये। १

५४

सबकी आंखें मंत्रियोंकी ओर

ज्यों ही नये मंत्रियोंने अपने ओहदे संभाले त्यों ही कुछ अंग्रेज मित्रोंकी प्रेरणासे गांधीजीको इस आशयके पत्र मिले कि पहले जिन घरोंमें वाइसरायकी कार्यकारिणी समितिके सदस्य रहते थे उन घरोंके सुन्दर बगीचोंकी अब उतनी चिन्ता नहीं की जायगी। उनमें फूल नहीं खिलेंगे और जहां मखमल-सी मुलायम हरियाली फैली हुई है वहां अब ऊंची-ऊंची घास उगने और बढ़ने दी जायगी और सारा अहाता गन्दा बन जायगा। दरियां, कुर्सियां और फर्नीचर तख्ते और दूसरी चिकनाईके दागोंसे गन्दा हो जायगा और हाथ-मुंह धोनेकी जगह भी गंदी रहने लगेगी। इस पर गांधीजीने कहा: मैं इंग्लैंड और अफ्रीकामें रहा हूं और अंग्रेजोंको अच्छी तरह पहचानता हूं। इसलिए मैं अपने तजरबेके अनुभवसे कह सकता हूं कि सरकारी अंग्रेज सफाई और तंदुरुस्तीके कानूनोंको जानते हैं और उनका अमल करते हैं। अंग्रेज अफसर भी महलों जैसे मकानोंमें बादशाहोंकी तरह रहते थे। वे अपने घरों और आसपासकी जगहको साफ रखनेके लिए नौकरोंका एक बड़ा सा दल रखते थे। लोगोंके नेता अंतरिम सरकारमें उनके सेवकोंकी हैसियतसे गये हैं। उन्हें अपने यहां अनगिनत नौकर रखनेकी जरूरत नहीं। यदि उन्होंने ऐसा किया तो वे अपने ध्येयके प्रति झूठे साबित होंगे। इसलिए उन्हें अपने घर और घरोंके आसपासकी जगह अपनी ही मेहनतसे साफ-सुथरी रखनी होगी। उनके घरकी स्त्रियां भी इस काममें उनका साथ देंगी और इसका ध्यान रखेंगी। मैं जानता हूं कि इन नेताओंमें कोई भी ऐसे नहीं हैं जो अपने नहाने-धोनेकी जगहको खुद साफ करनेसे हिचकिचायें। कई साल पहले एक डाक्टर बहनने मुझसे कहा था कि वाइसरायका मकान एक महल है और

वह बिलकुल साफ-सुथरा रहता है परन्तु उनके हरिजन नौकरोंके घर इससे बिलकुल उल्टी तसवीर पेश करते हैं। जनताके नेता ऐसा कोई भेद नहीं रखेंगे। पंडित जवाहरलालके घरका एक हरिजन नौकर प्रांतकी धारासभाका सदस्य बना है। वे अपने नौकरोंको अपने घरके आदमीकी तरह ही रखते हैं। मुझे खुशी होगी यदि हमारे देशके नेता मंत्री बननेके बाद भी जीवनके हर क्षेत्रमें जीवनका ऊंचेसे ऊंचा स्तर बनाये रखेंगे। मुझे विश्वास है कि वे राष्ट्रको निराश नहीं करेंगे। १

५५

कांग्रेसी मंत्री साहब लोग नहीं

एक कांग्रेस सदस्य पूछते हैं

> क्या कांग्रेसी मंत्री उस साहबी ठाटसे रह सकते हैं जिस ठाटसे अंग्रेज रहते हैं? क्या वे अपने घरेलू कामोंके लिए भी सरकारी मोटरों आदिका उपयोग कर सकते हैं?

मेरी दृष्टिमें दोनों प्रश्नोंका एक ही उत्तर हो सकता है। यदि कांग्रेसको गरीबोंकी ही संस्था बनी रहना है तो उसके मंत्री साहब लोगोंकी तरह नहीं रह सकते और न वे सरकारी साधनोंका उपयोग घरेलू कामोंके लिए कर सकते हैं। १

५६

देशसेवा और मंत्रीपद

सेवा अर्थात् देशसेवा करना। देशसेवाका अर्थ यह नहीं है कि मंत्री बनें तो ही देशकी सेवा हो सकती है। घरकी सफाई रखना भी देशसेवा है। आजकल तो देशसेवाका नाम बदनाम हो गया है। लोग मानते हैं कि अखबारोंमें फोटो और नाम छपना अथवा जन्मे

आदर पाने योग्य बन जाना ही सच्ची इज्जत है। इसलिए सभी लोग मंत्री बनना और सत्ता लेना चाहते हैं। ऐसी हालतमें सच्चे मंत्री कैसे काम कर सकते हैं? बल्कि अन्य लोगोंकी तरह मंत्रियोंकी भी इज्जत करनी है। परन्तु मंत्री अगर मंत्रीपदके लिए योग्य हों तो ही यह शोभा देता है। उस पदको सुशोभित करना हमारा कर्तव्य हो जाता है। इसका हम समय समय पर अपने अपढ़ लोगोंको भी देशकी सेवा करना है—यदि उसके हृदयमें स्वाभिमानकी भावना हो। १

५७
कानूनमें दस्तंदाजी ठीक नहीं

अब मैं दूसरी बात लेता हूँ। कुछ जगहोंमें अधिकारियोंने कई ऐसे लोगोंको गिरफ्तार किया है जो दंगोंमें शामिल थे। पुरानी सरकारके दिनोंमें लोग वाइसरायसे दयाकी अपील करते थे। उन्हें बनाए हुए कानूनके मुताबिक काम करना पड़ता था फिर उसमें कितना ही बड़ा दोष क्यों न रहा हो। अब लोग अपने मंत्रियोंसे दयाकी अपील करते हैं। लेकिन क्या मंत्री अपनी मरजीके मुताबिक काम करेंगे? मेरी रायमें उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिये। मंत्री लोग जैसा चाहें वैसा नहीं कर सकते। उन्हें कानूनके अनुसार ही काम करना होगा। राज्यकी दयाका निश्चित स्थान होता है और काफी सावधानीसे उसका उपयोग किया जाना चाहिए। ऐसे मामले तभी वापिस लिये जा सकते हैं जब कि शिकायत करनेवाले लोग गिरफ्तार किये हुए लोगोंको छोड़नेकी अदालतसे अपील करें। भयंकर अपराध करनेवाले लोग इतनी आसानीसे नहीं छोड़े जा सकते। ऐसे मामलोंमें अपराधीके खिलाफ शिकायत करनेवालोंके गवाही न देनेसे ही काम नहीं चलेगा। अपराधियोंको अदालतमें अपना अपराध स्वीकार करना होगा और अदालतसे

कामोंमें ईमानदारीसे सहयोग दिया तो अपराधियोंको बिना सजा दिये छोड़ा जाना संभव हो सकता है। मैं जिस बात पर जोर देना चाहता हूँ वह यह है कि कोई भी मंत्री अपने प्रियसे प्रिय जनके लिए भी न्यायके मार्गमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता। ऐसा करनेका उसे कोई अधिकार नहीं है। लोकशाहीका काम है कि वह न्यायको सस्ता बनाये और ऐसी व्यवस्था करे कि न्याय लोगोंको जल्दी मिल जाय। उसे लोगोंको यह भी गारण्टी देनी होगी कि शासन-प्रबन्धमें हर तरहकी ईमानदारी और पवित्रताका ध्यान रखा जायगा। लेकिन मंत्रियोंका न्यायकी अदालतों पर असर डालना या खुद उनका स्थान ले लेनेकी हिम्मत करना लोकशाही और कानूनका गला घोटना है। १

५८

अनुभवी लोगोंकी सलाह

हमारे मंत्री जनताके हैं और जनतामें से हैं। उन्हें इस बातका घमण्ड नहीं करना चाहिये कि उनका ज्ञान उन अनुभवी लोगोंसे ज्यादा है जो मंत्रियोंकी कुर्सियों पर नहीं बैठे हैं — लेकिन जिनका यह दृढ़ विश्वास है कि कंट्रोल जितनी जल्दी हटें उतना ही देशको लाभ होगा। एक वैद्यने लिखा है कि अनाजके कंट्रोलने उन लोगोंके लिए जो राशनके दानों पर ही निर्भर करते हैं खाने लायक अनाज और दाल पाना असंभव बना दिया है। और इसलिए सड़ा-गला अनाज खानेवाले लोग अकारण बीमारियोंके शिकार बनते हैं। १

५९

एक आलोचना

मध्यप्रांतके एक सज्जनने मध्यप्रान्तके मंत्रि-मण्डलकी आलोचना करते हुए मुझे एक कड़वा पत्र भेजा है। उसके सबसे तीव्र अंशोंको कुछ हल्का करके उसका सार मैं नीचे देता हूँ :

> कुछ समयसे मैं आपको लिखनेकी सोच रहा था, लेकिन जान-बूझकर मैंने ऐसा नहीं किया। अब एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियतसे मैं आपको यह लिख रहा हूँ, जिसको अपने प्रान्तके — उस प्रान्तके जिसे मैं समझता हूँ आपने भी अपने नये जीवनके लिए अपना घर बना लिया है — सुशासनकी चिन्ता है। हमें यह विश्वास कराया गया था कि कांग्रेसके मंत्रियोंका शासन ऐसा अच्छा होगा, जिसमें कोई बुराई नहीं होगी और वे केवल समझदारी और अपने नैतिक बलके प्रभावसे ही हमपर शासन कर सकेंगे। लेकिन हमें तो कांग्रेस मंत्रि-मण्डलका मुख्य उद्देश्य यह मालूम पड़ता है कि —
>
> (अ) प्रकट रूपमें आपकी मूर्तिकी पूजा करें और अन्दर ही अन्दर उसे नष्ट करें,
>
> (आ) अन्दरसे तो साम्राज्यवादके प्रतीकोंकी पूजा करें और प्रकट रूपमें उसकी निन्दा करें,
>
> (इ) अपने विरोधियोंको सत्य और वैध उपायोंसे जीतनेमें असमर्थ होने पर गुण्डेपनका उपयोग करें, और
>
> (ई) कानून और सरकारी पदोंका व्यापार खूब जोरोंसे चलायें।

मध्यप्रांतका मंत्रिमंडल यह कल्पना करता मालूम होता है कि प्रतिगामी सभाओं आम तौर दबाव और निराशावादी सभाओंके द्वारा अल्प वर्ग शासन चलाया जा सकता है लेकिन जनताकी सरकार इस प्रकार नहीं चलाई जा सकती। पिछले दस महीनोंमें आपने मंत्रियोंने प्रांतमें सुशासनकी नैतिक नाव ह्रास होनेमें कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी। संक्षेपमें मैं अपना जो निर्णय आप तक पहुंचाना चाहता हूं वह यह है कि कांग्रेस पार्टीने अगर कभी भी अधिकार और उत्तरदायित्व ग्रहण न किया होता तो वह शासनके योग्य समझी जा सकती थी। सत्ता ग्रहण करनेके बाद दूसरी बात उसे छोड़ देनेकी जिम्मेदारीकी है। यह आश्चर्यकी बात है कि आपकी आत्मा एक कुंठित या पतित मंत्रिमंडलके विरुद्ध विद्रोह नहीं करती जिसे बनानेकी नैतिक जिम्मेदारी पूर्ण रूपसे आप पर है।

कार्यसमितिने मंत्रिमंडलके खिलाफ आई हुई सारी शिकायतें पार्लियामेंटरी बोर्डके पास भेज दी थीं, जिसने मौके पर जाकर उनकी जांच की। उसकी रिपोर्ट सार्वजनिक सम्पत्ति है। कांग्रेस सबसे अधिक विस्तृत मताधिकारवाली सबसे शक्तिशाली संस्था है। कार्यसमिति उसका अंग है और उसे कांग्रेस विधान द्वारा बांधी हुई मर्यादाओंके अन्तर्गत काम करना पड़ता है। मध्यप्रांतके कांग्रेसी प्रतिनिधियोंके लिए यह बात खुली थी कि वे मंत्रियोंसे इस्तीफ़ा मांगते लेकिन उन्होंने मंत्रियोंसे इस्तीफ़ा नहीं मांगे। इसके खिलाफ वे चाहते थे कि मंत्रीगण आपसमें झगड़ा निपटा लें और प्रांतका शासन चलायें। पार्लियामेंटरी बोर्ड प्रतिनिधियोंकी इच्छाओंकी अवज्ञा नहीं कर सकता था। उसके पास ऐसा करनेका कोई सत्ता नहीं था। लेकिन मंत्रिमंडलकी जो कुछ कमियां उसे मालूम हुईं उनको दूर करनेके लिए वह जो कुछ कर सकता था वह सब उसने किया। यदि यह बात स्वीकार करनी होगी कि बोर्ड जो कुछ करना चाहता उसका

मन्त्रियों पर कोई विरोध नहीं किया। अब यह देखना बाकी है कि नई व्यवस्था किस तरह चलती है।

अन्तिम बात मैं बताना चाहता हूँ वह यह है कि कार्य समिति कांग्रेस सस्थामें पार्टी जाब्ता बिना कार्रवाईका पोषणा नहीं करना चाहता। वह अनुशासनकी कारवाई करनेमें भयभीत नहीं होता जिसका अधिकार मामलेमें पालन किया गया है।

मैं पत्र-लेखककी इस बातको पूरी तरह ताईद करता हूँ कि कांग्रेस समझदारी और नैतिक बलके आधार पर ही शासन कर सकती है। उन्हें और उनके समान अन्य आलोचकोंको यह विश्वास रखना चाहिए कि यदि किसी दिन कांग्रेस समझदारी और नैतिक प्रभावके स्थान पर गुण्डपनसे काम लेना शुरू करेगी तो उसी दिन उसकी मृत्युका सत्य हो जायगी जिसकी कांग्रेस अधिकारिणी होगी। १

६०

एक मंत्रीकी परेशानी

डा काटजूने यह पत्र भेजा है

हिन्दुस्तानके कई हिस्सोंमें इस साल रबीकी फसल और खासकर खराब आई है और इसलिए आम तौर पर लोगोंको यह डर है कि इस बार देशमें अनाजका कष्ट ज्यादा तंग रहेगी। अनेक मामलोंमें अमीर और गरीब सबको एकसी सुविधायें देनेकी दृष्टिसे संयुक्त प्रांतके बहुतसे शहरी क्षेत्रोंमें राशन देना शुरू किया गया है। राशनिंगके कारण सरकार पर यह जिम्मेदारी आती है कि वह राशनिंगके क्षेत्रोंमें रहनेवाले लोगोंके लिए अन्न मुहैया करे। प्रान्तमें अन्नकी इतनी ज्यादा तंगीका डर है कि यहां राशनकी मात्राको घटा कर कमसे कम कर दिया

गया है — याना प्रति मनुष्य राजका छह छटाक अनाज दिया जाता है। इसमें दो छटाक गेहूं दो छटाक चावल और दो छटाक मिलावटी आटा दिया जाता है। लोग आम तौर पर मिलावटी आटको पसन्द नहीं करते और राशनमें इससे ज्यादा कमी करना लगभग असभव है। स्पष्ट है कि शहरी क्षेत्रोंका अन्न इनके लिए गावोसे उसकी पूर्ति लगातार जारी रहना चाहिये। भारत सरकारने प्रान्तीय सरकारोंको सुझाया है कि उनका लगातार पूर्तिकी पक्की व्यवस्था करनेके लिए ज्यादा अन्न पैदा करनेवाले जिलोंमें — यानी उन जिलोंमें जहा खेतीकी उत्पादन ग्राम्य क्षेत्रोंकी जरूरतोंसे ज्यादा होनेकी आशा रखी जाती है — अनाजकी अनिवार्य वसूली करना वाछनीय होगा। अनिवार्य रूपसे अनाज वसूल करनेका यह प्रश्न लोगोंको बहुत परेशान किये हुए है। कहा जाता है कि सरकारने कट्रोलकी जो कीमतें तय की है वे बहुत कम हैं इसलिए वे बढ़ाई जानी चाहिये। इसका उत्तर यह है कि कीमतोंका ढाचा तो सारे हिन्दुस्तानके लिए बनाया जाता है इसलिए उस पर असर डाले बिना किसी प्रान्तमें कीमतें बढ़ाई नहीं जा सकतीं। इसके अलावा संयुक्त प्रातमें कट्रोलके दाम ४० सेरा मनके बजाय दस रुपये रखे गये हैं जो सच पूछा जाय तो कम नहीं है। यह काफी अच्छा रेट है और इसमें खेतीके और जीवनकी सामान्य जरूरतोंके बढे हुए खर्चका उचित विचार किया गया है। युद्धसे पहलेके दिनोंमें गेहूं १ रुपयेका १८ सेर बिका करता था। आज कट्रोलकी दर प्रति रुपये ४ सेर है। यदि आम तौर पर लोगोंका यह खयाल रहता है कि बाजारमें अनाज मागकी तुलनामें बहुत कम आयगा इसलिए यहां स्वार्थी लोग अपनी निजी जरूरतें पूरी करनेके लिए ऊचे दामों पर अनाजकी खरीद करते हैं तो काला बाजार जरूर खड़ा होगा।

अगर किसान यह समझ लें कि शहरोंमें रहनेवाले अपने भाई-बहनों और गांवोंमें जिनके अपना कोई खेत नहीं है उन लोगोंको अन्न पहुंचानेकी अधिकसे अधिक कोशिश करना उनका सामाजिक और राष्ट्रीय धर्म है तो किसी किसान पर कोई जबरदस्ती न करनी पड़े। किसान सचमुच हमारे अन्नदाता हैं। इसलिए मैं आपसे यह अपेक्षा रखता हूं कि आप उनसे यह अपील करें कि इस संकट कालमें न तो वे खुद अनाज इकट्ठा करके रखें और न किसी काले बाजारमें उसे बेचें बल्कि जितना अनाज दे सकें सरकारी गोदामोंके लिए दें — ताकि अमीर और गरीब सबको उचित और समान रूपसे अनाज बांटा जा सके और भुखमरी व मुहताजीको टाला जा सके। आपकी आवाज दूर दूर तक पहुंचती है इसलिए मैं आपसे अपील करता हूं कि आप यह काम अपने हाथमें लें। शहरोंके लिए अनाजकी काफी व्यवस्था करनेके लिए कई योजनायें सोची गई हैं। लेकिन कोई भी योजना क्या न हो सार सबका यही है कि हर हालतमें किसानसे यह कहना होगा कि वह अपना अनाज दे। अगर शहरों और गांवोंमें आम जनताको अनाज मुहैया न किया गया तो हर तरहके दंगे फसाद हुए बिना न रहेंगे। संयुक्त प्रांतमें हम अधिक अन्न पैदा करने और अधिक साग सब्जी पैदा करने के आन्दोलनोंको बढ़ावा देनेकी पूरी कोशिश कर रहे हैं। आपके दिये हुए तमाम सुझावों पर अमल किया जा रहा है। सरकारी इमारतोंके आसपासकी सारी सरकारी जमीनोंको जोतनेकी सूचनायें दे दी गई हैं। ऐसी व्यवस्था भी की गई है जिससे निजी मकानोंके मालिक खेतीबाड़ीके विशेषज्ञोंकी सलाह से लाभ उठा सकें। उन्हें सुविधाके नाते बोनेके लिए बीज और सिंचाईके लिए नहरोंका पानी मुफ्त दिया जाता है। कुएं

[illegible]के काममें भी सहायता की जा रही है। इन सब बातोंके कहने और करनेके बावजूद जब तक जनता साथ नहीं देगी तब तक कुछ किया नहीं जा सकता। और जनताके सहयोगका अर्थ है अन्नदाता किसान इस कामके लिए यथाशक्ति अधिकसे अधिक अनाज दें।

डाक्टर काटजूके इस पत्र पर मंत्रियों और उनके सलाहकारोंको तथा शहरवालोंको गंभीरतासे सोचना चाहिये। सिर पर मंडरानेवाले संकटका सदुपयोग किया जा सकता है। उस स्थितिमें वह संकट न रहकर एक आशीर्वाद बन जायगा। वर्ना शाप तो वह है और शाप रहेगा।

डा० काटजूने एक जिम्मेदार मंत्रीके नाते ऊपरका पत्र लिखा है। इसलिए लोग उन्हें बना भी सकते हैं और बिगाड़ भी सकते हैं। वे उन्हें हटाकर उनसे ज्यादा अच्छे व्यक्तियोंको उनकी जगह रख सकते हैं। लेकिन जब तक लोगोंके चुने हुए मंत्री उनके सेवकोंकी तरह काम करते हैं तब तक लोगोंको उनकी सूचनाओंका पालन करना चाहिये। ऐसे कानून या सूचनाओंका विरोध सत्याग्रह नहीं होता। सत्याग्रहकी [illegible] वह दुराग्रह आसानीसे बन सकता है। १

६१

मंत्रियोंकी टीका

यह स्वाभाविक ही है कि जो लोग कांग्रेसकी राजनीतिको नापसन्द करते हैं वे सभी कामोंमें मंत्रियोंकी बुरी तरह टीका टिप्पणी करें। ऐसी आलोचनाओंमें जो सचाई हो वह हमें कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार कर लेना चाहिये। लेकिन बहुतसी आलोचना तो द्वेषभावसे ही उत्पन्न होती है। उसको भी हमें बरदाश्त करना पड़ेगा। लेकिन जब कांग्रेसवाले भी यही शोर मचायें तब बड़ी कठिनाई पैदा हो

जाती है। यसे उनके पास सा इगरा इगाज है। व अपन प्रातकी धाप्रस कमटीस शिकायत कर सकत ह और वहा भी सफलता न मिल तो वकिंग कमटीके पास और अतमें अ० भा काग्रेस कमटी तक पहुच सकते ह। अगर य सब उपाय भी बेकार हो तो फिर निश्चय ही उनकी आलोचनाके लिए कोई गुजाइश नहा है। लेकिन इन आलोचकोंसे मुझ सबसे बडी शिकायत तो यह है कि व बडी जल्दबाजी करते ह और तथ्योको जाननेकी तकलीफ हो नहा उठाते। परन्तु अज्ञानसे बडा कोई पाप नहा है इस महान ओरापिनका प्रमाण मुझ रोज ही मिलता है। १

६२

सरकारका विरोध

लोकप्रिय मत्रि मण्डल धारासभाके सदस्योके अधीन रह कर काम करता है। उनकी इजाजतके बिना वह कुछ कर नही सकता। और इसलिए सदस्य अपन मतदाताओं यानी लोकमतके अधीन है। इसलिए सरकारके हर काम पर गहराईसे सोचनेक बाद ही उसका विरोध करना उचित होगा। आम लोगोकी एक बुरी आदत पर भी इस सम्ब धमें विचार किया जाना चाहिये। करदाताको करके नामसे हो नफरत होती है। फिर भी जहा अच्छी व्यवस्था है वहा अक्सर यह दिखाया जा सकता है कि करदाता खुद करके रूपमें जो कुछ देता है उसका पूरा बदला उसे मिल जाता है। शहरमें पानी पर वसूल किया जानवाला कर इसी प्रकारका है। शहरमें जिस दरसे मुझ पानी मिल सकता है उस दरमें मं अपनी जरूरतका पानी खुद पदा नहा कर सकता। मतलब यह कि पानी मुझ सस्ता पडता है। उसकी यह दर मतदाताओंकी इच्छाके अनुसार तय करनी पडती है। तिस पर

नागरिकोंमें उसके प्रति एक नफरत-सी पैदा हो जाती है। यही हाल दूसरे करोंका भी है। यह सच है कि सभी तरहके करोंका ऐसा सीधा हिसाब नहीं किया जा सकता। जैसे जैसे समाजका और उसकी सेवाओंका क्षेत्र बढ़ता जाता है, वैसे वैसे यह बताना मुश्किल होता जाता है कि कर चुकानेवालेको उसका सीधा बदला किस तरह मिलता है। लेकिन इतना जरूर कहा जा सकता है कि समाज पर जो एक विशेष कर लगाया जाता है, उसका समाजको पूरा बदला मिलना ही चाहिए। अगर ऐसा न हो तो जरूर यह कहा जा सकता है कि वह समाज लोकमतकी बुनियाद पर नहीं चल रहा है। १

६३

मन्त्रियोंको भावुक नहीं होना चाहिये

मेरे पास ऐसे बहुतसे पत्र आये हैं जिनमें लिखनेवालोंने हमारे मन्त्रियोंके रहन-सहनकी आरामतलबी पर उनकी कड़ी आलोचना की है। उन पर यह आरोप लगाया गया है कि वे पक्षपातसे काम लेते हैं और अपने रिश्तेदारोंको ही आगे बढ़ाते हैं। मैं जानता हूँ कि कभी कभी आलोचना तो लोगोंके अज्ञानके कारण होती है। इसलिए मन्त्रियोंको उससे दुःखी नहीं होना चाहिये। किन्तु दोष बतलानेवाली आलोचनामें से उन्हें अपने लिए अच्छी बात ले लेनी चाहिये। यदि मेरे पास आये हुए पत्र मैं मन्त्रियोंके पास भेज दूँ तो उन्हें आश्चर्य होगा। संभव है कि उनके पास इससे भी बुरे पत्र आते हों। चाहे जो हो, इन पत्रोंसे मैं तो यही सबक लेता हूँ कि जहाँ तक सादगी, धीरज, ईमानदारी और परिश्रम करनेका सम्बन्ध है, ये आलोचक दूसरोंकी अपेक्षा जनता द्वारा चुने हुए मन्त्रियोंसे इन गुणोंकी अधिक आशा रखते हैं। शायद परिश्रम और अनुशासनको छोड़कर और किसी बातमें हमें पुराने अंग्रेज शासकोंकी नकल नहीं करनी चाहिये। अगर हम

गया। लोग उचित आजादीका लाभ उठाने लगे और दूसरी तरफ आलोचना करनेवाले लोग यदि बात कहनेमें संयम और पूरी मर्यादाका ख्याल रखें तो इन लेखोंका उद्देश्य पूरा हो जायेगा। सच्ची बात कहना या मानना। बस इसी प्रकार पढ़ाना एक अच्छा मामला भी दिया जाता है। १

६४
धमकियां — मन्त्रियोंके लिए रोजकी बात

मैंने अखबारोंमें यह पता देखा है कि रोजकी धमकियोंके बावजूद मंत्री लोग हरएक तरहका अन्याय दूर करनेके लिए भरसक कोशिश कर रहे हैं। आजकल जब कि मानसिक हिंसा देशमें फैली ही चली जा रही है, व्यापक बालिग मताधिकारके मातहत चुने गये मंत्रियोंका भाग्य ही ऐसा है कि इस तरहकी धमकियां उनके लिए रोजमर्राकी बात बन गई हैं। वे अपने पदों अथवा जीवनको खतरेमें डालकर भी जिसे वे अपना कर्तव्य समझते हैं उसे करते हुए पीछे नहीं हट सकते। इसी तरह अभी बहुतसी धमकियोंके कारण जैसी कि इन अर्जियोंमें दी गई हैं न तो वे नाराज होंगे और न न्याय करनेसे इनकार करेंगे। १

६५
सरकारको कमजोर न बनाइये

सरकारने कुछ लोगोंको गिरफ्तार किया था जिसके खिलाफ आन्दोलन हुआ। सरकारको ऐसा करनेका अधिकार था। हमारी सरकार निर्दोषोंको जान-बूझकर गिरफ्तार नहीं कर सकती। लेकिन भूलसे गलती हो सकती है और संभव है कि गलतीसे कुछ निर्दोषोंको तकलीफ उठानी पड़े। यह काम सरकारका है कि अपनी इस गलतीको

यह सुधार। प्रजातंत्रमें लोगोंको चाहिये कि वे सरकारकी कोई गलती देखें तो उसकी तरफ सरकारका ध्यान खींचे और संतोष मान लें। अगर वे चाहें तो अपनी सरकारको हटा सकते हैं, परंतु उसके खिलाफ आन्दोलन करके उसके कामोंमें बाधा न डालें। हमारी सरकार जबरदस्त जलसेना और स्थलसेना रखनेवाली कोई विदेशी सरकार तो है नहीं। उसका बल तो जनता ही है।

सच्ची शांति किस तरह स्थापित की जा सकती है? आप इस बातसे शायद खुश हों कि दिल्लीमें फिरसे शान्ति स्थापित होती जान पड़ती है। परन्तु मैं इस संतोषमें हिस्सा नहीं बटा सकता। हिंदुओं और मुसलमानोंके दिल एक-दूसरेसे फिर गये हैं। वे पहले भी आपसमें लड़ा करते थे। परन्तु वह झगड़ा एक या दो दिनका रहता था और फिर हरएक उसके बारेमें सब-कुछ भूल जाता था। आज उनमें इतना अधिक कड़वाहट पैदा हो गई है कि वे मानने लगे हैं मानो वे सदियोंसे दुश्मन हों। इस तरहकी भावनाको मैं कमजोरी मानता हूं। आपको इसे जरूर छोड़ देना चाहिये। तभी आप एक महान शक्ति बन सकते हैं। आपके सामने दो बातें हैं। आप उनमें से किसी एकको चुन सकते हैं। या तो आप एक महान फौजी शक्ति बन सकते हैं, या अगर आप मेरा मार्ग अपनायें तो आप एक अहिंसक और कभी भी न जीती जा सकनेवाली शक्ति बन सकते हैं। [illegible] [illegible] बात यह है कि आप अपना मार्ग तय कर चुके हैं।

जिनमें मेरी सलाह पर अमल करें तो मैं दिल्ली छोड़ सकूंगा और अपना 'करो या मरो' का मिशन पूरा करनेके लिए पाकिस्तान जा सकूंगा। १

६६

मंत्री और जनता

नई दिल्लीकी हार्डिंज लायब्रेरीमें (ता. २८-१२-'४७ को) व्यापारियोंकी एक सभामें भाषण देते हुए गांधीजीने कहा : मैं समझता हूं कि अनाज पर जो अंकुश लगाया जाता है वह बुरा है। हिन्दुस्तानका हित उसमें हो ही नहीं सकता। कपड़ेका अंकुश भी हटना चाहिये। आज जब हमें आजादी मिल गई है, तो उसमें हम पर अंकुश क्यों? जवाहरलालजी, सरदार पटेल वगैरा जनताके सेवक हैं। जनताकी इच्छाके विरुद्ध वे कुछ नहीं कर सकते। अगर हम उनसे कहें कि आप अपने पदों परसे हट जाइये, तो वे वहां रह नहीं सकते। १

मैंने ऐसे लोगोंको सरकारकी विनाशात्मक टीका करते भी सुना है, जो राष्ट्रके हाथमें आई हुई सत्ताको न खुद संभाल सकते हैं और न उन्हें संभालने देना चाहते जो इसके योग्य हैं। लेकिन दूसरी तरफ मंत्रियोंको उस प्रजाके सच्चे सेवक बनना चाहिये, जिससे उन्हें सत्ता मिली है। उन्हें नौकरियोंके बारेमें पक्षपात नहीं करना चाहिये, घूसखोरीकी बुराईमें नहीं फंसना चाहिये और सबके साथ एकसा न्याय करना चाहिये।

अगर बिहारके जमींदार, रैयत और सरकार तीनों अपना अपना कर्तव्य पालें, तो बिहार सारे हिन्दुस्तानके सामने सुंदर उदाहरण पेश करेगा। २

६७

हमारी असफलता

इलाहाबादमें — जो कि कांग्रेसका मुख्य केन्द्र है — साम्प्रदायिक दंगा होने और उसके लिए पुलिसकी ही नहीं बल्कि फौजकी भी बुलानेकी जरूरत पड़नेसे मालूम होता है कि कांग्रेस अभी इतनी ताकतवर नहीं हुई है कि ब्रिटिश सत्ताका स्थान ले सके। यह बात चाहे कितनी अप्रिय लगे, लेकिन अच्छा यही है कि हम इस सत्यका अनुभव करें और उसका सामना करें।

ये दंगे और दूसरी कुछ बातें ऐसी हैं जिन पर हमें ठहरकर यह सोचना ही चाहिये कि क्या सचमुच कांग्रेसका विकास हो रहा है और वह अधिकाधिक शक्ति प्राप्त करती जा रही है?

यह कहा जाता है कि जब हम स्वाधीनता प्राप्त कर लेंगे तब दंगे तथा अन्य ऐसी बातें नहीं होंगी। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि स्वतन्त्रताकी लड़ाईके दरमियान अगर हम अहिंसात्मक कार्यके तरीकेको अच्छी तरह समझकर प्रत्येक अनुकूल परिस्थितिमें उसका उपयोग न करें तो हमारा यह आशा धोखा ही साबित होगा। जिस हद तक कांग्रेसी मंत्रियोंको पुलिस या फौजका सहारा लेना पड़ा है, उस हद तक मेरी रायमें हमें अपनी असफलता स्वीकार करनी ही चाहिये। यद्यपि दुर्भाग्यवश यह बिलकुल सच है कि मंत्री लोग इसके सिवा कुछ कर ही नहीं सकते थे। अतः मेरी ही तरह यदि हरएक कांग्रेसवादी और कांग्रेस कार्यसमिति भी यह सोचती हो कि हम असफल सिद्ध हुए हैं, तो मैं चाहूँगा कि वे इस बात पर विचार करें कि हम असफल क्यों हुए। १

आत्म-परीक्षणकी अपील

सयुक्त प्रान्तके दगोने मेरे हृदयपर गहरा आघात लगा है। मन मौलाना अबुल कलाम आजाद और खान-अब्दुलगफार साथ अहिंसाकी शक्तिके बारेमें चर्चा की। मुझे ऐसा लगा कि हम अपने ध्येयके समीप नहीं जा रहे है बल्कि उससे दूर हटते रहे है। हरिपुरामें मेरे मनमें यह आशा पैदा हुई थी कि हमारी शक्ति बढ़ती जा रही है और हमारे दोषोके बावजूद मैं अपने जीवन-कालमें स्वराज्य देख सकूगा। मैने यह सोचा था कि इस साल हम वह शक्ति प्राप्त कर लेगे। लेकिन इलाहाबाद और दूसरी जगहोमें जो दगे हुए है उनसे मेरे विश्वासको सख्त चोट लगी है। हमें पुलिस और फौजकी मदद लेनी पड़ी यह हमारे लिए लज्जाजनक बात हुई। १

सयुक्त प्रातमें हालमें जो दगे हुए है उनके सबधमें मेरी आलोचनाओकी ओर बहुतोका ध्यान गया है। मित्रोने मेरे पास अखबारोकी कतरनें भेजी है। उनमें लिखित या मौखिक आलोचनाका एक मुद्दा यह है

(२) मैने पर्याप्त तथ्योके बिना अपनी बात लिखी है।

२ जहा तक तथ्योका सवाल है इतना ही पर्याप्त है कि दगे हुए फिर वे कितने ही छोटे क्यो न हो। काग्रेसवादी अहिंसात्मक पद्धतिसे उनका सामना नहीं कर सके और उन्हे शात करनेके लिए पुलिस और फौजकी मदद लेनी पड़ी। इन तीन मुख्य बातोके बारेमें कोई मतभेद नहीं है। और मैं जिस निष्कर्ष पर पहुचा उसके लिए इतनी बातें काफी थी। इसमें मत्रियो पर कोई आक्षेप नहीं है। बल्कि यह बात मैं खुद स्वीकार कर चुका हू कि वे दूसरा कुछ कर ही नहीं सकते थे। लेकिन यह बात तो रहती ही है कि काग्रेसकी अहिंसा सकटके समय कारगर सिद्ध नहीं हुई। २

मैं इस बातसे लज्जित हूँ कि हमारे मंत्रियोंको अपनी सहायताके लिए पुलिस और फौजको बुलाना पड़ा। उन्होंने अपने विरोधी वक्ताओंके भाषणोंके उत्तरमें जिस भाषाका प्रयोग किया उसके लिए भी मैं लज्जित हूँ। ऐसे मौकों पर हम लोगोंकी अहिंसा असफल क्यों हो जाती है? तब क्या यह निर्बलोंकी अहिंसा है? हमारी अटल श्रद्धासे हमें गुंडे भी न डिगा सकें और न यह कहनेके लिए हमें बाध्य कर सकें कि जरूरत पड़ने पर हम उन्हें फांसीके तख्ते पर लटका देंगे या गोलीसे उड़ा देंगे — ऐसी हमारी स्थिति होना चाहिये। वे भी तो हमारे ही देशवासी हैं। यदि वे हमें मारना चाहते हैं तो ऐसा करनेके लिए उन्हें स्वतंत्र छोड़ देना चाहिये। आप निर्बलोंकी अहिंसाको संगठित हिंसाके मुकाबलेमें खड़ा नहीं कर सकते। उसके लिए तो बहादुरसे बहादुर लोगोंकी अहिंसा ही उपयुक्त हो सकती है।

कांग्रेसके जो हजारों सदस्य हैं वे कांग्रेसके सदस्य बनते समय जिस फॉर्म पर हस्ताक्षर करते हैं उसके परिणामोंको क्या वे जानते हैं? क्या वे सब सच्चे अर्थोंमें सदस्य हैं? क्या नकली सदस्योंका होना भी अहिंसाके सिद्धांतका भंग नहीं है? जहाँ सदस्य नकली नहीं किन्तु वास्तविक हैं वहां क्या प्रान्तकी कांग्रेस कमेटीने दंगोंको शांत करनेमें अपना कर्तव्य पूरा करनेके लिए उसमें क्या है? हम उन्हें इस प्रकार क्यों नहीं कहते? और अगर कभी हम उन्हें इसके लिए कहें तो दस हजारमें से कितने हजार सदस्य उस पर ध्यान देंगे? अगर पांच हजार या सिर्फ एक हजार भी उस पर ध्यान दें और लड़नेवाले लोगोंके बीचमें जाकर खड़े हो जायें तो इसमें कोई शक नहीं कि उनमें से कुछके सिर जरूर फट जायेंगे लेकिन इस तरह मरनेवालोंकी वही आखिरी कुर्बानी होगी। इसके बाद लोगोंके सिर फूटनेकी नौबत नहीं आयगी। लेकिन यह तभी हो सकता है जब अहिंसा धर्मके परिणामोंको भलीभांति समझ लिया जाय।

एक सच्चे कांग्रेसवादीको तो ऐसे अवसरों पर पुलिस और फौजकी मदद की इच्छा भी न होनी चाहिये। लेकिन अगर हमें ऐसा करना ही पड़े, अगर हमारी अहिंसा बहादुरोंकी नहीं बल्कि कमजोरोंकी अहिंसा है, तो दुनियाको यह समझाने देनेके बजाय कि हम मन वचन-कर्ममें अहिंसक हैं, हमारे लिए अपने ध्येयको बदल देना ज्यादा अच्छा होगा। ४

६९

नागरिक स्वाधीनता

नागरिक स्वाधीनताका अर्थ अपराध करनेकी आजादी नहीं है। जब कानून और व्यवस्था लोकनियंत्रणमें हों, तब जिन मंत्रियोंकी अधीनतामें ये कार्य विभाग होते हैं वे एक दिन भी वहां टिक सकते अगर वे लोकमतके खिलाफ कुछ करने लगें। यह सच है कि धारा सभायें अभी समस्त जनताका प्रतिनिधित्व नहीं कर रही हैं, तो भी मताधिकार इतना व्यापक जरूर हो गया है कि कानून और व्यवस्थाके विषयमें वे राष्ट्रके मतका प्रतिनिधित्व कर सकें। आज इनके नाते प्रांतोंमें कांग्रेसका शासन चल रहा है। मालूम होता है कि कुछ लोगोंने तो इसका अर्थ यह समझा है कि कमसे कम इन प्रांतोंमें तो आदमी जो चाहे सो कहे और कर सकता है। पर जहां तक मैं कांग्रेसके मनोभावको समझा हूं, वह इस प्रकारकी स्वच्छन्दताको बरदाश्त नहीं करेगा। नागरिक स्वाधीनताके मानी यह है कि साधारण कानूनकी मर्यादाके अन्दर रहते हुए आदमी जो चाहे सो कहे और करे। 'साधारण' शब्दका प्रयोग यहां पर जान बूझकर किया गया है। विशेषाधिकार देनेवाले कानूनोंकी बात छोड़ दीजिये। किन्तु ताजीरात हिन्द और फौजदारी कानूनके अन्दर भी विदेशी शासकोंने अपनी रक्षाके लिए कितनी ही धाराएं डाल रखी

हैं। इन धाराओंको हम बड़ी आसानीसे ढूंढ सकते हैं और उन्हें रद्द कर दिया जाना चाहिये। पर सच्ची कसौटी तो वह अंग होगा जो कानून और व्यवस्थाके मंत्रियोंको कांग्रेसकी कार्यसमिति बनायेगी। इसलिए कार्यसमितिने कांग्रेसी मंत्रियोंके मार्गदर्शनके लिए जो सूचनाएं जारी कर रखी हैं उन्हें ध्यानमें रखते हुए मंत्री अपनी सत्ताका उपयोग मेरी बताई मर्यादाओंके भीतर उन लोगोंके खिलाफ कर सकते हैं जो नागरिक स्वाधीनताके नाम पर अराजकता और अव्यवस्थाका प्रचार करते हैं।

किसी किसीका कहना है कि कांग्रेसी मंत्री तो अहिंसाके लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं। इसलिए वे ऐसे कानूनका उपयोग नहीं कर सकते जिसमें सजाका विधान हो। कांग्रेस द्वारा स्वीकृत अहिंसाको जहां तक मैं समझा हूं वहां तक यह खयाल ठीक नहीं है। मैं खुद अभी कोई ऐसा मार्ग नहीं खोज पाया हूं जिसकी मददसे हर तरहकी परिस्थितिमें हम सजाओं और दण्डात्मक प्रतिबन्धोंके बिना काम चला सकें। निःसन्देह सजाएं अहिंसक ही होनी चाहिये — अगर यहां यह भाषा-प्रयोग सही हो। जिस प्रकार युद्धशास्त्र हिंसाकी एक विशेष विधि है और उसमें इस तरह ऐसे ऐसे तरीके तथा साधन ढूंढे गये हैं जिनके बारेमें पहले किसीने सुना भी नहीं था, उसी प्रकार अहिंसाका भी एक शास्त्र है एक कार्य-पद्धति है। राजनीतिशास्त्रके रूपमें अहिंसाका विकास होना अभी बाकी है। उसकी विशाल शक्तियोंका तो अभी हमें पता लगाना है। अनेक क्षेत्रोंमें और बड़े पैमाने पर जब अहिंसाका प्रयोग होने लगेगा तब इस विषयके साधन भी हो सकेंगे। अगर कांग्रेसके मंत्रि सच्चे दिलसे अहिंसामें विश्वास रखते होंगे, तो वे इस अनुसंधानके कामको अपने हाथोंमें ले लेंगे। पर जब तक वे ऐसा करते हैं अथवा वे ऐसा कर या न भी कर सकें, तब इसमें तो कोई शक नहीं कि वे अभी उन कार्यों या भाषणोंको बरदाश्त नहीं कर सकते जिनसे हिंसाको उत्तेजना मिलती हो — भले ही इस कारण उन्हें लोग हिंसक वृत्तिवाले बतायें। अब

लोग देखें कि उनके उन मन्त्रियोंका कामकाज अनुकूल नहीं है तो वे अपने प्रतिनिधियोंके जरिये अपनी असम्मति प्रकट कर दें। अगर कांग्रेस की शासक मन्त्रियोंको कोई खास सूचना न मिली हो तो मन्त्रियोंके लिए यह उचित होगा कि वे अपनी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको या कार्यसमितिको यह सूचना कर दें कि उनकी रायमें जनतामें अमुक व्यक्तिका व्यवहार हिंसाको उत्तेजित करनेवाला है और उसके बारेमें प्रान्तीय समिति या कार्यसमितिकी आज्ञा माँगे। अगर उनके उच्चाधिकारी उनकी सिफारिशोंको स्वीकार न करें तो मन्त्री अपने इस्तीफे पेश कर दें। उन्हें परिस्थितिको यहाँ तक बिगड़नेका मौका ही नहीं देना चाहिए कि फौजको बुलानेकी नौबत आ जाय। असलमें अहिंसाकी किसी भी योजनामें देशकी भीतरी शान्तिके लिए तो फौजकी जरूरत हो ही नहीं सकती। और अगर किसी मन्त्रीको अपनी सहायताके लिए उस फौजको बुलाने पर मजबूर होना ही पड़े — जो जनताके अधीन नहीं है — तो मैं तो इसे हमारा राजनीतिक दिवालियापन ही समझूँगा।

मैं तो भारतीय शासन विधानका एक अर्थ यह लगाता हूँ कि यह अनजानमें राष्ट्रीय कांग्रेसवालोंके लिए इस बातकी चुनौती है कि वे अहिंसाकी महत्ता और उसमें अपनी अटल श्रद्धा सिद्ध करें। अगर कांग्रेस इस बातका स्पष्ट प्रमाण दे सकेगी तब तो अधिकांश संरक्षण अपने आप बेकार हो जायेंगे और अहिंसात्मक संघर्ष अथवा सविनय अवज्ञाके बिना भी कांग्रेस अपने लक्ष्यकी सिद्धि कर लेगी। अगर कांग्रेस जनताके अन्दर अहिंसाकी भावना इतनी पूर्णताके साथ न भर सकी तब या तो उसे अपना सिद्धान्त छोड़ना पड़ेगा या अल्पसंख्यामें रहकर विरोध करते रहना पड़ेगा। १

७०

तूफानके आसार

शोलापुरकी हालकी घटनाओं और कानपुर तथा अहमदाबादके मजदूरोंकी अशान्तिसे यह जाहिर होता है कि इस प्रकारके उपद्रवकारी शक्तियों पर कांग्रेसका नियन्त्रण कितना संदिग्ध है। जरायम-पेशा कहलानेवाली जातियोंके साथ पहले जिस तरह व्यवहार किया जाता था उससे अत्यन्त भिन्न किसी प्रकारसे उनके साथ तब तक व्यवहार नहीं किया जा सकता जब तक इस बातका निश्चय न हो जाय कि वे कैसा बरताव करेंगी। हां, एक काम जरूर फौरन किया जा सकता है। उनके साथ अपराधियों जैसा व्यवहार न किया जाय। न तो उनसे हम डरें और न उनसे घृणा करें बल्कि उनके साथ भाईचारा जोड़ने और उन्हें राष्ट्रीय प्रभावके नीचे लानेका प्रयत्न करें। यह कहा जाता है कि शोलापुरकी जरायम-पेशा बस्तीके आदमियोंको लाल झंडेवाले (साम्यवादी) अन्दर ही अन्दर उभाड़ते हैं। क्या वे कांग्रेसके आदमी हैं? यदि हां तो वे उन कांग्रेसियोंके पक्षमें क्यों नहीं हैं जो कि कांग्रेसके टिकट पर आज मंत्रीपद पर आसीन हैं? और अगर ये कांग्रेसजन नहीं हैं तो क्या वे कांग्रेसके प्रभाव और प्रतिष्ठाको नष्ट करनेकी कोशिश कर रहे हैं? यदि वे कांग्रेसी नहीं हैं और कांग्रेसकी प्रतिष्ठाको नष्ट करना चाहते हैं तो कांग्रेसजन इन जातियोंके पास क्यों नहीं पहुंचे? और कांग्रेसजन ऐसा कोई उपाय करनेमें असमर्थ क्यों रहे जिससे उन लोगोंके फुसलानेका इन जातियों पर कोई असर न पड़े जो इन जातियोंकी आनुवंशिक — कल्पित या वास्तविक — जरायम प्रवृत्तियोंका अनुचित लाभ उठाते हैं?

अहमदाबाद और कानपुरमें हमें क्या हमेशा ही अचानक और अनुचित ढंग पर हड़तालोंका डर लगा रहना है? मालिक मज

दूर पर रहा जिनमें अपना प्रभाव डालनेमें कांग्रेस क्या असमर्थ है? जिन प्रान्तोंमें आज कांग्रेसी मन्त्रियों द्वारा शासन चल रहा है उनमें उन्हें सरकारका जारी किये हुए नोटिसोंको हम अविश्वासकी नजरसे न देखें। हम पर निम्नस्तर सरकारके नागरिकोंकी कोई महत्त्व नहीं दिया करते थे। वैसा व्यवहार इन नोटिसोंके साथ करनेसे काम नहीं चलेगा। अगर हमारा कांग्रेसी मन्त्रियों पर विश्वास नहीं है या हम उनसे असन्तुष्ट हैं तो वे बिना किसी शिष्टाचारके बरखास्त किये जा सकते हैं। लेकिन जब तक हम उन्हें मन्त्रीपद पर बने रहने देते हैं तब तक उनके नोटिसों और अपीलोंको सारे कांग्रेसजनोंका पूर्ण हार्दिक समर्थन मिलना चाहिये।

कांग्रेसियोंका पद-ग्रहण किसी और हालतमें उचित नहीं ठहराया जा सकता। कांग्रेसजनोंके सच्चे प्रयत्नके बावजूद अगर ये उपद्रव पुलिस और फौजकी सहायता लिये बिना काबूमें नहीं लाये जा सकते तो मेरी रायमें कांग्रेसके पद-ग्रहणका तमाम अर्थ और अंश चला जाता है और उस हालतमें जितनी जल्दी मंत्री अपने पदों परसे हट जायं उतना ही कांग्रेस और उसकी पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करनेकी लड़ाईके हकमें बेहतर होगा।

मैं मानता हूं कि गोलापुरकी जरायमपेशा बस्तीका उपद्रव और अहमदाबाद तथा कानपुरके मजदूरोंकी हड़तालें उन अतिरंजित आशाओंके आसार हैं जो कि मजदूरोंकी और तथाकथित जरायमपेशा जातियों की भी हालतको आमूलसे सुधारनेके लिए दिलाई गई थीं। तब तो कांग्रेसको ये उपद्रव रोकनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिये। अगर इसके विपरीत ये कांग्रेसके शासनकी कमजोरीके चिह्न हैं तब तो कांग्रेसियोंके पद-ग्रहणसे उत्पन्न होनेवाली सारी स्थिति पर फिरसे ध्यान पूर्वक विचार करनेकी जरूरत है।

एक बात निश्चित है। कांग्रेसके संगठनको मजबूत बनाने और उसमेंसे तमाम गंदगीको बाहर निकालनेकी जरूरत है। कांग्रेसके

सदस्य न सिर्फ कुछ लाख पुरुष और स्त्रियाँ हों, बल्कि १८ वर्षसे ऊपरका हरएक बालिग पुरुष और स्त्री उसका सदस्य होना चाहिये, फिर वे किसी भी धर्मके हों। और कांग्रेसके रजिस्टरमें उनके नाम इसलिए दर्ज किये जायें कि वे राष्ट्रीय स्वतंत्रताकी लड़ाईके अर्थमें सत्य और अहिंसात्मक आचरणकी ठीक ठीक तालीम और शिक्षण पायें। कांग्रेसके बारेमें मेरी हमेशा यह कल्पना रही है कि वह सारे राष्ट्रको राजनैतिक शिक्षा देनेवाला सबसे बड़ा विद्यालय है। लेकिन कांग्रेस इस आदर्शकी सिद्धिसे अभी बहुत दूर है। सुननेमें आता है कि कांग्रेसके झूठे रजिस्टर बनाये जाते हैं और सदस्य बनानेकी गरजसे उनमें सदस्योंके झूठे नाम लिख लिये जाते हैं, और जहाँ रजिस्टर ईमानदारीसे साफ तैयार किये जाते हैं, वहाँ मतदाताओंके निकट सम्पर्कमें रहनेका प्रयत्न नहीं किया जाता।

स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि क्या हम सचमुच सत्य और अहिंसामें, खास काम और अनुशासनमें तथा चतुर्विध रचनात्मक कार्यक्रमकी शक्तिमें विश्वास करते हैं? अगर करते हैं, तो कांग्रेसी मन्त्रियोंके कुछ महीनोंके शासनमें यह दिखानेके लिए काफी प्रमाण मिल चुका है कि जब पद स्वीकार किये गये थे तबसे पूर्ण स्वाधीनता आज हमारे अधिक निकट है। परन्तु यदि हमें अपने खुदके पसन्द किये हुए उद्देश्योंमें विश्वास नहीं है, तो हमें आश्चर्य नहीं करना चाहिये अगर किसी दिन हमारी आँखें खुल जायँ और हम देखें कि पद-ग्रहणकी दिशामें कदम रखकर हमने एक भारी भूल की थी। पद-ग्रहणकी दिशामें एक प्रवर्तक बल्कि प्रधान प्रवर्तककी हैसियतसे मेरी अन्तरात्मा बिलकुल स्पष्ट है। मैंने इस आशासे पद-ग्रहणकी सलाह दी थी कि कांग्रेसवादी कुल मिलाकर न केवल लक्ष्य पर बल्कि सत्यतापूर्ण और अहिंसात्मक साधनों पर भी दृढ़ हैं। अगर साधनोंमें इस राजनीतिक श्रद्धा पर हमारा विश्वास नहीं है, तो सम्भव है कि पद-ग्रहण एक जाल साबित हो। १

७१

विद्यार्थी और हड़तालें

बंगलोरके कॉलेजका एक विद्यार्थी लिखता है

मैंने 'हरिजन' में आपका लेख पढ़ा है। अलमान् बिल जैसे कानूनोंका विरोध करनेके लिए बंगलोरकी हड़तालोंमें विद्यार्थियोंको भाग लेना चाहिये या नहीं, इस विषयमें मैं आपकी राय जानना चाहता हूँ।

विद्यार्थियोंकी वाणी और आचरण पर लगे हुए प्रतिबंधोंको हटाने की परवी मैंने जरूर की है, लेकिन राजनीतिक हड़तालों या प्रदर्शनोंमें उनके भाग लेनेका समर्थन मैं नहीं कर सकता। विद्यार्थियोंको अपनी राय रखने और उसे प्रकट करनेकी पूरी पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिये। वे चाहे जिस राजनीतिक दलके प्रति खुले तौर पर सहानुभूति प्रगट कर सकते हैं। पर मेरी रायमें अपने अध्ययन-कालमें उन्हें सक्रिय रूपसे राजनीतिमें भाग लेनेकी स्वतंत्रता नहीं होनी चाहिये। विद्यार्थी राजनीतिमें सक्रिय भाग लें और साथ साथ अपना अध्ययन भी जारी रखें, यह नहीं हो सकता। राष्ट्रीय उत्थानके समय इन दोनोंके बीच स्पष्ट भेद करना मुश्किल हो जाता है। उस समय विद्यार्थी हड़ताल नहीं करते, अथवा यदि ऐसी परिस्थितियोंमें हड़ताल शब्दका उपयोग किया जा सकता हो तो वह पूरी सामूहिक हड़ताल होती है; उस समय वे अपनी पढ़ाईको स्थगित कर देते हैं। इसलिए जो प्रसंग अपवाद रूप दिखाई देता है, वह असलमें अपवादरूप नहीं है।

वास्तवमें पत्रलेखकने जो प्रश्न उठाया है वह कांग्रेसी प्रांतोंमें तो उठना ही नहीं चाहिये। क्योंकि वहां तो ऐसा एक भी अंकुश नहीं हो सकता, जिसे विद्यार्थियोंका श्रेष्ठ वर्ग स्वेच्छासे स्वीकार न करे।

अधिकांश विद्यार्थी कांग्रेसी मनोवृत्तिके हैं और होने चाहियें। वे ऐसा कोई भी काम नहीं करेंगे जिससे मंत्रियोंकी स्थिति संकटमें पड़ जाय। वे हड़ताल करेंगे तो केवल इसी कारणसे करेंगे कि मंत्री उनसे ऐसा कराना चाहते हैं। परन्तु कांग्रेस जब पदोंका त्याग कर दे और जब कांग्रेस कदाचित तत्कालीन सरकारके खिलाफ अहिंसात्मक लड़ाई छेड़ दे तो उस प्रसंगके अलावा जहां तक मैं कल्पना कर सकता हूं कांग्रेसी मंत्री कभी भी विद्यार्थियोंसे हड़ताल करनेके लिए नहीं कहेंगे। और कभी ऐसा प्रसंग आ जाय तब भी मुझे लगता है कि प्रारंभमें ही विद्यार्थियोंसे हड़तालके लिए पढ़ाई स्थगित करनेकी बात कहना मानो अपना दिवाला निकालना होगा। अगर हड़ताल जैसे किसी भी प्रदर्शनके लिए कांग्रेसके साथ जनसमूह होगा तो विद्यार्थियोंको — सिवा अंतिम सहारेके रूपमें — उसमें शामिल होनेके लिए नहीं कहा जायगा। गत स्वातंत्र्य युद्धके समय विद्यार्थियोंको सबसे पहले उसमें शामिल होनेके लिए नहीं कहा गया था। मुझे जहां तक याद है सबसे अन्तमें उनसे कहा गया था — वह भी केवल कॉलेजके विद्यार्थियोंसे।

अच्छा हो कि एक अध्यापक पत्र पर सन् १८ सितम्बरके 'हरिजन' में 'शिक्षामंत्रियोंके प्रति' शीर्षक जो लेख लिखा है उसे वे पत्रलेखक फिर जांच या दुबारा पढ़ें। विद्यार्थियों और अध्यापकोंके राजनीतिक स्वतन्त्रताके विषयमें मेरे विचार उस लेखमें उन्हें मिल जायेंगे।

लेकिन दूसरे एक सज्जन इसी सम्बन्धमें लिखते हैं :

> अगर हम सरकारके वेतनभोगी अफसरों, अध्यापकों और दूसरे कर्मचारियोंको राजनीतिमें भाग लेने दें तो सब कुछ चौपट हो जायगा। सरकारकी नीति पर जिन सरकारी अफसरोंको अमल करना है वे ही अगर उस नीतिके सम्बन्धमें वाद-विवाद करने लग जायें तो कोई भी सरकार चल नहीं सकती। आपकी यह अभिलाषा उचित ही है कि राष्ट्रका आगाओं

अध्यापकों और [illegible] विचारोंको प्रकट करनेकी पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिये। पर मुझे भय है कि आप अपनी स्थितिको अगर बिलकुल स्पष्ट नहीं करेंगे तो आपके खिलाफ गलतफहमी पैदा हो सकती है।

मेरा खयाल था कि मैंने अपने विचारोंको बिलकुल स्पष्ट रूपमें रख दिया है। जहां राष्ट्रीय सरकार होती है वहां उसके तथा उसके अधिकारियों और विद्यार्थियोंके बीच शायद ही कोई संघर्ष होता है। मेरे उक्त लेखमें अनुशासनभंगके प्रति तो चेतावनी है ही। उन अध्यापकोंकी राय तो इस बात पर है कि अब भी विद्यार्थियोंके पीछे जासूस लगे जाते हैं और उनके स्वतन्त्र विचारोंको कुचला जाता है और उनकी यह राय उचित ही है। कांग्रेसके मंत्री खुद प्रजाके हैं और प्रजामें से ही आये हैं। उन्हें कोई बात गुप्त नहीं रखना है। उनसे आशा तो यह की जाती है कि वे हरएक सार्वजनिक प्रवृत्तिसे व्यक्तिगत सम्पर्क रखेंगे — जिसमें विद्यार्थियोंका मानस भी आ जाता है। कांग्रेसका सारा तंत्र उनके हाथमें है और चूंकि यह तंत्र प्रजाकी इच्छाका प्रदर्शक है अतः इसकी शक्ति कानून, पुलिस और फौजकी अपेक्षा निश्चय ही अधिक है। जिन्हें इस प्रकारके लोकतंत्रका समर्थन प्राप्त नहीं है वे बन्दूकके काममें लाये हुए खाली कारतूसके समान हैं। जिन मंत्रियोंके पीछे कांग्रेसका बल है उनके लिए कहा जा सकता है कि कानून, पुलिस और फौज केवल ऊपरी दिखावेकी चीजें हैं। और कांग्रेस तो अनुशासनकी नियमपालनकी मूर्ति है। अगर यह बात उसमें न हो तो फिर उसमें और रखा ही क्या है? इसलिए कांग्रेसके शासन-कालमें नियमका पालन सबको मजबूरन नहीं बल्कि स्वेच्छासे ही होना चाहिये। १

७२

क्या यह पिकेटिंग है ?

एक शिकायत यह है कि शान्त पिकेटिंगके नाम पर धरना देनेवाले लोग ऐसे उपायोंका सहारा ले रहे हैं जो हिंसाकी हद तक पहुँच जाते हैं — जैसे कि जिन्दा आदमियोंकी सड़क परके दीवार-सी बना देना, जिसे कि खुद अपनेको या दीवार बनानेवालोंको चोट पहुँचाये बिना कोई पार नहीं कर सकता। शान्त पिकेटिंग मेरा सुझाया हुआ है, लेकिन मुझे ऐसा एक भी उदाहरण याद नहीं जिसमें मैंने ऐसी पिकेटिंगका प्रतिपादन किया हो। एक मिसाल इस सम्बन्धमें धरासनाका हवाला दिया है। वहाँ मैंने नमकके कारखाने पर अधिकार करनेकी बात जरूर सुझाई थी, लेकिन इस मामलेमें वह बात बिलकुल लागू नहीं होती। धरासनामें तो हमारा लक्ष्य नमकके कारखाने पर था, जिसे सरकारने नाहक छीनकर हमें अपने अधिकारमें रखा था। उस हालतमें पिकेटिंग शायद ही की जा सकती है। लेकिन यह तो साफ दिखता है कि कर्मचारियों या मजदूरोंके आगे खड़े होकर उन्हें अपने काम पर जानेसे रोका जाय। इसलिए इसे तो छोड़ ही देना चाहिये। ऐसा करनेवाले कार्यकर्ता अगर इससे बाज न आयें, तो मिलों या अन्य कारखानोंके मालिकोंका इसके लिए पुलिसकी मदद लेना बिलकुल उचित होगा और कांग्रेस सरकारको यह मदद देना ही होगा।

जिस (दूसरी) असंगतताका मुझ पर आरोप लगाया गया है वह कारखानेदारोंको दी गई मेरी यह सलाह है कि जिसे मैंने ऐसी पिकेटिंग कहा है उससे अपनी रक्षा करनेके लिए वे पुलिसकी मदद ले सकते हैं। मेरे आलोचकोंका यह कहना है कि दंगोंकी हालतके लिए मन्त्रिमण्डल पुलिस और फौजकी जो मदद ले सकता, उसकी निन्दा

करनेके बाद मैं मजदूर रखनेवाले मालिकोंको पुलिसकी मदद लेने और मंत्रियोंको वैसी मदद देनेके लिए कैसे कह सकता हूँ?

गवर्नर प्रान्तके मंत्रियोंके काम पर 'हरिजन' में मैंने जो कुछ लिखा था वह इस प्रकार है

> यह कहा जाता है कि जब हम स्वाधीनता प्राप्त कर लेंगे तब दंगे और ऐसी बातें नहीं होंगी। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि स्वतन्त्रता-संग्राममें अगर हम अहिंसात्मक कार्यकी पद्धतियोंको अच्छी तरह समझकर हरएक कल्पनीय परिस्थितिमें उसका उपयोग न करें तो हमारी यह आशा थोथी ही सिद्ध होगी। जिस हद तक कांग्रेसी मंत्रियोंको पुलिस या फौजका सहारा लेना पड़ा है उस हद तक मेरी रायमें हमें अपनी असफलता स्वीकार करनी ही चाहिये। क्योंकि दुर्भाग्यवश यह बिलकुल सच है कि मंत्री लोग इसके सिवा कुछ कर भी नहीं सकते थे। अतः मेरी ही तरह अगर हरएक कांग्रेसवाले और कांग्रेस कार्यसमितिको भी यह खयाल हो कि हम असफल हुए हैं तो मैं चाहूँगा कि वे इस बात पर विचार करें कि हम असफल क्यों हुए।

निश्चय ही इसमें मंत्रियोंके कामकी कोई निन्दा नहीं है। मैंने तो पुलिसकी आवश्यकता पड़ने पर उसी तरह दुःख प्रकट किया है जैसा कि पिकेटिंगके मामलेमें भी ऐसी आवश्यकता पड़ने पर मैं करूँगा। लेकिन जब तक हिंसात्मक अपराधोंका सामना करनेके लिए कांग्रेस कोई शांतिपूर्ण पद्धति न निकाले तब तक कांग्रेसी मंत्रियोंको अगर देशकी मौजूदा हालतमें उसके शासनका भार संभालना है तो उन्हें पुलिसका और मुझे भय है कि फौजका भी उपयोग करना ही पड़ेगा। यह जरूर है कि अगर वे कोई ऐसी पद्धति न ढूंढ निकालें जिसमें पुलिस और फौजके उपयोगकी जरूरत ही न रहे या कमसे कम

उनका उपयोग इतना कम कर लिया जाय कि देखनेवालेको वह कमी साफ मालूम पड़ने लगे तो उनके लिए वह दुर्भाग्यकी बात होगी। २

और पिकेटिंगका क्या हो? जो लोग बड़ीसे बड़ी कठिनाइयोंके बीच जैसे-तैसे शासनके भारी बोझको उठाये हुए हैं उनके घरों या दफ्तरों पर जाकर बच्चे या बड़े उन्हें गालियाँ दें यह असहनीय है। सत्याग्रहकी दृष्टिसे जब तक इसका कोई सही उपाय हमें न मिले तब तक मन्त्रियोंको इस बातकी छूट होनी ही चाहिए कि ऐसे अपराधोंके लिए जो तरीका उन्हें सबसे अच्छा लगे उसका वे उपयोग करें। अगर वे लोग ऐसा न करें तो कांग्रेसी राज्यमें जो स्वतन्त्रता सम्भव है वह जल्दी ही बिगड़कर शुद्ध गुंडापनका रूप ले लेगी। वह मुक्तिका मार्ग नहीं बल्कि सर्वनाशका सबसे आसान राजमार्ग है। इसलिए कोई भी वफादार मन्त्री देशके सर्वनाशका निमित्त बननेसे दृढ़ताके साथ इनकार करेगा। ३

७३

मन्त्रि-मंडल और सेना

प्रान्तीय स्वतन्त्रता जैसी कुछ भी वह है सविनय कानूनभंग द्वारा — फिर वह कितने ही नीचे दर्जेका क्यों न रहा हो — हासिल की गई है। लेकिन क्या यह महसूस नहीं किया जाता कि अगर कांग्रेसी मन्त्री पुलिस और फौजका अर्थात् ब्रिटिश तोपोंकी सहायताके बिना अपना काम न चला सकें तो वह स्वतन्त्रता खतम हो जायेगी? अगर आंशिक प्रान्तीय स्वतन्त्रता अहिंसात्मक उपायोंसे प्राप्त की गई है तो उसकी रक्षा भी उन्हीं उपायोंसे — किन्हीं दूसरे उपायोंसे नहीं — की जानी चाहिये। हालांकि पिछले २० वर्षोंसे — सर्वाधिक जन जागृतिकी इस अवधिमें — जनताका हथियारोंका जिनमें ईंट-पत्थर और लाठी भी शामिल हैं प्रयोग न करने और गरमान

अहिंसाको ही अपनानेकी शिक्षा दी जाती रही है फिर भी हम जानते हैं कि जनताकी तरफसे होनेवाली वास्तविक या काल्पनिक हिंसाको दबानेके लिए कांग्रेसी मंत्रियोंको हिंसाका प्रयोग करनेके लिए मजबूर होना पड़ा है। तब क्या हमारी अहिंसा कमजोरोंकी अहिंसा थी? १

७४
कांग्रेसी मंत्री और अहिंसा

श्री शंकरराव देव लिखते हैं

लोगोंकी समझमें यह बात नहीं आ रही है कि जो लोग अपनेको सत्याग्रही कहते हैं वे मंत्री बनने पर फौज और पुलिसका उपयोग क्यों करने लगते हैं। लोग मानते हैं कि धर्म या व्यवहार (नीति) के रूपमें माना हुआ अहिंसाका यह भंग है। और ऊपरी विचारसे यह सच भी मालूम होता है। कांग्रेसी मंत्रियोंके विचारमें और व्यवहारमें यह जो विरोध दिखाई देता है उसका समर्थन करना आसान न होनेके कारण हमारे कार्यकर्ता उलझनमें पड़ जाते हैं। और इस विसंगतिसे लाभ उठानेवाले कांग्रेसी या गैर-कांग्रेसी प्रचारकोंका मुकाबला करना उनके लिए मुश्किल होता है।

आम तौर पर कांग्रेसियोंकी अहिंसा कमजोरोंकी अहिंसा ही रही है। हिन्दुस्तानकी आजकी हालतमें यही हो सकता था इसे तो आप भी जानते हैं। आप कहते हैं कि बलवानकी अहिंसामें तेज होता है। फिर भी कमजोरोंको बलवान बनानेके लिए आपने अहिंसाका उपयोग स्वीकार किया। इतना ही नहीं बल्कि आप उनके नेता भी बने। इस तरह कमजोर होते हुए भी आज उनके हाथमें सत्ता आई है। यह असंभव है कि जो

लोग अंग्रेजी हुकूमतके खिलाफ अहिंसासे लड़े, वे ही अब अपने हाथमें सत्ता लेकर दंगोंमें दंगा-फसादके समय भी अहिंसाका उपयोग करके उसे मिटानेको तैयार हों। अगर वे ऐसा कोशिश करें भी तो न वे अपनी कोशिशमें सफल होंगे और न उन्हें इस काममें आम लोगोंकी हमदर्दी ही मिलेगी।

मैंने एक बार आपसे पूछा था कि क्या सत्याग्रही अपने हाथमें सत्ता या हुकूमतकी बागडोर ले सकता है? अगर वह ले सकता है तो उस सत्ताके जरिये वह अहिंसाको कैसे आगे बढ़ा सकता है? कृपा करके आप इस पर थोड़ा प्रकाश डालिये। जिसने अहिंसाको धर्म माना है वह कभी सरकारमें शामिल होना पसन्द नहीं करता। और मेरी राय है कि उसे ऐसा करना भी नहीं चाहिये। लेकिन मैं मानता हूं कि जिन्होंने अहिंसाको केवल नीति या व्यवहारकी दृष्टिसे अपनाया है उनके लिए पद ग्रहण करनेमें कोई दिक्कत न होनी चाहिये। बहुतेरे कांग्रेसी मंत्रीपद सम्भाले हुए हैं और इसके लिए आपने उन्हें इजाजत भी दी है। ऐसी हालतमें सवाल यह उठता है कि उन मंत्रियोंमें जिनका अहिंसामें विश्वास है उनसे आपका यह आशा रखना कहां तक उचित है कि वे खुद तो दंगा-फसादके मौके पर अहिंसाका ही उपयोग करें? अहिंसाके द्वारा सत्ता प्राप्त करनेके बाद उसका इस प्रकार कैसे उपयोग किया जाय कि जिससे हुकूमत ही अनावश्यक हो जाय? अगर ऐसा कोई मार्ग आप न सुझायेंगे तो हमारे अपने ध्येय तक पहुंचनेमें सत्याग्रह एक अधूरा साधन माना जायगा।

मेरी दृष्टिसे इसका उत्तर आसान है। कुछ समयसे मैंने यह कहना शुरू कर दिया है कि कांग्रेसने विधानसभा मंत्र और अहिंसा छोड़ देना चाहिये। अगर हम यह समझकर चलें कि कांग्रेस विधानसे ये दोनों शब्द हटें या न हटें फिर भी हम तो इन शब्दोंको

दूर कर दी गयी हैं तो हम स्वतंत्र रूपमें यह समझ सकेंगे कि कोई काम नहीं है या सरल।

मैं मानता हूं कि जब तक भीतरी शांति बनाये रखनेके लिए फौज या पुलिसका भी उपयोग होगा तब तक हम ब्रिटिश हुकूमत या दूसरी किसी विदेशी हुकूमतके अधीन ही रहेंगे — फिर चाहे देशका शासन कांग्रेसियोंके हाथमें हो या दूसरोंके हाथमें। मान लीजिये कि कांग्रेसी मंत्रिमण्डलोंका अहिंसामें विश्वास नहीं है। यह भी मान लीजिये कि लोग अर्थात् हिन्दू मुसलमान और दूसरे हिन्दुस्तानी सेना और पुलिसका सहारा चाहते हैं। अगर वे यह सहारा चाहते हैं तो वह उन्हें मिलता रहेगा। जो कांग्रेसी मंत्री अहिंसामें पूरा विश्वास रखते हैं उन्हें सेना या पुलिसकी मदद लेना अच्छा नहीं लगेगा। इसलिए वे इस्तीफा दे सकते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि जब तक लोगोंमें आपसमें फैसला करनेकी शक्ति नहीं आ जाती तब तक दंगा-फसाद होते रहेंगे और हममें अहिंसाका सच्चा बल पैदा ही नहीं होगा।

अब सवाल यह रहता है कि ऐसा अहिंसक बल कैसे पैदा हो सकता है? इस सवालका उत्तर अहमदाबादसे आये हुए एक पत्रके उत्तरमें ४ अगस्त १९४६ को मैं पहले लम्बे दूसरे लेखमें दे चुका हूं। जब तक हमारे हृदयोंमें बहादुरी और प्रेमके साथ मरनेकी शक्ति पैदा नहीं होती तब तक हम वीरोंकी अहिंसाके विकासकी आशा नहीं रख सकते।

अब सवाल यह है कि आदर्श समाजमें कोई राज्यसत्ता होगी या वह एक बिलकुल अराजक समाज बनेगा? मेरे विचारसे ऐसा प्रश्न पूछनेसे कोई लाभ नहीं होगा। अगर हम ऐसे समाजके लिए मेहनत करते रहें तो वह कुछ हद तक धीरे धीरे बनता रहेगा। और उस हद तक लोगोंको उससे लाभ पहुंचेगा। यूक्लिडने कहा है कि रेखा वही हो सकती है जिसमें चौड़ाई न हो। लेकिन ऐसी रेखा न तो आज तक कोई बना पाया है और न आगे बना पायेगा। फिर

भी रेखाका ध्यानमें रखनेके कारण ही हमने भूमितिमें प्रगति की है। यही बात प्रत्यक्ष आचारके बारेमें सच है।

इतना हमें जरूर याद रखना चाहिये कि आज दुनियामें कहीं भी अराजक समाज अस्तित्वमें नहीं है। अगर ऐसा समाज कभी कायम हो सकता है तो उसका आरंभ हिंदुस्तानमें ही हो सकता है, क्योंकि हिंदुस्तानमें ऐसा समाज बनानेकी कोशिश की गई है। आज तक हम आखिरी दरजेकी बहादुरी नहीं दिखा सके। परन्तु उसे दिखानेका एक ही मार्ग है, और वह यह है कि जो लोग उसमें विश्वास रखते हैं वे उसे अपने जीवनमें सिद्ध कर दिखायें। ऐसा करनेके लिए हमें मृत्युका भय उसी तरह छोड़ देना होगा, जिस प्रकार हमने जेलोंका भय छोड़ दिया है। १

७५

सचमुच शर्मकी बात

जिस अहमदाबाद शहर पर सरदार वल्लभभाई पटेलको नाज रहा है और जिसकी म्युनिसिपैलिटीमें उन्होंने प्रथम श्रेणीका बलिदानी काम किया है, उससे आज भगवान रूठ गया है। अहमदाबादके हिन्दू और मुसलमान हमेशा एक-दूसरेके साथ मिलजुलकर शान्तिसे रहते आये हैं। लेकिन मालूम होता है कि इधर अहमदाबादवालों पर पागलपन सवार हो गया है। इससे गांधीजीको अपार वेदना हुई है। प्रार्थनाके बाद अपने एक भाषणमें उन्होंने कहा: मालूम होता है कि अहमदाबादके हिन्दू और मुसलमान हैवान बन गये हैं। अहमदाबादमें पिछले दिनों जो लोग मारे गये हैं वे सब छुरोंसे या ऐसे ही दूसरे हथियारोंसे किये गये आक्रमणसे ही मरे हैं। यह सचमुच एक शर्मकी बात है कि लोगोंको एक-दूसरेका गला काटनेसे रोकनेके लिए पुलिस और सेनाकी मदद लेनी पड़ती है। अगर एक पक्षके लोग कत्ल करना बन्द कर दें तो

दंगा [illegible] बन्द ही नहीं। हिन्दुस्तानके ४० करोड़ लोगोंमें से कुछ लाख लोग भले दंगेसे मारे जायँ या मर मिटें तो उसमें क्या हर्ज है? अगर वे बिना मारे मरनेका मन्त्र सीख सकें तो इतिहास और पुराणोंमें कर्मभूमिके नामसे प्रसिद्ध भारतवर्ष स्वर्गभूमि बन जाय।

गांधीजीने बम्बई सरकारके गृहमंत्री श्री मोरारजी देसाईसे जो अहमदाबाद जानेसे पहले उनसे मिलने आये थे कहा था कि उन्हें अकेले एक व्यक्तिके रूपमें इस आगका सामना करना चाहिये और इस तूफानमें पुलिस या सेनाकी मदद नहीं लेनी चाहिये। अगर जरूरत समझें तो वे स्वयं इस आगको बुझानेकी कोशिशमें श्री गणेशशंकर विद्यार्थीकी तरह मर मिटें। श्री मोरारजी देसाईने अहमदाबाद पहुँचकर वहाँके हिन्दुओं और मुसलमानोंके प्रतिनिधियोंकी एक संयुक्त कॉन्फरेंस बुलाई और उनसे कहा कि अगर आप चाहें तो शहरसे पुलिस और सेना उठा लेनेकी मेरी तैयारी है। लेकिन घबराये हुए लोगोंने एकराय होकर उनसे कहा कि हम ऐसा कोई खतरा उठानेको तैयार नहीं हैं। परिणाम यह हुआ कि शहरमें पुलिस और सेना बनी रही। इस पर गांधीजीने अत्यन्त व्यथित होकर कहा : इस तरीकेसे कुछ समयके लिए अहमदाबादमें दंगे फसाद जरूर रुक गये हैं। लेकिन आज वहाँ जो शान्ति दिखाई देती है वह तो स्मशानकी शान्ति है। उस पर किसीको कोई नाज नहीं हो सकता। काश हिन्दू और मुसलमान दोनों मिल जाते और उन्हें आपसके झगड़ोंसे दूर रखनेके लिए बुलाई गई पुलिस और सेनाकी मदद लेनेसे वे इनकार कर देते।

गांधीजीने लोगोंको चेतावनी देते हुए कहा कि जब तक वे शान्ति और कानूनकी रक्षाके लिए पुलिस और सेनाकी मदद लेते रहेंगे तब तक सच्ची आजादीकी बात निरी बकवास ही रहेगी। १

विभाग – १२ विविध

७६

प्रांतीय गवर्नर कौन हो?

यह पत्र आचार्य श्रीमन्नारायण अग्रवालने वर्धासे हिंदीमें लिखा है

एक सवाल है जो मेरे खयालसे महत्त्वका है और जिसके बारेमें मैं आपकी राय जानना चाहता हूं। भारतका जो नया विधान बनाया जा रहा है उसमें प्रान्तोंके गवर्नर चुननेके लिए नियम रखे गये हैं। प्रान्तका गवर्नर उस प्रान्तके सभी बालिगोंके मतसे चुना जायगा। इसलिए यह साफ जाहिर है कि जिस कांग्रेसको पार्लियामेण्टरी बोर्ड चुनेगा उसे ही आम तौरसे प्रान्तकी जनता गवर्नर चुन लेगी। प्रान्तका मुख्यमंत्री भी कांग्रेस पार्टीका ही होगा। प्रान्तका गवर्नर ऐसा ही व्यक्ति होना चाहिये जो उस प्रान्तकी पार्टीबाजीसे अलग रहे। लेकिन अगर प्रान्तका गवर्नर आम तौरसे कांग्रेसी होगा और उसी प्रान्तका होगा तो वह कांग्रेस दलकी पार्टीबाजीसे अलग नहीं रह सकेगा। या तो वह कांग्रेसी मुख्यमंत्रीके इशारे पर चलेगा या फिर गवर्नर और मुख्यमंत्रीके बीच कुछ न कुछ खींचातानी रहेगी।

मेरे खयालसे तो प्रान्तोंमें अब गवर्नरोंकी जरूरत ही नहीं है। मुख्यमंत्री ही सब कामकाज चला सकता है। जनताका ५५०० रु. मासिक गवर्नरके वेतन पर व्यय ही क्यों खर्च किया जाये? फिर भी अगर प्रान्तोंमें गवर्नर रखने ही हैं, तो वे उसी प्रान्तके नहीं होने चाहिये। बालिग मतसे उन्हें चुननेमें भी

चलानेका भार और परेशानी होगी। यह अच्छा होगा कि अथवा राष्ट्रपति हर प्रांतमें दूसरे किसी प्रान्तका ऐसा प्रतिष्ठित आदमी राजदूत भेजें जो उस प्रान्तकी पार्टीबाजीसे अलग रहकर वहांके सार्वजनिक और राजनीतिक जीवनको ऊंचा उठा सकें। आज प्रांतोंके जो गवर्नर केन्द्रीय सरकारने नियुक्त किये हैं वे करीब करीब इसी सिद्धान्तके अनुसार चुने गये हैं ऐसा लगता है। और इसलिए प्रांतोंका राजनीतिक जीवन भी ठीक हो चल रहा है। अगर स्वतंत्र भारतके आगामी विधानमें उसी प्रान्तके आदमी खालिस मतसे चुनकर कायम रखा गया तो मुझे डर है कि प्रांतोंका राजनीतिक जीवन ऊंचा नहीं रह सकेगा।

उस विधानमें ग्राम-पंचायतोंको और राजनीतिक सत्ताको छोटी इकाइयोंमें बांट देनेका कोई जिक्र नहीं किया गया है। लेकिन मेरा उद्देश्य अपने पूज्य नेताओंकी टीका करना जरा भी नहीं है। जो बात मुझे खटकती है उस पर मैं आपकी राय जानना चाहता हूं।

आचार्यजीने प्रांतीय गवर्नरोंके बारेमें जो कहा है उसके समर्थनमें कहनेको तो बहुत है। लेकिन मुझे कबूल करना होगा कि मैं विधान परिषदकी सब कारवाई नहीं देख सका हूं। मुझे इतना भी मालूम नहीं है कि गवर्नरके चुनावका प्रस्ताव किस तरह पास हुआ। इसको न जानते हुए भी मुझे आचार्यजीकी दलील मजबूत लगती है। उसमें यह चीज मुझे जंचती है कि मुख्यमंत्रीको गवर्नर समझा जाय और किसी दूसरेको गवर्नर नहीं बनाया जाय। इसके बावजूद कि लोगोंकी तिजोरीकी कौड़ी-कौड़ीको बचाना मुझे बहुत पसन्द है, पैसेकी बचतके लिए प्रान्तीय गवर्नरोंकी संस्थाको एकदम उड़ा देना सही अर्थशास्त्र नहीं होगा। गवर्नरोंको हस्तक्षेप करनेका बहुत अधिकार देना ठीक नहीं है। वैसे ही उनको सिर्फ शोभाके पुतले बना देना भी ठीक नहीं होगा। मंत्रियोंके कामको सुधारनेका अधिकार उन्हें होना चाहिये।

प्रान्तकी खटपटसे अलग होनेके कारण भी वे प्रान्तका कारोबार ठीक तरहसे देख सकेंगे और मंत्रियोंको गलतियोंसे बचा सकेंगे। गवर्नर लोग अपने अपने प्रान्तकी नीतिके रक्षक होने चाहिये।

आचार्यजी जैसा बताते हैं अगर विधानमें ग्राम-पंचायत और सत्ताकी छोटी इकाइयोंमें बांटने (विकेन्द्रीकरण) के बारेमें इशारा तक नहीं है तो यह गलती दूर होनी चाहिये। अगर आम जनताकी राय ही हमारे लिए सब कुछ है तो पंचोंको अधिकार जितना ज्यादा हो उतना लोगोंके लिए अच्छा है। पंचोंकी कारवाई और प्रभाव लाभदायक हो इसके लिए लोगोंकी सही शिक्षा बहुत आगे बढ़नी चाहिये। यह लोगोंकी फौजी ताकतकी बात नहीं है बल्कि नैतिक ताकतकी बात है। इसलिए मेरे मनमें तो तालीमसे नई तालीमका ही मतलब है। १

७७

भारतीय गवर्नर

१ हिन्दुस्तानी गवर्नरको चाहिये कि वह खुद पूरे संयमका पालन करे और अपने आसपास संयमका वातावरण खड़ा करे। इसके बिना शराबबंदीके बारेमें सोचा भी नहीं जा सकता।

२ उसे अपने आपमें और अपने आसपास हाथ-कताई और हाथ-बुनाईका वातावरण पैदा करना चाहिये जो हिन्दुस्तानके करोड़ों मूक लोगोंके साथ उसकी एकताकी प्रकट निशानी हो, 'मेहनत करके रोटी कमाने' की जरूरतका और संगठित हिंसाके खिलाफ — जिस पर आजका समाज टिका हुआ मालूम होता है — संगठित अहिंसाका जीता-जागता प्रतीक हो।

३ अगर गवर्नरको अच्छी तरह काम करना है तो उसे लोगोंकी निगाहोंसे बचे हुए और फिर भी सबकी पहुंचके लायक छोटे मकानमें रहना चाहिये। ब्रिटिश गवर्नर [illegible]

सत्ताको छिपाता था। उसके लिए और उसके लोगोंके लिए सुरक्षित महल बनाया गया था — ऐसा महल जिसमें वह और उसके साम्राज्यको टिकाये रखनेवाले उसके सेवक रह सकें। हिन्दुस्तानी गवर्नर राजा-नवाबों और दुनियाके राजदूतोंका स्वागत करनेके लिए थोड़ी शान-शौकतवाली इमारतें रख सकते हैं। गवर्नरके मेहमान बननेवाले लोगोंको उसके व्यक्तित्व और आसपासके वातावरणमें ईवन हैण्डेड जस्टिस (सर्वोदय) — सबके साथ समान बरताव — की सच्ची शिक्षा मिलनी चाहिये। उसके लिए कीमती या विदेशी महंगे फर्नीचरकी जरूरत नहीं। सादा जीवन और ऊंचे विचार उसका आदर्श होना चाहिये। यह आदर्श सिर्फ उसके दरवाजेकी ही शोभा न बनाये बल्कि उसके रोजके जीवनमें भी दिखाई दे।

४ उसके लिए न तो किसी रूपमें छुआछूत हो सकती है और न जाति, धर्म या रंगका भेद। हिन्दुस्तानका नागरिक होनेके नाते उसे सारी दुनियाका नागरिक होना चाहिये। हम पढ़ते हैं कि खलीफा उमर इसी तरह सादगीसे रहते थे, हालांकि उनके कदमों पर लाखों-करोड़ोंकी दौलत लोटती रहती थी। उसी तरह पुराने जमानेमें राजा जनक रहते थे। इसी सादगीसे ईटनके मुख्याधिकारी जैसा कि मैंने उन्हें देखा था अपने भवनमें ब्रिटिश द्वीपोंके सामन्तों और नवाबोंके लड़कोंके बीच रहा करते थे। तब क्या करोड़ों भूखोंके देश हिन्दुस्तानके गवर्नर इतनी सादगीसे नहीं रहेंगे?

५ वह जिस प्रान्तका गवर्नर होगा उसकी भाषा और हिन्दुस्तानी बोलेगा, जो हिन्दुस्तानकी राष्ट्रभाषा है और नागरी या उर्दू लिपिमें लिखी जाती है। वह न तो संस्कृत शब्दोंसे भरी हुई हिन्दी है और न फारसी शब्दोंसे लदी हुई उर्दू। हिन्दुस्तानी दर असल वह भाषा है जिसे विन्ध्याचलके उत्तरमें करोड़ों लोग बोलते हैं।

हिन्दुस्तानी गवर्नरमें जो जो गुण होने चाहियें उनकी यह पूरी सूची नहीं है। यह तो सिर्फ मिसालके तौर पर दी गई है। १

७८

गवर्नर और मंत्रीगण

गवर्नरोंका कर्तव्य और अधिकार अपने मंत्रियोंको राज्यकी नीतिकी मोटी मोटी बातों पर सलाह देना और अमुक सत्ताओं पर अमल करनेमें रहे खतरेके बारेमें उन्हें सावधान कर देना है। परन्तु इतना करनेके बाद उन्हें अपने मंत्रियोंको उनके स्वतंत्र निर्णय पर अमल करनेके लिए छोड़ देना चाहिये। अगर ऐसा न किया जाय, तो जिम्मेदारी शब्दका कोई अर्थ नहीं रह जायगा और जो मंत्री अपने मतदाताओंके प्रति जिम्मेदार हैं उनके हिस्सेमें अपमान और अनादरके सिवा दूसरा कुछ नहीं आयेगा — यदि कानूनके द्वारा उनके हाथमें सौंपे गये दैनिक राजकाजमें अपनी जिम्मेदारीको उन्हें गवर्नरोंके साथ बांटना पड़े। १

७९

किसान प्रधानमंत्री

एक भाईने मुझसे किसानोंकी बात की। मैंने कहा, मेरा चले तो हमारा गवर्नर-जनरल किसान होगा, हमारा प्रधानमंत्री किसान होगा, सब-कुछ किसान होगा, क्योंकि यहांका राजा किसान है। मुझे बचपनमें सिखाया गया था — 'हे किसान, तू बादशाह है।' किसान जमीनसे अनाज पैदा न करे तो हम क्या खायेंगे? हिन्दुस्तानका सच्चा राजा तो वही है। लेकिन आज हम उसे गुलाम बनाकर बैठे हैं। आज किसान क्या करे? एम॰ ए॰ बने? बी॰ ए॰ बने? ऐसा किया तो किसान मिट जायगा। बादमें वह कुदाली नहीं चलायेगा। जो आदमी अपनी जमीनमें से अन्न पैदा करता है और खाता है, वह जनरल बने, प्रधान बने, तो हिन्दुस्तानकी शकल बदल जायगी। फिर आज जो सड़ांध है वह नहीं रहेगा। १

८०

प्रधानमंत्रीका श्रेष्ठ काम

हिंदू और सिक्ख शरणार्थियोंके कष्टोंका उल्लेख करते हुए गांधीजीने कहा : पण्डितजीको मै जानता हूं। उनके पास अगर एक गीला और एक सूखा दो बिछौने होंगे तो वे सूखे पर किसी दुखीको सुलायेंगे और गीला खुद लेंगे या कसरत करके अपने शरीरको गरम रखेंगे। मै यह पढकर बहुत खुश हुआ कि उनका घर महमानोंसे भरा रहने पर भी वे कहते हैं कि मै अपने घरमें दो एक कमरे शरणार्थियोंके लिए निकाल दूंगा। उनमें दुखियोंको रखूंगा। ऐसा ही दूसरे बड़े धनी लोग और फौजी अफसर भी करें तो कोई दुखी नहीं रहेगा। उसका बड़ा असर होगा। इस सुंदर देशमें हमारे पास ऐसे रत्न हैं। दुखी जब देखेगा कि वह अकेला नहीं है उसके साथ और भी लोग हैं तो उसका दुख दूर होगा और वह मुसलमानोंके साथ दुश्मनी नहीं करेगा। १

एक भाई लिखते हैं कि जवाहरलालजी दूसरे मंत्री और फौजी अफसर वगैरा सब अपने अपने घरोंमें से कुछ जगह शरणार्थियोंके लिए निकालें तो भी उनमें कितने लोग बस सकते हैं? कहनेवाले ज्यादा हैं करनेवाले कम।

ठीक है। कुछ हजार ही उनमें रह सकेंगे। काम इतना बड़ा नहीं है पर करनेवाले एक उदाहरण सामने रखेंगे। इंग्लैंडके राजा कुछ भी त्याग करें एक प्यालो शराब भी छोडें तो भी उनकी कदर होती है। सब सभ्य देशोंमें ऐसा होता है। पण्डित नेहरूने सारे देशके सामने एक सुन्दर उदाहरण रखा है। इसीलिए दिल्लीकी तरफ अधिक शरणार्थी आकर्षित हो रहे हैं। जाहिर है कि उन्हें लगता है कि दिल्लीमें उनके साथ उत्तम व्यवहार होगा। २

८१

विधान सभाका अध्यक्ष

जो अध्यक्ष (स्पीकर) कानूनकी किसी धाराके पाठके स्पष्ट अर्थको जान-बूझकर उलटा अर्थ करे तो वह अपनेको इस उच्च पदके अयोग्य सिद्ध करेगा और कांग्रेसके ध्येयको बदनाम करेगा। उसके लिए यह आवश्यक है कि वह हर तरहसे कांग्रेसकी प्रामाणिकता और शुद्धताकी साख बनाये रखे। लेकिन मेरा मतलब तो यही है कि जहां किसी धाराके स्पष्टतः दो या दोसे अधिक अर्थ लगाये जा सकते हों वहां अध्यक्ष इस बातके लिए बंधा हुआ है कि वह उसका वही अर्थ लगाये जो राष्ट्रीय ध्येयके अनुकूल पड़ता हो। लेकिन जब किसी धाराका सिर्फ एक ही अर्थ निकलता हो तो अध्यक्षको बिना किसी हिचकिचाहटके वही अर्थ बताना चाहिये। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि अध्यक्षकी ऐसी निष्पक्षतासे उसकी ख्याति बढ़ेगी और उस हद तक कांग्रेसकी नैतिक प्रतिष्ठा भी जरूर बढ़ेगी। हिंसाका परित्याग कर देनेके बाद कांग्रेसकी शक्ति तो कांग्रेसवादियोंकी वैयक्तिक नैतिक दृढ़ता और निर्भयता पर ही पूर्णतः अवलम्बित है। १

८२

सरकारी नौकरियां

ऐसा लगता है कि अगर यूनियनके सारे प्रान्तोंको हर दिशामें एकसी प्रगति करनी हो तो हर प्रान्तकी नौकरियां पूरे हिन्दुस्तानकी प्रगतिके खयालसे ज्यादातर वहांके रहनेवालोंको ही दी जानी चाहिये। अगर हिन्दुस्तानको दुनियाके सामने स्वाभिमानसे अपना सिर ऊंचा रखना है तो किसी प्रान्त और किसी जाति या तबकेको पिछड़ा हुआ नहीं रखा जा सकता। लेकिन हिन्दुस्तान अपने हथियारोंके बल पर ऐसा नहीं कर सकता जिससे दुनिया ऊब चुकी है। उसे अपने हर

नागरिकके जीवनमें और हालमें ही मेरे बताये हुए समाजशास्त्रमें प्रकट होनेवाली अपनी मौलिक संस्कृति द्वारा ही चमकना चाहिये।

इसका यह मतलब है कि अपनी योजनाओं या उसूलोंको जनप्रिय बनानेके लिए किसी भी तरहकी शक्ति या दबाव काममें न लिया जाय। जो चीज सचमुच जनप्रिय है उसे सबसे मनवानेके लिए जनताकी रायके सिवा दूसरी किसी शक्तिकी शायद ही जरूरत हो। इसलिए बिहार, उड़ीसा और आसाममें कुछ लोगों द्वारा की गई हिंसाके जो बड़े दृश्य देखनेमें आये वे कभी दिखाई नहीं देने चाहिये थे। अगर कोई आदमी नियमके खिलाफ काम करता है या दूसरे प्रांतोंके लोग किसी प्रांतमें आकर वहाँके लोगोंके अधिकार छीनते हैं, तो उन्हें दंड देने और व्यवस्था बनाये रखनेके लिए जनप्रिय सरकार प्रांतोंमें राज्य कर रही है। प्रांतीय सरकारोंका यह फर्ज है कि वे दूसरे प्रांतोंसे अपने यहाँ आनेवाले सब लोगोंकी पूरी पूरी रक्षा करें। जिस चीजको तुम अपनी समझते हो उसका इस तरह उपयोग करो कि दूसरेको नुकसान न पहुँचे — यह न्यायका जाना पहचाना सिद्धांत है। यह नैतिक व्यवहारका भी सुंदर नियम है। आजकी हालतमें यह कितना उचित मालूम होता है!

रोममें रोमनोंकी तरह रहो, यह कहावत जहाँ तक रोमन बुराइयोंसे दूर रहती है वहाँ तक समझदारीसे भरी और लाभ पहुँचानेवाली कहावत है। एक-दूसरेके साथ घुल मिलकर उन्नति करनेके काममें यह ध्यान रखना चाहिये कि बुराइयोंको छोड़ दिया जाय और अच्छाइयोंको पचा लिया जाय। १

जहाँ तक सरकारी विभागोंमें नौकरियोंका सवाल है, मेरी राय है कि यदि हम साम्प्रदायिक भावनाको यहाँ भी दाखिल करेंगे तो यह बात सुशासनके लिए घातक सिद्ध होगी। शासन सुचारु रूपसे चले इसके लिए यह जरूरी है कि वह सबसे योग्य आदमियोंके हाथमें रहे। उसमें किसी तरहका पक्षपात तो होना ही नहीं चाहिये। अगर हमें

पांच इंजीनियरोंकी जरूरत हो तो ऐसा नहीं होना चाहिये कि हम हरएक जातिसे एक एक इंजीनियर लें। हमें तो पांच सबसे सुयोग्य इंजीनियर चुन लेने चाहियें भले व सब मुसलमान हों या पारसी हों। सबसे निचले दरजेकी जगह यदि जरूरी मालूम हो परीक्षाके जरिये भरी जाय और यह परीक्षा किसी ऐसी समितिकी निगरानीमें हो जिसमें विविध जातियोंके लोग हों। लेकिन नौकरियोंका बंटवारा विविध जातियोंकी संख्याके अनुपातमें नहीं होना चाहिये। राष्ट्रीय सरकार बनेगी तब शिक्षामें पिछड़ी हुई जातियोंको शिक्षाके मामलेमें जरूर दूसरोंकी अपेक्षा विशेष सुविधायें पानेका अधिकार होगा। ऐसी व्यवस्था करना कठिन नहीं होगा। लेकिन जो लोग देशके शासन-तंत्रमें बड़े-बड़े पदोंको पानेकी आकांक्षा रखते हैं उन्हें उसके लिए जरूरी परीक्षा अवश्य पास करनी होगी। २

सिविल सर्विस और तनख्वाहें

मेरे पास शिकायतें आती हैं कि सिविल सर्विसवालोंको इतनी भारी तनख्वाह क्यों दी जाती है? लेकिन सिविल सर्विसवालोंको हम एकदम हटा नहीं सकते। अगर हटा दें तो काम कैसे चले? कुछ लोग तो चले गये। इसलिए जो लोग रह गये हैं उन्हें अधिक मेहनतका काम करना पड़ता है। इसलिए सरकारने उन्हें पदमें भी दिया है। जो लोग पदके लायक हैं उन्हें पद मिले तो मन चाही शिकायत नहीं हो सकती। परन्तु सच्चा सिविल सर्विस तो हम लोग हैं। हम जितना विश्वास सिविल सर्विस लोगों पर रखते हैं उतना अगर अपने आप पर रखें तो हम बहुत आगे बढ़ सकते हैं। अगर हम देश पर तो जैसे सिविल सर्विसवालोंको सजा होती है वैसे ही हमें भी सजा होनी चाहिये। अमुक काम सौंप कर कहा जाय कि इतना काम आपको करना ही है। इस तरह सारी प्रजाको हम जिम्मेदार समझते हैं। जिन्हें पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी बनाते हैं उन्हें भी अधिकार भारी वेतन देना पड़ता है और सिविल सर्विसवालोंको भी। जब बादशाह

हाथमें कराचीका कारोबार नहीं था तब तो हम किसानोंको मासिक वेतन नहीं देते थे। मासिक वेतन देना मकान देना और पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी बनाना यह मुझे तो चुभता है। कांग्रेसका काम हमेशा सेवा करना रहा है। पहले हमें आजादी हासिल करना थी। अब हमें हिंदुस्तानको ऊंचा उठाना है और यह देखना है कि हिंदू सिक्ख मुसलमान पारसी ईसाई सब लोग यहां शांतिसे रहें। इस कामके लिए क्या हम पैसे लें? आज तक नहीं लेते थे तो अब क्यों लें? १५ अगस्तके बाद हमने देखा कितना आगे बढ़ाया है? कितना धान्य गिरा कितनी उपज बढ़ी? कितने उद्योग बढ़े? इसका हिसाब तो लीजिए। पैसे क्या कर सकते हैं? हिंदका काम बढ़े दाम घटे और दाम बढ़ें तब तो बात है। तब ग्राहक लोग भी महसूस करेंगे कि कुछ हो रहा है। ऐसा न हो और हम खर्च बढ़ाते जायें यह कैसे हो सकता है? हर पेढ़ीको अपनी आमदनी और खर्चका हिसाब रखना पड़ता है। आमदनी खर्चसे ज्यादा हो तो अच्छा लगता है। लेकिन इससे उलटी बात हो तो चिंता होती है। हिंदुस्तान एक बड़ी पेढ़ी है। आज हमारे पास पैसे हैं इसलिए हम नाचते हैं। लेकिन हम समझ कर नहीं चलेंगे तो वे पैसे रहनेवाले नहीं हैं। ५

सिविल सर्विसवालोंके कर्तव्य

लोकराज्य तो वही है जिसमें कोई रास्ते चलता आदमी उसके विषयमें क्या कहता है इसका अभ्यास किया जाय। और ऐसा राज्य वाइसरायके महल या आलीशान मकानमें बैठकर नहीं चल सकता। हम तो गरीब हैं। इसलिए पैदल चलकर काम हो सकता हो तो हम मोटरका उपयोग न करें। यदि कभी कोई मोटरमें बैठनेको कहेगा तो हम उससे भी कहेंगे कि आपकी मोटर आपको ही मुबारक हो हम तो पैदल ही आफिस जायेंगे। महलमें रहनेवाला या मोटरमें फिरनेवाला आदमी राज्य नहीं चला सकता क्योंकि इसके कारण उसे आम जनताकी प्रतिक्रिया मालूम होना कठिन हो जाता है। लेकिन

यदि यह पन्ल घूम फिर और आम जनताके बीच रहे तो उसे सच्ची जानकारी प्राप्त हो सकती है।

दूसरी एक बात और है। मेरे पास ऐसी शिकायतें आई है कि आजकल सरकारने व्यापार भी नष्ट कर दिया है। उदाहरणके रूपमें अनाजकी व्यवस्था राजद्रबावू सभाले रहे है वस्त्रकी व्यवस्था राजाजी देख रहे है। ऐसी जीवनके लिए आवश्यक वस्तुओंका व्यापार श्रेष्ठ पुरुषोंके हाथमें होते हुए भी लोगोंको जरूरी वस्त्र और अन्न मिल नही रहा है। इसका कारण यह है कि सरकारी नौकर काफी बड़ी मात्रामें रिश्वत लेते है। मै नही कह सकता कि यह खबर कहा तक सही है। लेकिन यदि सरकारी नौकर ऐसे ही हो तो उन विभागोंके मंत्रियोंको इस बातकी उचित जांच अवश्य करनी चाहिये। सरकारी नौकरोंकी जिन पर कृपा हो जिनका वसीला हो अथवा सगे-सम्बन्धी हो उन्हें तुरन्त नौकरी मिल जाय सब्याराकी अपेक्षा दुगुने-तीगुने वेतन काम मिल जायें — ऐसी तमाम बातें यदि सच हो तो हमें शरम आनी चाहिये। अब हम पर कोई विदेशी सरकार राज्य नही कर रही है। और अंग्रेजोंके जमानेमें छोटे सरकारी कर्मचारियों पर जिस तरहके हुक्म बजाये जाते थे वैसे हुक्म भी अब आप पर कोई नही बजा सकता। इसलिए छोटे-बड़े सब लोगोंको वफादारीके साथ देशकी सेवा करनी चाहिये। आपको अपने मनसे यह वृत्ति निकाल देनी चाहिये कि नौकरी करके पेट भर लिया और अपना पेट भर गया तो हमने दुनिया जीत ली। जितने भी सिविल सर्विसवाले कर्मचारी है उनसे मै विनतीपूर्वक कहना चाहता हूं कि आजसे आपकी जिम्मेदारी दस गुना ज्यादा बढ़ रही है। आप लोग जितना वफादारीसे देशकी सेवा करेंगे उतनी ही जल्दी स्वराज्यमें सुख शान्ति और समृद्धि प्राप्त होगी। ४

घुड़दौड़ और सिविल सर्विस

नीचे दिया हुआ भाग 'हरिजनबंधु' में छपे एक गुजराती पत्रका सारांश है

बरसातके मौसममें पूनामें घुड़दौड़ होती है। तब स्पेशल गाड़ियां हर रोज पूना जाती हैं और वापस आती हैं। और यह तब होता है जब गाड़ियोंमें जगह नहीं मिलती और व्यापारियों यात्रियोंको ठसाठस भरी हुई गाड़ियोंमें सफर करना पड़ता है। यात्री अक्सर पायदानों पर खड़े खड़े सफर करते देखे जाते हैं। नतीजा यह होता है कि कभी कभी प्राणघातक दुर्घटनाएं हो जाती हैं। इसमें यह बात और जोड़ दीजिये कि जब पेट्रोलकी सब जगह कमी है तब विशेष मोटर गाड़ियां भी बम्बईसे पूना दौड़ती हैं। क्या ये यात्री बम्बईमें अपना हमेशाका रोजगार नहीं लेते? क्या इन्हें स्पेशल गाड़ियोंमें और घोड़ोंके मैदानमें जाना नहीं मिलता?

इस परसे मेरे मनमें सिविल सर्विसकी जांच करनेकी बात पैदा होती है। जिन लोगोंके बुरे प्रबन्धकी हम पहले निंदा करते थे क्या वे ही लोग आज देशका राजकाज नहीं चला रहे हैं? हमारा आज क्या हाल हो रहा है? हमें जरूरतका अनाज और कपड़ा भी प्राप्त नहीं हो रहा है। फिर भी हम ऐसे खर्चीले खेल-तमाशोंमें फंसे हुए हैं।

मैं अक्सर घुड़दौड़की बुराइयोंके बारेमें लिख चुका हूं। लेकिन उस समय मेरी बात पर कोई ध्यान नहीं देता था। विदेशी शासक इस बुराईको पसंद करते थे और उन्होंने इसे एक तरहकी अच्छाईका जामा पहना दिया था। लेकिन अब उस गन्दी बुराईसे चिपके रहनेका कोई कारण नहीं है। या कहीं ऐसा न हो कि हम विदेशी हुकूमतकी बुराइयोंको तो बनाये रखें और उसकी अच्छाइयां उसके साथ ही खतम हो जायं?

पत्र लिखनेवाले भाई सिविल सर्विसके बारेमें जो कहते हैं उसमें बहुत सचाई है। वह एक ऐसी संस्था है जिसके आत्मा नहीं है। वह अपने मालिकके ढंग पर चलती है। इसलिए अगर हमारे प्रतिनिधि

सचेत रहें और हम उन पर अपना फर्ज अदा करनेके लिए जोर डालें तो सिविल सर्विसके जरिये बहुत कुछ काम किया जा सकता है। आलोचना किसी भी लोकतांत्रिक सरकारका भोजन है। लेकिन वह रचनात्मक और समझदारीसे भरी होना चाहिये। जन-आन्दोलनके आरंभमें कांग्रेस अपनी जिस बुनियादी पवित्रताके लिए प्रसिद्ध थी उस पर ही जनताकी आशा टिकी हुई है। और अगर हमें जिन्दा रहना है तो कांग्रेसमें वह पवित्रता हमें फिरसे लानी होगी। ५

सिविल सर्विस और कंट्रोल

सिविल सर्विसके कर्मचारी आफिसोंमें बैठकर काम करनेके आदी हैं। वे दिखावटी कार्रवाइयों और कागजोंमें ही उलझे रहते हैं। उनका काम इससे आगे नहीं जाता। वे कभी किसानोंके सम्पर्कमें नहीं आये। वे किसानोंके बारेमें कुछ नहीं जानते। मैं चाहता हूं कि वे नम्र बनकर राष्ट्रमें जो परिवर्तन हुआ है उसे पहचानें। कंट्रोलोंकी वजहसे उनके इस तरहके कामोंमें कोई रुकावट नहीं होनी चाहिये। उन्हें अपनी सूझ-बूझ पर निर्भर करनेका मौका देना चाहिये। कंट्रोल हटानेका यह नतीजा नहीं होना चाहिये कि वे अपने आपको लाचार महसूस करें। मान लीजिये कि इस बारेमें कुछ बड़े डर सच साबित हों और कंट्रोल हटानेसे हालत ज्यादा बिगड़ जाय तो वे फिर कंट्रोल लगा सकते हैं। मेरा अपना तो यह विश्वास है कि कंट्रोल उठा देनेसे हालत सुधरेगी। लोग खुद इन सवालोंको हल करनेकी कोशिश करेंगे और उन्हें आपसमें लड़नेका समय नहीं मिलेगा। ६

सिविल सर्विस पुलिस और फौज

आज हिन्दुस्तानमें सिविल सर्विसके कर्मचारी पुलिस और फौज जिनमें ब्रिटिश अफसर भी शामिल हैं सब जनताके सेवक हैं। वे दिन अब बीत गये जब वे विदेशी शासकोंसे तनख्वाह पाकर जनताके साथ मालिकों जैसा बरताव करते थे। अब उन्हें पंचायत राज्यके वफादार सेवक बनना होगा। वे मंत्रियोंसे आदेश लेंगे। उन्हें

घूसखोरी अप्रामाणिकता और पक्षपातके ऊपर उठना होगा। दूसरी तरफ लोगोंसे यह अपेक्षा रखी जाती है कि वे शासन प्रबंधमें पूरा पूरा सहयोग दें। अगर सिविल सर्विसके कर्मचारी पुलिस और फौज अपना कर्तव्य भूलते हैं तो वे ववफा करार दिये जायेंगे और स्थितिको सुधारनेके लिए उचित कदम उठाये जायेंगे। इन नौकरियोंमें काम करनेवाले अप्रामाणिक और पक्षपाती लोगोंके खिलाफ अपनी शिकायतें जाहिर करनेका जनताको पूरा अधिकार है। ७

सिविल सर्विसके सदस्योंको नई सरकारके अनुकूल बननेकी शिक्षा अभी लेनी चाहिये। वे किसी कौमका पक्ष नहीं ले सकते। उनमें सम्प्रदायवादका जरासा भी चिह्न दिखाई दे तो उनके साथ सख्तीसे काम लेना चाहिये। उसके ब्रिटिश सदस्योंको जानना चाहिये कि अब उन्हें भारतकी नई सरकारके प्रति वफादार रहना है न कि पुरानी सरकार और इसलिए ग्रेट ब्रिटेनके प्रति। अपने आपको शासक और श्रेष्ठ माननेकी उनकी आदतका स्थान अब जनताकी सच्ची सेवाकी भावनाको लेना चाहिये। ८

८३

सरकारी नौकरोंकी बहाली

मेरी फाइलमें ऐसे कांग्रेसजनोंके कई पत्र पड़े हुए हैं जिन्होंने असहयोग आन्दोलनके दिनोंमें सरकारी संस्थाओंसे असहयोग कर लिया था। इन लोगोंमें वे भी थे जिन्होंने सरकारी नौकरियाँ छोड़ दी थीं। इनमें से कुछ अब अपनी बहालीके लिए आन्दोलन कर रहे हैं। अपने इस आन्दोलनके समर्थनमें वे मेरी उस अपीलका हवाला देते हैं जो मैंने जनसाधारणसे की थी और जिनमें सरकारी नौकर भी शामिल थे। जहाँ तक मुझे पता है कष्ट या नुकसान उठानेवालोंमें से जिन्होंने मुआवजेके लिए कोई आंदोलन नहीं किया वे हैं—सत्याग्रही जिन

पर भारी भारी जुर्माने किये गये, कुटुम्बी या रिश्तेदार जो अपने जीविका कमानेवाले सम्बन्धीसे हाथ धो बैठे, वकील जिन्होंने अपनी वकालत छोड़ दी और मुफलिसीकी हालतमें पहुँच गये, और विद्यार्थी जिन्होंने अपनी पढ़ाई और भविष्यकी तमाम आशायें छोड़ दीं। उनका खयाल यह है कि स्वेच्छापूर्वक किया गया कष्ट-सहन स्वयं ही अपना पुरस्कार है और ऐसा कष्ट-सहन किसी और मुआवजेका दावा नहीं करता।

यदि ये सबके सब कांग्रेसी मंत्रियोंके सामने इस तरहका दावा करने लग जायें तब तो उनका सचमुच यह दुर्भाग्य ही कहा जायेगा और मुआवजोंके इन सारे दावों पर विचार करनेके सिवा व दूसरा कोई काम ही नहीं कर सकेंगे। इन दावोंको पूरा करनेके लिए उन्हें रुपया भी कहाँसे पैदा करना पड़ेगा जो कई करोड़ होना चाहिये। इसके अलावा जिन सरकारी नौकरोंने अपनी नौकरियाँ मजबूरन् या अपनी मरजीसे छोड़ दी थीं उनके लिए यह बताना भी कठिन होगा कि दूसरे पीड़ितोंके उनकी तुलनामें कम तकलीफें उठाई थीं।

मेरी रायमें इन भूतपूर्व सरकारी नौकरोंने एक वर्गके नाते सबसे कम तकलीफ या नुकसान उठाया है। और अगर इतने बरसों तक उन्हें कोई काम नहीं मिला और वे बिलकुल बेकार बैठे रहे हैं तो वे शायद ही रखनेके योग्य नौकर हो सकते हैं। कांग्रेसजनोंके लिए सरकारी नौकरी कोई आर्थिक उन्नतिका द्वार नहीं है। उसे तो केवल सेवाका एक साधन होना चाहिये। इसलिए सिर्फ वे ही कांग्रेसजन सरकारी नौकरियोंमें प्रवेश करें जिनकी बाजार-कीमत उससे ज्यादा ऊँची हो जो वे सरकारसे पा सकते हैं। वे तभी नियुक्त किये जा सकते हैं जब सरकारको उनकी आवश्यकता हो। कांग्रेसका आश्रय जैसी कोई चीज तो होनी ही नहीं चाहिये। १

लोकतंत्र और सेना

एक सैनिक अधिकारी अपने मित्रको लिखते हैं

कितने दुःखकी बात है कि उन तमाम देशोंमें जहां प्रजाका राज्य है राजनीतिज्ञ सेनाके बारेमें बहुत कम ज्ञान रखते हैं और उसमें बहुत कम रस लेते हैं। सेनासे वे बहुत कुछ सीख सकते हैं। उन्हें कमसे कम यह तो सोचना ही चाहिये कि दूसरे सरकारी नौकरोंके बनिस्बत सैनिक क्या अपनी नौकरीसे ज्यादा प्रेम और नमकहलालीकी भावना रखता है, हालांकि सेनामें उसे दूसरी नौकरियोंसे कहीं ज्यादा कष्ट उठाने और मुसीबतें उठानी पड़ती हैं? आपके पास एक शानदार सेना है। और जब आपके सबसे योग्य व्यक्ति काफी संख्यामें इसके अधिकारी बनेंगे तो वह और भी शानदार हो जायगी। अगर आप लोग सही प्रकारके अधिकारी रख सकें तो आपको सेनाके बारेमें किसी तरहकी चिंता करनेकी जरूरत नहीं रहेगी। दुनियामें यह सेना किसीसे कम नहीं होगी। लेकिन अगर गलत प्रकारके अधिकारी रख लिये गये या राजनीतिको सेनामें घुसने दिया गया तो भारी नुकसान उठाना पड़ेगा। अभी अनेक वर्षों तक हिंदुस्तानको काफी मुश्किलोंसे गुजरना है। मेरा विश्वास है कि आपकी सेना ही संकटके समय आपके काम आयगी। खर्च भी कमसे कम बैठेगा। परन्तु शर्त यह है कि सेनाके लिए सही प्रकारके अधिकारी ढूंढ़े जायं और राजनीतिक तथा धार्मिक झगड़ोंको उससे दूर रखा जाय।

अगर यह सच हो कि प्रजातंत्रवाले तमाम देशोंमें राजनीतिमें भाग लेनेवाले लोग सेनामें रस नहीं लेते तो कोई दुःखकी बात नहीं

है। दूसरी बात तो यह है कि वे सेनामें गलत प्रकारका रस लेते हैं। वे समझते हैं कि सेना उनकी रक्षा करती है प्रजातंत्रकी रक्षा करती है धन लाती है, दूसरे देशों पर हमारा अधिकार जमाती है और देशके भीतर दंगा-फसाद होने पर सरकारको अपने सहारे खड़ा रखती है। क्या ही अच्छा हो कि लोकराज्य किसी भी बातके लिए सेनाका सहारा न ले ताकि वह सच्चा लोकराज्य हो सके।

जिस सेनाकी ऊपर वकालत की गई है उसने हिन्दुस्तानके लिए क्या किया है? मुझे डर है कि किसी अर्थमें भी उसने हिन्दुस्तानको लाभ नहीं पहुंचाया है। उसने बेचारे लाखों-करोड़ों देशवासियोंको गुलाम बना रखा है। उसने थोड़ेसे लोगोंको मुहताज बना लिया है। उस सेनाका ब्रिटिश विभाग जितना जल्दी इंग्लैण्ड वापिस भेज दिया जाय और किसी अधिक अच्छे काममें लगा दिया जाय उतना ही हिन्दुस्तानका, इंग्लैण्डका और दुनियाका भला होगा। सेनाके हिन्दुस्तानी विभागका इस्तेमाल भी जितनी जल्दी विनाशके कामसे हटाकर सृजनके काममें लगा दिया जाय उतना ही लोकराज्यके लिए वह अधिक उपयोगी होगा। जो लोकराज्य केवल सेनाके सहारे ही जीवित रह सके वह एक निकम्मी चीज है। सैनिक शक्ति मनके विकासको रोकती है। उसमें मनुष्यकी आत्मा दब जाती है। इस दुर्भाग्य सामान इतने बरसोंसे विदेशी हुकूमतको देशमें कायम रखा है। उसका परिणाम आज स्थिति यह हो गई है कि ब्रिटिश सिपाहीके चले जानेके बावजूद हिन्दुस्तानको शायद एक हाथी या इसी तरहके खतरोंमें से गुजरना पड़े। उसका कड़वा अनुभव ही शायद हमें गलत सेनाके मोहसे छुड़ा सकेगा। सेनामें आदेश या नियमके अनुसार चलना होता है। यह तो समाजके हर अंगमें होना चाहिए। इस गुलामी निर्दे... मनुष्योंको हैवान बनानेके सिवा और कुछ नहीं सिखाता। अगर स्वतंत्र हिन्दुस्तानको भी आजके जितना ही सैनिक खर्च उठाना

पन तो मूसा मरावाले करोड़ों गांवों उसकी रचनात्मक कोई लाभ नहीं पहुंचेगा। १

अगर हम स्वराज्यकी दहरी पर गये हैं तो हमें सनाको अपनी समस्त रचनात्मक कायमें उसका उपयोग करनेम जरा भी हिच किचाना नहीं चाहिये। आज तक उसका उपयोग हमारे खिलाफ अंधाधुंध गोलीबार करनेमें हुआ है। आज सेनावाले हल चलाकर अनाज पैदा कर कुए खोदें पाखाना साफ कर और दूसरे अनेक रच नात्मक काय करके लोगोंकी आंखकी किरकिरी न रहकर सबके प्रिय बनें। २

८५

अनुशासनका गुण

आजाद राष्ट्रमें अनुशासन कैसा होना चाहिये इसकी मिसाल हमें अंग्रेजोंसे लेनी चाहिये। रानी विक्टोरियाके बारेमें यह कहानी प्रसिद्ध है कि जब वह १७ बरसकी थी तब एक रात उसे यह कहनेके लिए जगाया गया कि वह इंग्लैंडकी रानी है। वह जवान लड़की भग वान द्वारा सौंपी गई इतनी भारी जिम्मेदारीसे स्वाभाविक रूपमें घबरा गई और जरूरतसे ज्यादा डर गई। बड़े प्रधानमंत्रीने रानीके सामने घुटनोंके बल झुककर उसे ढाढ़स बधाया। रानी विक्टोरियाने सिर्फ इतना ही कहा कि मैं ठीक हो जाऊंगी। इंग्लैंडके अनुशासन पालने वाले लोगोंने ही रानीको राज्य करनेमें मदद की। आज मैं चाहता हूं कि आप यह समझ लें कि आजादी आपके दरवाजे पर खड़ी है। वाइसराय मंत्रि मंडलके सिर्फ नामके अध्यक्ष हैं। आप देशके राजकाजमें उनकी मददकी आशा न करके ही उन्हें मदद पहुचायेंगे। आपके बताज के बादशाह पंडित जवाहरलाल नेहरू हैं। वे आपकी सेवा राजा बनकर नहीं बल्कि प्रथम पंक्तिके सेवक बनकर ही कर रहे हैं। वे हिंदुस्तानकी

सेवाके द्वारा सारी दुनियाकी सेवा करना चाहते हैं। जवाहरलाल अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति हैं और वे हिन्दुस्तानमें रहनेवाले सारे विदेशी राजदूतोंसे मित्रताका सम्बन्ध रखते हैं। लेकिन अगर लोग अनुशासन तोड़कर जवाहरलालके कामको बिगाड़ दें तो वे अकेले राज नहीं चला सकते। पहलेके स्वच्छाचारी शासकोंकी तरह वे तलवारके बल पर राज नहीं कर सकते। ऐसा राज्य न तो पंचायत राज होगा और न जवाहर राज। हर हिन्दुस्तानीका यह कर्तव्य है कि वह मंत्रियोंके कामको आसान बनाये और उसमें किसी तरहका हस्तक्षेप न करे।

आपको याद होगा कि पंडित नेहरू किस प्रकार एक साल पहले काश्मीर गये थे जब कि उनका दिल्लीमें रहना अत्यन्त आवश्यक था और किस प्रकार उस समयके कांग्रेस प्रेसिडेंट मौलाना साहबके आदेशसे वे दिल्ली लौट आये थे। आज पण्डितजी फिर काश्मीर जानेकी बात कर रहे हैं। उनका दिल दुःखी है क्योंकि काश्मीरियोंके नेता शेख अब्दुल्ला साहब अभी तक जेलमें बन्द हैं। लेकिन मुझे लगता है कि पंडितजीका दिल्लीमें रहना ज्यादा जरूरी है। इसलिए उनके बदले मैंने काश्मीर जानेकी इच्छा प्रकट की है। लेकिन जवाहरलाल मुझे वहां जानेकी आज्ञा दें इसके पहले उन्हें कुछ बातोंका विचार करना होगा। यदि मैं काश्मीर गया तो वहां भी उसी तरह बिहार और बंगालकी सेवा करूंगा जैसे मैं इन प्रान्तोंमें शरीरसे मौजूद रह कर करता। १

८६

मंत्री और प्रदर्शन

अब हमें दूसरा भिन्न रीतिसे सामना करना पड़ेगा और उसके लिए कार्यकर्ताओंका एक अच्छा दल खड़ा करना होगा। इन कार्यकर्ताओंका यह कर्तव्य होगा कि वे गांवोंमें घुल मिलकर उनके सच्चे दुःख और कष्टोंको जानें और उन्हें यह पाठ सिखायें कि अब यह देश हमारा है और इसका शासन चलानेवाले मंत्री हमारे चुने हुए हैं। अब यदि उनके खिलाफ प्रदर्शन किया जाय तो उनसे मंत्रियोंकी अपेक्षा लोगोंका ही अपमान अधिक होता है। हां यदि कोई मंत्री ऐसा काम करता हो जिससे आम जनताके साथ अन्याय हो तो जनता उसे कान पकड़ कर मंत्रीपदसे अलग कर सकती है — उसके स्थान पर दूसरेको बैठा सकती है। अब यह शक्ति भी जनतामें विकसित होनी चाहिये। मंत्री अपने पदों पर जनताके स्वामियोंके नाते नहीं बैठे हैं परन्तु उनके सेवकोंके नाते बैठे हैं। यही बात मैं समाजवादियोंसे भी कह रहा हूं। परन्तु जैसे लोग भी आज मेरी बात समझते नहीं हैं यद्यपि मैं आशा तो रखता हूं कि उन्हें समझा सकूंगा। कांग्रेसने अंग्रेजोंके खिलाफ आजादीकी लड़ाई लड़ते समय जो काम किया उसे भूल कर अब कांग्रेसको राष्ट्रकी जनताको राजनीतिक शिक्षण देनेकी मुहिम शुरू करनी चाहिये। १

नमक-कर

आज मुझे एक दूसरी बात कहनी है। नमकका कर रद करानेके लिए हमने दांडीकूच की थी। बेशक वह कर तो रद कर दिया गया। परन्तु नमक आजकल महंगा हो गया है। अगर यह सच हो तो हमारे व्यापारियोंके लिए यह लज्जाकी बात है। गरीब लोग जिस नमक पर निर्वाह करते हैं उस नमकसे भी व्यापारी नफा कमानेकी इच्छा रखें यह सचमुच घृणास्पद और निन्दनीय है। शक्कर न मिले तो आदमी काम चला सकता है परन्तु नमकके बिना गरीबोंके गलेके नीचे रोटी नहीं उतर सकती। सरकारसे भी मेरी विनती है कि इस बारेमें वह जाग्रत रहे। सरकारको चाहिये कि वह अपनी देखरेखमें नमकके आगरों और कारखानोंका काम चलाये जिससे गरीब जनताको मूल कीमत पर नमक मिल सके। नमक-कर रद होनेका लाभ देशकी जनताको मिलना ही चाहिये। अगर लोग चाहें तो वे गांवोंमें और शहरोंमें घर घर नमक बना सकते हैं। ऐसा करनेसे कोई उन्हें रोक नहीं सकता। अगर हम अपना आलस्य छोड़ दें तो ऐसे अनेक गृह-उद्योगोंका विकास हो सकता है और हमारी आर्थिक और नैतिक स्थिति सुधर सकती है। अगर लोग घर नमक बनायें और उसके वितरणकी व्यवस्था करें तथा उसमें नफा कमानेका लोभ छोड़ दें तो नाममात्रकी कीमत पर ही नमक मिल सकता है। परन्तु हमारे देशमें आज सर्वत्र स्वार्थ और भ्रष्टाचारका बोलबाला है। ऐसी परिस्थितिमें रामराज्यकी कल्पना कैसे सिद्ध हो सकता है? लेकिन एक बात निश्चित है कि यदि पाकिस्तान या भारतकी सरकार अपनी सत्ताके गर्वमें आकर नमक पर कर लगायेगी तो वह एक लज्जाजनक और दुःखद कृत्य होगा। मेरी आशा तो यह है कि ऐसा नहीं होगा। आज हम नमक हराम बन गये हैं। १

८८

अपराध और जेल

अहिंसाके मार्ग पर चलनेवाले स्वतंत्र भारतमें अपराध तो होंगे परन्तु अपराधी नहीं होंगे। उन्हें सजा नहीं दी जायगी। दूसरे किसी रोगकी तरह अपराध भी एक रोग है और वह प्रचलित सामाजिक व्यवस्थाकी उपज है। इसलिए सारे अपराध — जिनमें हत्या भी शामिल होगी — रोग माने जायेंगे और रोगकी तरह ही उनका इलाज होगा। यह अलग प्रश्न है कि ऐसा भारत कभी अस्तित्वमें आयेगा या नहीं। १

आजाद हिन्दुस्तानमें कैदियोंके जेल कैसे होने चाहिये? बहुत समयसे मेरी यह राय रही है कि सारे अपराधियोंके साथ बीमारों जैसा बरताव किया जाय और जेल उनके अस्पताल हों, जहां इस वर्गके बीमार इलाजके लिए भरती किये जायं। कोई आदमी अपराध इसलिए नहीं करता कि ऐसा करनेमें उसे मजा आता है। अपराध उसके रोगी दिमागकी निशानी है। जेलमें ऐसी किसी खास बीमारीके कारणोंका पता लगाकर उन्हें दूर करना चाहिये। जब अपराधियोंके जेल उनके अस्पताल बन जायेंगे तब उनके लिए आलीशान इमारतोंकी जरूरत नहीं होगी। कोई भी देश ऐसा नहीं कर सकता। तब हिन्दुस्तान जैसा गरीब देश तो अपराधियोंके लिए बड़ी बड़ी इमारतें बना ही कैसे सकता है? लेकिन जेलके कर्मचारियोंकी दृष्टि अस्पतालके डाक्टरों और नर्सों जैसी होनी चाहिये। कैदियोंको यह महसूस करना चाहिये कि जेलके अफसर उनके मित्र हैं। अफसर वहां इसलिए हैं कि वे अपराधियोंको फिरसे मानसिक तन्दुरुस्ती प्राप्त करनेमें मदद करें। उनका काम अपराधियोंको किसी तरह सतानेका नहीं है। लोकप्रिय सरकारोंको इसके लिए जरूरी आदेश निकालने होंगे। लेकिन इस बीच जेलके कर्मचारी अपनी व्यवस्था को मानवतापूर्ण बनानेके लिए बहुत-कुछ कर सकते हैं। २

स्रोत

[इसमें य इ यग इंडिया के लिए ह हरिजन के लिए ह से हरिजनसेवक' के लिए हिं न हिंदी नवजीवन के लिए तथा नटेसन स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स आफ महात्मा गांधी (चौथा संस्करण) नटेसन, मद्रास के लिए आया है।]

विभाग – १

प्रकरण – १
१ य इ १०–९–३१ प २२५
२ ह २५–५–३९ प ६५
३ ह १८–५–४, पृ १२९

प्रकरण – २
१ हिं न २९–१–२५ प १९८
२ य इ २९–१२–२० पृ ६
३ हिंद स्वराज्य (१९५९) प २३
४ नटसन पृ ४०६–०८

विभाग – २

प्रकरण – ३
१ ह स १–५–३७ प ८९ ९०

प्रकरण – ४
१ ह स ८–५– ७ पृ ९१ ९२

प्रकरण – ५
१ ह स १०–२–४६ पृ ८

प्रकरण – ६
१ ह से २२–५– ७ पृ ११० ११

विभाग – ३

प्रकरण – ७
१ ह स १७–८–४० प २३४

प्रकरण – ८
१ ह स १६–३–३८ प १७२ ७३

प्रकरण – ९
१ ह स /– –८२ पृ ७२

प्रकरण – १०
१ ह स २१–३–४६ पृ २२७

विभाग – ४

प्रकरण – ११
१ ह से १५–१–४० पृ ३८६
(आ)

प्रकरण – १२
१ ह स २–६–४६ प १६२ ६३

विभाग – ५

प्रकरण – १३
१ ह से २८–७–४६ प २३७ ३८

प्रकरण – १४
१ ह स १६–६–४६ प १८४

प्रकरण – १५
१ दिल्ली डायरी (१९६०) प २२४ २५
२ दिल्ली डायरी (१९६०) प ३३० ३१

प्रकरण – १६
१ ह स २–४–३८ प ७६
२ ह से १४–८–४७ प २०७

विभाग – ६

प्रकरण – १७
१ ह स २५–१–४२ प १६
२ ह २–१– ७ पृ ७५
३ रचनात्मक कार्यक्रम (१९५८), प १३ १४

प्रकरण – १८
१ ह ७–८–४६ प ७६
२ ह स २८–८–४६ प १०९

ह स ७-४-४६ पु ७०

प्रकरण — १९
१ य ए ८-१०-२१ पु २९७
२ ह स २-३-४० पु ४८
३ ह स २८-१-३९ प ४०४ ०५

प्रकरण — २०
१ य इ ७-७-२७ पु २१९
२ य इ ८-१२-२७ पु ४१५
३ सत्याग्रह इन साउथ आफ्रिका (१९६१) प ८८
४ नातास हाइस (१९५८) पु ५१ ५२

विभाग — ७

प्रकरण — २१
१ ह स १७-७-३७ पु १७४ ७५

प्रकरण — २२
१ ह स २४-७-३७ प १८२

प्रकरण — २३
१ ह स ७-८-३७ प १९८

प्रकरण — २४
१ ह से २१-८-३७ प २१४

प्रकरण — २५
१ ह से ४-९-३७ प २३ ३१

प्रकरण — २६
१ ह से ३१-७-३७ पु १९ ९३

प्रकरण — २७
१ ह से १५-११-३७ प ३१०

प्रकरण — २८
१ हसे २८-८-३७ पु २२२ २३
२ ह से २४-१२-३८ प ३६०
ह स १-४-३९ प ४९
ह से १५-७-३९ प १७५ ७६

प्रकरण — २९
१ बिहार पछी दिल्ही (गुजराती) (१९६१) पु ४४०
२ ह १०-१२-३८ पु ३६८ ६९
३ ह स २१-१०-३९ प २८४ ८५
४ ह स २८-४-४६ प १०४
५ ह १-९-४६ पु २८८
६ ह स २-१-४६ प ३६२
७ ह स २७-१०-४६ पु ३६८

प्रकरण — ३०
१ ह स २५-८-४६ पु २८१ ८२

प्रकरण — ३१
१ ह स २५-८-४६ पु २८६ ८८

प्रकरण — ३२
१ य इ १-९-२१ प २७७
२ ह स ९-७-३८ पु १९१ ९३
३ ह स ३-७-३८ पु १८९

प्रकरण — ३३
१ ह ११-९-३७ पु २५

प्रकरण — ३४
१ ह स १५-१०-३८ प २७७ ७८

प्रकरण — ३५
१ ह ४-९-३७ पु २३३ ३४
२ ह से २५-८-४६ प २७४

प्रकरण — ३६
१ ह से २५-९-४७ पु २५५

प्रकरण — ३७
१ ह स २३-६-४६ प १९८
२ ह से १५-९-४६ पु ३११
३ ह स ३-११-४६ पु ३७६ ७७

प्रकरण — ३८
१ ह स २८-१२-४७ पु ४१६

प्रकरण – ३९

१ ह से, १७–१२–३८ प ,५२
५३

विभाग – ८

प्रकरण – ४०

१ ह स ३–९–३८ प २२८ २९

प्रकरण – ४१

१ ह स १४–४–४६ प ८९

प्रकरण – ४२

१ ह स २१–४–४६ पृ ९६

प्रकरण – ४३

१ ह स ०–६–४६ प १०६

प्रकरण – ४४

१ ह से ९–११–४७, पृ ३०७ ३८

विभाग – ९

प्रकरण – ४५

१ बन्वसेवा चमत्कार (१९५६)
पृ ६२

प्रकरण – ४६

१ बिहारकी कौमी आगमें (१९५९)
पृ २१० १२

प्रकरण – ४७

१ ह स २५–९–३७ पृ २५१

प्रकरण – ४८

१ ह स १६–१०–३७ पृ २७७

प्रकरण – ४९

१ ह से ९–६–४६ पृ १७० ७१

प्रकरण – ५०

१ ह स १९–१०–४७ पृ ३१७–
१८

प्रकरण – ५१

१ दिल्ली डायरी (१९६०) पृ
३६३ ६४

प्रकरण – ५२

१ टुवर्ड्स न्यू होराइजन्स (१९५९)
पृ १०१ ०२

प्रकरण – ५३

१ ह स ८–८–४६ पृ २४८

प्रकरण – ५४

१ ह से २०–९–४६ प ३१०

प्रकरण – ५५

१ ह से २९–०–४६ प ३२३

प्रकरण – ५६

१ गवला चगर (१०६१) पृ ६७

प्रकरण – ५७

१ ह स २–११–४७ पृ ३११

प्रकरण – ५८

१ ह से १६–११–४७ पृ ३४०

विभाग – १०

प्रकरण – ५९

१ ह स २५–६–४८ पृ १८८

प्रकरण – ६०

१ ह स २१–४–४६ पृ ,७

प्रकरण – ६१

१ ह स १०–९–३८ पृ २५६

प्रकरण – ६२

१ ह से ८–९–४६ पृ ४०१ ०२

प्रकरण – ६३

१ ह स २१–०–४७ पृ २७३

प्रकरण – ६४

१ ह स २२–७–४९ पृ १८३

प्रकरण – ६५

१ ह स २६–१०–४७ प ३२२
२३

प्रकरण – ६६

१ ह से ४–१–४८ पृ ४५२
२ ह से १–६–४७ पृ

अन्य लेखकोंकी पठनीय पुस्तकें

अनाजके बारेमें हम क्या करें?	०६०
अभिनव रामायण	४००
आधुनिक जगतमें गांधीजीकी कार्य-पद्धतियां	१००
आशाका एकमात्र मार्ग	२००
एकला चलो रे	२००
उस पारके पड़ोसी	५०
ऐसे थे बापू	१७५
गांधीजी : एक झलक	१५०
गांधीजी और गुरुदेव	०८०
गांधी और साम्यवाद	१२५
गांधीजीकी साधना	३००
गांधी विचार-दोहन	२५०
ग्राम संस्कृतिका अगला चरण	१८०
जड़मूलसे क्रान्ति	१५०
जीवन-[illegible]	३००
जीवनशोधन	४००
तालीमकी बुनियादें	२००
नेहरूजी — अपनी ही भाषामें	१५०
बापूकी विराट वत्सलता	१०
महात्मा गांधी : पूर्णाहुति — प्रथम खंड	८००
सर्वोदय तत्त्वज्ञान	६००
हमारी बा	२००

नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद-१४